पंचायत संस्थाओं में निर्वाचित महिलाओं की राजनीतिक
सहभागिता- एक आलोचनात्मक विश्लेषण
(हमीरपुर जनपद के विशेष संदर्भ में)

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी

समाज विज्ञान संकाय
के अन्तर्गत
राजनीति विज्ञान विषय में
डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

BUNDELKHAND UNIVERSITY
Central Library
Acc. No. T-3666
Date 28-09-10
JHANSI
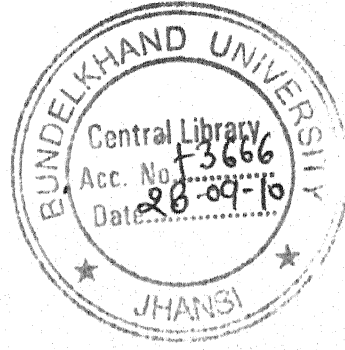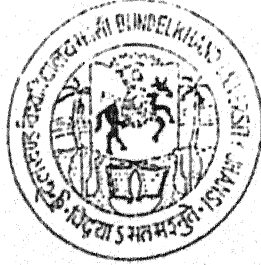
शोध निर्देशक
08/05/08
डॉ0 देवेन्द्र नारायण सिंह
प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान

गवेषक
धनराज सिंह

शोध-केन्द्र
राजनीति विज्ञान विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हमीरपुर (उ0प्र0)
2008

<u>घोषणा</u>

मै घोषणा करता हूं कि बुन्देलखण्ड झांसी के अन्तर्गत राजनीति विज्ञान विषय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रवन्ध **"पंचायत संस्थाओं में निर्वाचित महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता - एक आलोचनात्मक विश्लेषण (हमीरपुर जनपद के विशेष संदर्भ में)"** मेरा मौलिक कार्य है। मेरे अभिज्ञान से प्रस्तुत शोध का अल्पांश अथवा पूर्णांश किसी भी विश्वविद्यालय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी अथवा अन्य किसी भी उपाधि हेतु प्रस्तुत नहीं किया गया है।

दिनांक :- 8/5/08

(धनराज सिंह)

अनुक्रमणिका

मानचित्र एवं तालिकायें

डॉ० देवेन्द्र नारायण सिंह
राजनीति विज्ञान विभाग

राजकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय हमीरपुर
(उ.प्र.)

पत्रांक :

दिनांक : 08.05.08

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्री धनराज सिंह ने राजनीतिक विज्ञान विषय में पी-एच.डी. उपाधि हेतु मेरे निर्देशन में बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय के पत्रांक बु.वि./ प्रशा./ शोध/ 2005/ 6543-45 दिनांक 07.05.05 द्वारा पंजीकरण कराया था। इनके शोध का शीर्षक था **"पंचायत संस्थाओं में निर्वाचित महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता - एक आलोचनात्मक विश्लेषण (हमीरपुर जनपद के विशेष संदर्भ में)"**

श्री धनराज सिंह मेरे निर्देशन में आर्डिनेन्स 6 द्वारा वांछित अवधि तक शोध केन्द्र में उपस्थित रहे। इन्होंने शोध के सभी चरणों को अत्यन्त सन्तोषजनक रूप से परिश्रमपूर्वक सम्पन्न किया है।

मै इस शोध प्रबन्ध को राजनीति विज्ञान विषय में पी.एच.डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत करने की संस्तुति करता हूं।

(डॉ0 देवेन्द्र नारायण सिंह)

आभार

शोध विद्या जैसे दुरूह लक्ष्य को अर्जित कर पाना मुझ जैसे अल्पज्ञ एवं अनुभवहीन शोधार्थी के लिये कठिन ही नही बल्कि असंभव कार्य था किन्तु मेरे लिये प्रणाम्य एवं श्रद्धेय शोध विद्या में पारंगत डॉ0 देवेन्द्र नारायण सिंह जी, प्राध्यापक, राजनीतिक विज्ञान , राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हमीरपुर की प्रज्ञा पीठ में मेरे अन्वेषणात्मक अध्यवसाय की साधना की पूर्णाहूति हुई। आदरणीय डॉ0 सिंह के प्रेरणाप्रद निर्देशन, सद्प्रयासों का मै चिर ऋणी रहूंगा जिनकी असीम अनुकम्पा से मै यह शोध रूपी दुरूह लक्ष्य प्राप्त कर सका।

राजनीति विज्ञान जैसे महत्वपूर्ण विषय में दक्षता रखने वाले विभागाध्यक्ष व सम्प्रति प्राचार्य डॉ0 प्रमोद कुमार व उपाचार्य डॉ0 भवानीदीन, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय हमीरपुर ने किंकर्तव्यविमूढता की स्थिति में लक्ष्य पथ को पार करने के लिये जैसे ज्योतिबिन्दु के दर्शन कराये उसके लिये आभार ज्ञापित करना किंचित सागर की प्यास बुझाने के लिये जल समर्पित करने जैसा होगा। उनके अकथ सहयोग ने शोध के इस महायज्ञ को पूर्णाहूति प्रदान की। वे मेरे लिये सदैव श्रद्धेय रहेंगे। शोध से जुड़े सामाजिक पक्षों के विश्लेषण के संदर्भ में डॉ0 स्वामीप्रसाद, विभागाध्यक्ष समाजशास्त्र से जो सहयोग मिला उसके लिये उनके प्रति आजीवन आभारी रहूंगा।

राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय हमीरपुर के पूर्व प्राचार्य (वर्तमान में संयुक्त शिक्षा निदेशक, उच्च शिक्षा) डॉ0 रमेशचन्द्र जी के प्रति विनयावत हूं जिन्होंने भाषा सम्बन्धी मेरी कठिनाइयों का समयोचित निराकरण करते हुए मेरे शोध यज्ञ को पूर्ण करने में मेरा सफल मार्ग दर्शन किया।

वात्सल्यमयी सहयोग के लिये मै डॉ0 बलराम, उपाचार्य भूगोल, डॉ0 रामनाथ विभागाध्यक्ष अर्थशास्त्र, डॉ0 जे.पी.विश्वकर्मा उपाचार्य भूगोल, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय

हमीरपुर व डॉ0 एस.आर.रजक, प्राचार्य, राजकीय महिला महाविद्यालय झांसी के प्रति श्रद्धावनत हूं जिन्होंने निराशा की घोप धटा के मध्य आशा के ज्योतिर्पुन्ज के दर्शन करायें।

शोध पूर्ण होने की इस घड़ी में अपने पूर्व आचार्य श्री वाई.एस.कुलश्रेष्ठ (पूर्व प्राचार्य) को कैसे विस्मृत कर सकता हूं जिनकी प्रेरणा मुझे शिक्षा के कठिन सोपानों को पार करते हुए इस लक्ष्य तक पहुंच बनाने में मेरा पथ प्रदर्शन करती रही। अपने गुरू कुलश्रेष्ठ जी के वात्सल्यमयी प्रेरक सहयोग के लिये आभार ज्ञापित करते समय स्वयं को अल्पज्ञ व शब्दों से हीन अनुभव कर रहा हूं।

मदन प्रताप सिंह, मेरे सहयोगी ही नहीं मेरे अभिन्न मित्र हैं। श्री सिंह की मेरे इस लक्ष्य प्राप्ति में महती भूमिका है जिसके लिये मै उनका आभार ज्ञापित करता हूं।

आधार सामग्री की प्राप्ति जिन स्रोतों से हुई उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना मेरा परम कर्तव्य बनता है। इस संदर्भ में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के केन्द्रीय ग्रन्थालय के समस्त स्टाफ, जिला राजकीय पुस्तकालय, हमीरपुर के समस्त स्टाफ व राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय हमीरपुर के समस्त स्टाफ के प्रति आभार ज्ञापित करता हूं।

महत्वपूर्ण सूचनायें और आंकड़े उपलब्ध कराने में जिला अर्थ एवं संख्याधिकारी श्री जितेन्द्र सिंह अमरनानी व उनके कार्यालय ने तथा जिला पंचायत राज अधिकारी श्री डी.पी. सरोज व उनके कार्यालय ने जो सहयोग किया उसके अभाव में यह कार्य पूर्ण किया ही नहीं जा सकता था। अतः उक्त दोनों अधिकारियों व उनके कार्यालय के कर्मचारियों के प्रति ह्रदय से आभारी हूं।

शोध प्रवन्ध के टंकण, मुद्रण एवं रूप सज्जा एवं आवरण सज्जा के लिये श्री जनक सिंह, आर.बी.कम्प्यूटर्स हमीरपुर, श्री जगदीश नामदेव, सेवा फोटो कापीयर्स हमीरपुर जिनके योगदान से यह अभीष्ट पूर्ण हुआ । बधाई व साधुवाद के पात्र हैं। इसके अतिरिक्त मै उन सभी जाने अनजाने सुधीजनों का ह्रदय से आभारी हूं जिन्होंने मेरे इस शोध परिपथ को सहज बनाया।

दिनांक :- 8/5/08

(धनराज सिंह)
गवेषक

अध्याय–1

प्रस्तावना

- ➔ हमीरपुर एक परिचय
- ➔ शोध परिकल्पना
- ➔ शोध पद्धति

प्रस्तावना

यह सत्य है कि भारत गाँवों का देश है जिसका तात्पर्य यह है कि भारत की अधिसंख्य जनता गाँवों में रहती है। इसका यह भी निहितार्थ है कि भारत में गाँवों का अलग अस्तित्व है, इसमें निरन्तरता है तथा गाँवों की अपनी अलग विशेषतायें हैं। इन्हीं विशेषताओं में एक विशेषता है भारत में ग्रामीण प्रशासन कि अविरल व्यवस्था पंचायत प्रणाली। शताब्दियों से हमारा समाज पंचायती अनुभवों से गुजरा है। एक तरह से यह देश की सहज जीवन शैली है।[1] पंचायत की जीवन शैली को संवाद, सहमति और सहयोग जैसे मानकों से पहचानने की कोशिश करें, तो लगेगा कि हमारे ग्रामीण समाज में ये जीवन मूल्य गहराई तक उतरे हुए हैं।

पंचायत शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत भाषा के शब्द "पंचायत" से हुई है जिसका अर्थ होता है पाँच व्यक्तियों का समूह। गांधी जी ने भी पंचायत का शाब्दिक अर्थ गाँव के लोगों द्वारा चुने हुए पाँच व्यक्तियों की सभा से लिया है। वस्तुतः पंचायती राज व्यवस्था को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसके अन्तर्गत लोकतंत्र को सबसे निचले स्तर पर पहुँचाने का प्रयत्न किया जाता है। हमारे देश में शासन की सबसे छोटी इकाई ग्राम है और ग्राम से क्षेत्र, तहसील, जिला, मण्डल प्रान्त और देश का गठन होता है। इसी कारण पंचायतों का गठन लोकतांत्रिक व्यवस्था के आधार पर करने का प्रावधान किया गया है क्योंकि इस व्यवस्था के अंतर्गत लगभग प्रत्येक व्यक्ति निर्वाचन प्रक्रिया में भाग लेना आवश्यक समझता है। वस्तुतः पंचायतों में प्रत्येक व्यक्ति इससे स्वयं को प्रभावित व जुड़ा हुआ पाता है इसलिये वह इसकी प्रत्येक कार्यविधि में संलिप्त होने का प्रयास करता है। इसके विपरीत राष्ट्रीय या प्रान्तीय मुद्दे उसे इतना अधिक आकर्षित नहीं कर पाते और इन स्तरों पर उसकी राजनीतिक सहभागिता का स्तर नीचे ही रहता है। जबकि पंचायतों के माध्यम से जनता की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित हो पाती है और वह स्वतः लोकतांत्रिक प्रक्रिया में सहभागी हो जाता है।

---

[1] अजय कुमार "पंचायत प्रणाली में गाँवों की आत्म निर्भरता" योजना, अप्रैल, 2000 पृ0सं0 40

इतना ही नहीं पंचायतों के गठन का एक अन्य सूत्र है ''स्थानीय समस्यायें, स्थानीय संसाधन, स्थानीय लोग और स्थानीय समाधान'' । यह एक ध्रुव सत्य है कि किसी क्षेत्र विशेष की समस्याओं से जितना अधिक साक्षात्कार स्थानीय स्तर के लोगों का होता है उतना शीर्ष प्रशासन से कदापि नहीं । अपनी क्षमता व अपने संसाधनों का भी उन्हें ही सम्यक ज्ञान होता है। ऐसे में यदि उन्हें अपने स्तर पर ''निर्णय शक्ति'' अर्थात शासन का अधिकार दे दिया जाये तो संभवतः वे अपनी समस्याओं का अधिक अच्छा और स्थायी समाधान निकाल सकने में सक्षम होंगे। इसके अतिरिक्त ''स्थानीय शासन'' का अधिकार मिलने से लोग अपनी मूलभूत आवश्यकताओं और मौलिक अधिकारों के वाहक बन सकेगें।

यही कारण है कि नये स्वतंत्र भारत के शासन की रूपरेखा का निर्धारण कर रहे संविधान सभा के नीति नियामकों ने प्राचीन भारत के ग्रामीण प्रशासन की धुरी ग्राम पंचायतों को पुनर्जीवित करने का प्रयत्न किया। यद्यपि डा0 अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत प्रारूप संविधान में पंचायतों के विषय में एक भी शब्द नहीं कहा गया है और न ही प्रारूप समिति में किसी भी स्तर पर इस विषय पर कोई बहस की गई[1] फिर भी राज्य के नीति निर्देशक तत्वों के अनुच्छेद 40 में ''पंचायत'' को स्थान मिला जिसमें कहा गया कि ''राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिये कदम उठायेगा और उन्हें ऐसी शक्तियां और अधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने के योग्य बनाने के लिये आवश्यक हो।'' इसी के साथ सातवीं अनुसूची की द्वितीय सूची अर्थात् राज्य सूची की प्रविष्टि 5 में ग्राम पंचायतों को शामिल किया गया। इस प्रकार पंचायतों को संवैधानिक महत्व तो मिल गया किन्तु संवैधानिक दर्जा नहीं प्रदान किया गया।[2]

---

[1] एन.राजगोपाल राव ''पंचायती राज'' ए स्टडी आफ रूरल लोकल गवर्नमेन्ट इन इण्डिया, नई दिल्ली (1992) पृ0 34

[2] डा0 ए.पी. अवस्थी ''भारतीय राज व्यवस्था'' आगरा पृ0 190

स्वतंत्रता के पश्चात पंचायतों को गठित करने व उन्हें कारगर बनाने के लिये बहुतेरे उपाय किये गये।[1] विभिन्न राज्यों में विभिन्न सरकारें बनी। उन्होंने पंचायतें स्थापित करने एवं उन्हें सशक्त बनाने के प्रयास किये। पंचायतें गठित भी हुई किन्तु वास्तव में जमीनी तौर पर कुछ भी नहीं हुआ। वे स्वायत्त शासन की संस्थाओं का सही प्रतिरूप नहीं बन सकीं। पंचायतों पर राज्य सरकारों का नियंत्रण बना रहा और पंचायतें अपने अस्तित्व तथा शक्तियों के लिये राज्य सरकारों पर निर्भर रहीं इसलिये उन्हें जो भी कार्य सौंपे गये उन्हें वे पूर्ण नहीं कर सकीं और कुल मिलाकर सत्ता के विकेन्द्रीकरण की बात कागजों तक सीमित होकर रह गई।

किन्तु इस दशा में भारत सरकार द्वारा 22 दिसम्बर 1992 को ऐतिहासिक 73वाँ संविधान संशोधन विधेयक पारित करके[2] महत्वपूर्ण पहल की गई और पंचायतों को संवैधानिक दर्जा तथा जनता के हाथों में शासन की भागीदारी सौपने का निर्णय लिया गया । इस संशोधन विधेयक में ही राज्य सरकारों से यह अपेक्षा की गई कि वे इस दिशा में उचित कदम उठायेंगे। कुछ राज्यों ने इस दिशा में पहल की और कुछ राज्यों द्वारा संविधिक संशोधन किये गये। उ0प्र0 सरकार ने भी 1994 में उत्तर प्रदेश पंचायत राज अधिनियम 1947 में इसी संदर्भ में व्यापक संशोधन किया और पंचायत व्यवस्था को नया रूप देने का प्रयास किया गया और 1995 में इस नयी व्यवस्था के अन्तर्गत हुए पहले चुनावों के बाद से नयी पंचायत व्यवस्था लागू कर दी गई ।

नई पंचायत व्यवस्था की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है, इसे दबंग , प्रभावशाली वर्चस्व से निकाल कर हर जन तक पहुंचाना व इस समूची प्रणाली में जन-जन की भागीदारी को सुनिश्चित करना । इस उद्देश्य से आबादी के अनुपात में अन्य पिछड़े वर्ग के लोगों के लिये 27 प्रतिशत, अनुसूचित जाति के लिये 21 प्रतिशत, अनुसूचित जनजाति के लिये 02 प्रतिशत व देश की लगभग आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करने वाली महिलाओं के लिए एक तिहाई स्थानों पर आरक्षण की व्यवस्था की गई। स्पष्ट है कि विविध पंचायत संस्थानों पर अब किसी व्यक्ति अथवा

---

[1] स्वतंत्रता के पश्चात पंचायत संरचना के पुर्नगठन एवं सुधार हेतु जो भी उपाय किये गये उनका विस्तृत उल्लेख प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के दूसरे अध्याय ''भारत में ग्रामीण प्रशासन'' के अन्तर्गत किया गया है।

[2] यह संशोधन अधिनियम 24.04.93 से प्रभावी हुआ।

वर्ग के एकाधिकार की संभावना नहीं रह गई । ऐसे में जब नये पंचायत प्रावधानों के अन्तर्गत पंचायत संस्थायें अपना दो कार्यकाल पूरा कर चुकी है व तीसरे कार्यकाल के लिये चुनाव हो चुके हैं नई व्यवस्थाओं के मूल्यांकन की महती आवश्यकता है। विशेष रूप से सामाजिक परिवर्तन, राजनीतिक विकेन्द्रीकरण व राजनीतिक सहभागिता के विस्तार के उद्देश्य से समाज के कमजोर और पिछडे वर्ग को विशेष रूप से महिलाओं को जो दायित्व सौंपा गया, उसके निर्वहन में वे कहाँ तक सफल रहे हैं, व उनके कार्य निर्वाह में क्या समस्यायें और कठिनाइयां आ रही हैं, प्रस्तुत शोध इसी उद्देश्य से पंचायत में महिलाओं की सहभागिता के परीक्षण का प्रयास है। इस सम्बन्ध में उत्तर प्रदेश के बुन्देलखण्ड क्षेत्र के हमीरपुर जनपद के महिला ग्राम प्रधानों को अध्ययन के विषय के रूप में चुना गया है।

अध्ययन हेतु हमीरपुर के चयन का कारण इसका दूरस्थ, रेलपथ से अलग और लगभग हर क्षेत्र में पिछड़ा हुआ होना है। विकास की गति धीमी है। आधुनिकीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई है अथवा नहीं इसका भी सहज अनुमान लगा पाना कठिन है। ग्रामीण परिवेश में सामाजिक परिवर्तन शून्य से आगे तो बढ़ा है किन्तु उत्तर प्रदेश या भारत के अन्य क्षेत्रों की भांति गतिमान नहीं हो पाया है। आर्थिक संसाधन हैं किन्तु उनका समुचित दोहन, संयोजन और वितरण नहीं है जिस कारण पिछड़ेपन की स्थिति बनी हुई है।

ऐसे में ग्राम पंचायतों में महिलाओं का ग्राम प्रधान के रूप में नेतृत्व इस क्षेत्र के समग्र विकास में क्या और किसी प्रकार का योगदान कर सकता है, महिलाओं की राजनीति में भागीदारी की वृद्धि व सक्रियता से समाज में किस प्रकार का परिवर्तन आ सकता है, इसका अध्ययन समाज और देश को एक नई दिशा दे सकता है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध इसी उद्देश्य से प्रेरित एक प्रयास है। इस सम्बन्ध में परिकल्पना आदि अन्य तथ्यों की ओर बढ़ेन से पूर्व हमीरपुर का परिचय प्राप्त कर लेना अनिवार्य होगा।

हमीरपुर : एक परिचय

हमीरपुर वीरों के शौर्य से सुगन्धित बुन्देलखण्ड की धरा पर अवस्थित चित्रकूटधाम मण्डल का एक जनपद है। देश के उत्तर और मध्य भाग को उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ और महानगर कानपुर से सुगमतापूर्वक मिलाने के कारण हमीरपुर को बुन्देलखण्ड का प्रवेश द्वार भी कहा जाता है। सुप्रसिद्ध अंग्रेज विद्वान डी.एल. ड्रेकब्रांकमैन के अनुसार हमीरपुर की स्थापना ग्यारहवीं शताब्दी में कलचुरी राजपूत शासक हमीरदेव द्वारा की गई थी।[1] किन्तु इसके विपरीत वासुदेव चौरसिया जैसे विद्वान यह स्वीकार करते है कि यह जनपद चन्देलकाल में अस्तित्व में आया। चौरसिया का मानना है कि चन्देल नरेश हम्मीरवर्मन देव (1289-1309) ने हमीरपुर को बसाया था।[2]

ब्रिटिशकाल में 1823 में हमीरपुर स्वतंत्र जिला बनाया गया। इसके प्रथम ब्रिटिश शासक मि.एम.एन्सले थे।[3] सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के बाद 1858 में हमीरपुर जिले को इलाहाबाद मण्डल से हटाकर झांसी मण्डल से सम्बद्ध कर दिया गया। पुनः 1863 ई0 में यह इलाहाबाद जनपद से सम्बद्ध हुआ। वर्ष 1911 ई0 में एक बार फिर हमीरपुर जिले को झांसी मण्डल में जोडा गया। फरवरी 1995 को हमीरपुर जिले से तीन तहसीलें पृथक कर महोबा जिले का सृजन किया गया। इसी प्रकार 30 सितम्बर 1997 को झांसी मण्डल को विभाजित कर चित्रकूटधाम मण्डल नाम से एक नया मण्डल सृजित किया गया और हमीरपुर को इस नये मण्डल से सम्बद्ध कर दिया गया।

---

[1] ए.एन. अग्निहोत्री, हमीरपुर, महारानी लक्ष्मीबाई शिक्षा संस्थान , राठ, हमीरपुर 2000 पृ0 20

[2] भवानीदीन व स्वामीप्रसाद, बैभव बहे बेतवा धार (संदर्भ नगर हम्मीर देव का) साहित्य रत्नालय, कानपुर, 1998 पृ0 4

[3] ए.एन. अग्निहोत्री, पूर्वोक्त पृ0 21
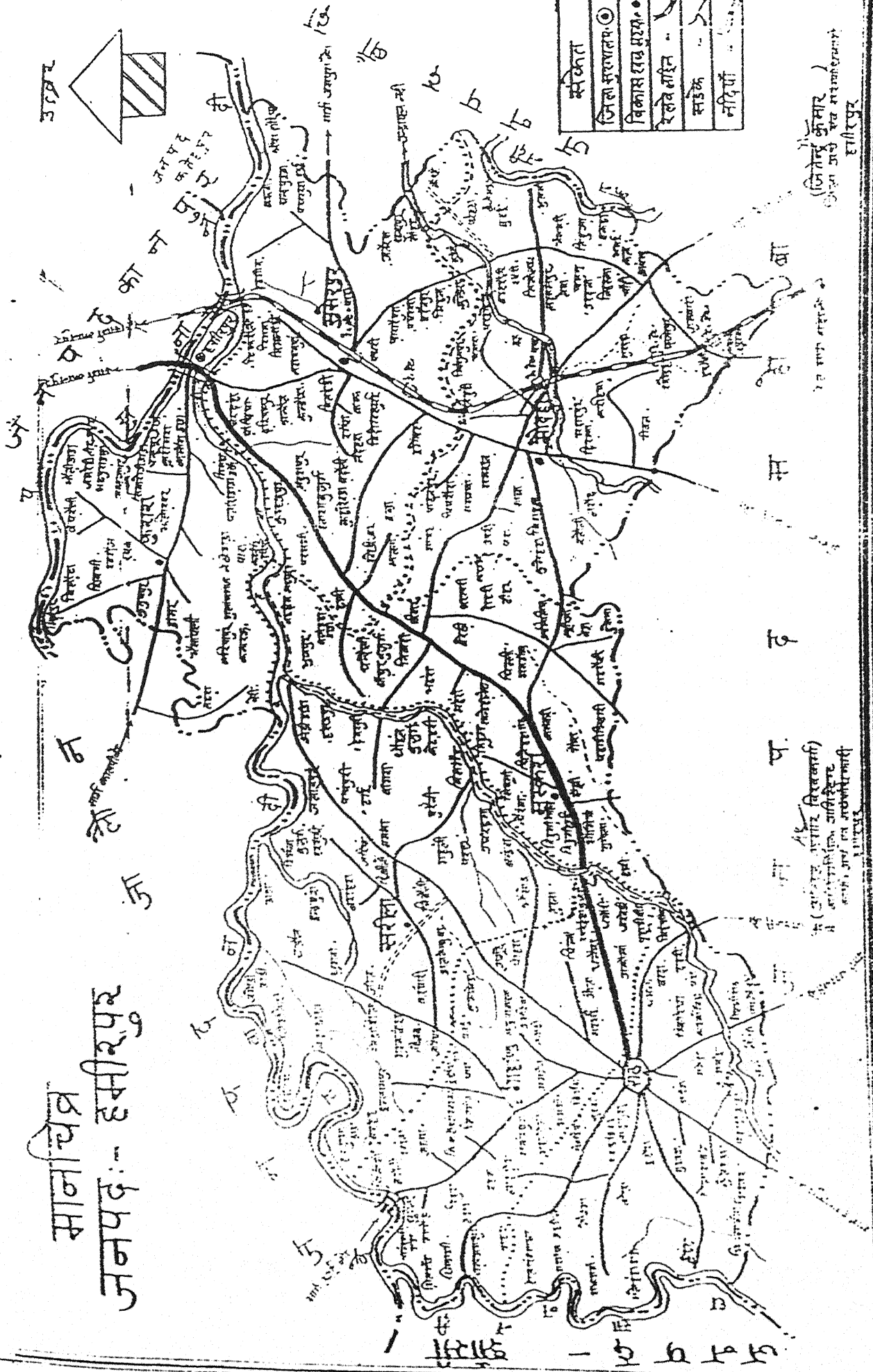
मानचित्र
जनपद :- हमीरपुर
उत्तर
संकेत
जिला मुख्यालय
विकास खण्ड मुख्या.
रेलवे लाईन
सड़कें
नदियाँ
हमीरपुर
सुमेरपुर
मौदहा
सरीला
राठ
कुरारा
(जितेन्द्र कुमार)
हमीरपुर

भौगोलिक स्थिति :-

जनपद हमीरपुर प्रदेश के दक्षिणी अंचल में 25 अंश उत्तरी अक्षांश और 79.5 से 89.5 अंश दक्षिणी देशान्तर के मध्य स्थित है। भौगोलिक दृष्टि से जनपद के दो उपसंभाग हैं

क :- उपसम्भागीय मैदानी भाग, जिसमें कि समतल एवं उपजाऊ भूमि है। इसके अन्तर्गत विकास खण्ड कुरारा, राठ, गोहाण्ड एवं सरीला आते हैं।

ख :- उप सम्भागीय मध्य भाग, जिसमें विकास खण्ड मुस्करा, कुरारा, मौदहा एवं सुमेरपुर आते हैं। यह उपसम्भाग कृषि उपज के लिये अच्छा है।

जनपद हमीरपुर का मुख्यालय यमुना व बेतवा नदी के मध्य में स्थित हमीरपुर नगर है जो प्रदेश की राजधानी लखनऊ से 140 कि.मी. दूर तथा महानगर कानपुर से 68 कि. मी. दूरी पर स्थित है। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार हमीरपुर की जनसंख्या 993792 है जिसमें पुरूषों की संख्या 536703 तथा महिलाओं की संख्या 457089 । इसमें कुल 819984 ग्रामीण व 173808 शहरी जनसंख्या है। प्रति 1000 पुरूषों के पीछे महिलाओं की संख्या 839 है। जनपद का कुल क्षेत्रफल 4094 वर्ग कि.मी. है। जनसंख्या घनत्व 215 व्यक्ति प्रति वर्ग कि. मी. है। कुल जनसंख्या का 92.07 प्रतिशत हिन्दू, 7.86 प्रतिशत मुसलमान, 0.4 प्रतिशत इसाई तथा 0.1 प्रतिशत सिख व बौद्ध हैं। हमीरपुर की कुल साक्षरता 57.7 प्रतिशत है जिसमें पुरूषों की साक्षरता 72.2 प्रतिशत तथा महिलाओं की साक्षरता दर 40.4 प्रतिशत है। वर्तमान में जनपद में कुल 627 ग्राम हैं जिसमें 501 आबाद ग्राम तथा 126 गैर आबाद ग्राम हैं जिसमें कुल 314 ग्राम पंचायतें, 59 न्याय पंचायतें व एक जिला पंचायत है। जनपद में कुल चार तहसीलें क्रमशः हमीरपुर, मौदहा एवं राठ व सरीला है जिनमें कुल सात विकास खण्ड हैं :-

हमीरपुर तहसील	मौदहा तहसील	राठ तहसील	सरीला तहसील
कुरारा	मौदहा	राठ	सरीला
सुमेरपुर	मुस्करा	गोहाण्ड	

विकास खण्ड कुरारा :-

विकास खण्ड कुरारा की स्थापना 2 अक्टूबर 1972 को हुई थी । हमीरपुर कालपी मार्ग पर जनपद मुख्यालय से इसकी दूरी 17 कि.मी. है। विकास खण्ड का कुल क्षेत्रफल 440 वर्ग कि.मी. तथा जनसंख्या घनत्व 172 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. है। 2001 की जनगणना के अनुसार यहां की जनसंख्या 90573 है जिसमें 48827 पुरूष तथा 41746 महिलायें हैं। अनुसूचित जाति की जनसंख्या 19981 है। कुल साक्षरता दर 53.87 प्रतिशत है। जिसमें 66.97 प्रतिशत पुरूष व 38.22 प्रतिशत महिला है। विकास खण्ड में 84 गांव हैं जिनमें 62 आबाद तथा 22 गैर आबाद ग्राम हैं। 35 ग्राम पंचायतें, 6 न्याय पंचायतें हैं।

विकास खण्ड सुमेरपुर :-

विकास खण्ड सुमेरपुर हमीरपुर तहसील का प्रमुख विकास खण्ड है। इसकी स्थापना 15 अगस्त 1956 को हुई थी। विकास खण्ड का कुल क्षेत्रफल 593 वर्ग कि.मी. तथा जनसंख्या घनत्व 216 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. है। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार यहां की जनसंख्या 154815 है जिसमें 83582 पुरूष तथा 71233 महिलायें हैं। कुल साक्षरता दर 56.90 प्रतिशत है जिसमें पुरूष साक्षरता दर 71.85 प्रतिशत व स्त्री साक्षरता दर 39.12 प्रतिशत है। अनुसूचित जाति की जनसंख्या 31198 है। कुल 109 गांव हैं जिसमें 84 आबाद तथा 25 गैर आबाद है। इस विकास खण्ड में कुल 54 गांव पंचायतें तथा 10 न्याय पंचायतें हैं।

विकास खण्ड मौदहा :-

मौदहा विकास खण्ड की स्थापना 26 जनवरी 1954 को हुई थी। इसका कुल क्षेत्रफल 924.4 वर्ग कि.मी. है। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार यहाँ कि कुल आबादी 148370 है, जिसमें 80465 पुरूष व 67905 महिलायें हैं। साक्षरता दर 54.12 प्रतिशत है जिसमें पुरूष साक्षरता 68.95 प्रतिशत व स्त्री साक्षरता 36.26 प्रतिशत है। इस विकास खण्ड में

कुल 103 गांव हैं जिनमें 91 आबाद तथा 12 गैर आबाद हैं। यहां 60 ग्राम पंचायतें तथा 10 न्याय पंचायतें हैं।

विकास खण्ड मुस्करा :-

विकास खण्ड मुस्करा मौदहा तहसील के अन्तर्गत हमीरपुर-राठ मार्ग पर जिला मुख्यालय से 54 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। इसकी स्थापना 10 अक्टूबर 1959 को हुई थी। इसका क्षेत्रफल 510.1 वर्ग कि.मी. है। 2001 की जनगणना के अनुसार यहॉं की जनसंख्या 124586 है जिसमें 67541 पुरूष व 57045 महिलायें हैं। अनुसूचित जाति की जनसंख्या 25797 है। कुल साक्षरता 55.08 प्रतिशत है, जिसमें पुरूष साक्षरता 70.07 प्रतिशत तथा स्त्री साक्षरता 37.03 प्रतिशत है। कुल 73 ग्रामों में से 63 आबाद व 10 गैर आबाद हैं। यहा 34 ग्राम पंचायतें तथा 7 न्याय पंचायते हैं।

विकास खण्ड राठ :-

राठ विकास खण्ड की स्थापना 2 अक्टूबर 1960 को हुई थी। इसका कुल क्षेत्रफल 451.5 वर्ग कि.मी. है। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार यहा कि कुल आबादी 92243 है, जिसमें 49682 पुरूष व 42561 महिलायें हैं। अनुसूचित जाति की जनसंख्या 27147 है। इस विकास खण्ड में कुल 86 गांव हैं जिनमें 61 आबाद तथा 25 गैर आबाद हैं। यहाँ 41 ग्राम पंचायतें तथा 8 न्याय पंचायतें हैं।

विकास खण्ड गोहाण्ड :-

विकास खण्ड गोहाण्ड राठ तहसील के अन्तर्गत जनपद मुख्यालय से 95 कि.मी. की दूरी पर राठ-उरई मार्ग पर स्थित है। इसकी स्थापना 2 अक्टूबर 1972 को हुई थी। इसका क्षेत्रफल 532 वर्ग कि.मी. है। 2001 की जनगणना के अनुसार यहां की जनसंख्या 106309 है जिसमें 57099 पुरूष व 49300 महिलायें हैं। अनुसूचित जाति की जनसंख्या 27285 है। कुल साक्षरता 57.44 प्रतिशत है, जिसमें पुरूष साक्षरता 74.91 प्रतिशत तथा स्त्री साक्षरता 37.09

प्रतिशत है। कुल 88 ग्रामों में से 74 आबाद व 14 गैर आबाद हैं। यहां 48 ग्राम पंचायतें तथा 9 न्याय पंचायते हैं।

विकास खण्ड सरीला :-

विकास खण्ड सरीला जिला मुख्यालय से 116 कि.मी. दूर नवसृजित सरीला तहसील में स्थित है। इसकी स्थापना 1 अप्रैल 1959 को हुई थी। इसका क्षेत्रफल 651.2 वर्ग कि.मी. है। 2001 की जनगणना के अनुसार यहा की जनसंख्या 102998 है जिसमें 56004 पुरूष व 46994 महिलायें हैं। अनुसूचित जाति की जनसंख्या 25520 है। कुल साक्षरता 49.98 प्रतिशत है, जिसमें पुरूष साक्षरता 66.59 प्रतिशत तथा स्त्री साक्षरता 29.74 प्रतिशत है। कुल 84 ग्रामों में से 66 आबाद व 18 गैर आबाद हैं। यहां 42 ग्राम पंचायतें तथा 9 न्याय पंचायते हैं।

जनपद की प्रमुख समस्यायें :-

किसी भी जनपद के विकास में अनेक कारकों का योगदान होता है जैसे- भौगोलिक स्थिति, प्राकतिक संसाधन, शिक्षा का स्तर, भूमि की बनावट आदि। इन प्रत्येक कारकों के संदर्भ में जनपद की स्थिति पिछड़ी हुई है जिसके चलते इसे अनेक समस्याओ का सामना करना पड़ रहा है। हमीरपुर जनपद की प्रमुख समस्यायें निम्नलिखित हैं :-

1. **बाढ़ की समस्या :-** जनपद की प्रमुख नदियों यमुना, बेतवा, केन, धसान, वर्मा, चन्द्रावल तथा उर्मिल में वर्षा ऋतु में आने वाली बाढ़ से भारी तबाही होती है। नदियों की गहराई अधिक होने से इनके जल को आसानी से सिंचाई कार्यो हेतु प्रयोग में नहीं लाया जा सकता। सिंचाई कार्यो के लिये केवल पम्प कैनाल ही उपयोगी हो सकते हैं। किन्तु धनाभाव के कारण पम्प कैनालों का निर्माण संभव नहीं हो पाता है।

2. सिंचाई की समस्या :- हमीरपुर के कुरारा विकास खण्ड का कुछ क्षेत्र तथा राठ, मुस्करा एवं गोहाण्ड का कुछ भाग नहरों द्वारा सिंचित है। शेष भाग में नहरें न होने के कारण सिंचाई पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हो पाती जिससे किसानों को कृषि हेतु वर्षा पर निर्भर रहना पडता है।

जनपद के विकास खण्ड राठ, मौदहा, मुस्करा तथा सरीला के कुछ क्षेत्रों में नलकूप सफल नहीं हैं क्योंकि जमीन के अन्दर पत्थर हैं तथा पर्याप्त मात्रा में भूगर्भीय जल भी उपलब्ध नहीं है। जनपद के विकास खण्ड सुमेरपुर, कुरारा एवं मौदहा में बेतवा, यमुना एवं केन नदियों पर लिफ्ट कैनाल बनाई गयी है किन्तु पर्याप्त मात्रा में विद्युत आपूर्ति न होने के कारण लिफ्ट कैनाल भी पूरी क्षमता से नहीं चल पाते।

3. उद्यमिता का अभाव :- जनपद में उद्यमिता का अभाव है जिस कारण यहॉ की 82 प्रतिशत जनता कृषि पर निर्भर रहती है। जनपद में कोई भी वृहद उद्योग स्थापित नहीं है जो भी मध्यम उद्योग शासकीय ऋण या सहायता पर स्थापित किये गये हैं वे अधिकांशतया छूट की धनराशि प्राप्त करने के बाद बीमार घोषित कर दिये गये।[1] उद्योग मालिकों का मुख्य उद्देश्य ऋण प्राप्त कर छूट की धनराशि प्राप्त करना होता है न कि उद्योग चलाना। अतः यह योजना जनपद में प्रभावी नहीं सिद्ध हो रही है।[2]

4. पेयजल संकट :- जनपद में भूगर्भीय जल स्तर बहुत नीचे होने के कारण पेयजल का संकट है। मार्च से जुलाई के बीच कुओं और हैण्डपम्प सूख जाते हैं।

5. निरक्षरता :- निरक्षरता हमीरपुर जनपद की एक बहुत बड़ी समस्या है यद्यपि शासन की नीतियों के अनुरूप हर दो कि.मी. की दूरी पर प्राथमिक विद्यालय स्थापित किये गये हैं तथापि अशिक्षा के कारण बालकों की शिक्षा पर कम ही ध्यान दिया जाता है।

---

[1] सामाजार्थिक समीक्षा, जनपद हमीरपुर वर्ष 2006-2007 अर्थ एवं संख्या अधिकारी कार्यालय द्वारा प्रकाशित पृ0 4

[2] वही

6. **अन्ना प्रथा :-** हमीरपुर के किसान प्रमुख रूप से जमीन से रबी और खरीफ दो फसल ही ले पाते हैं। इसका मुख्य कारण है कि मार्च-अप्रैल में रबी की फसल कटने के बाद जानवर खेतों में चरने के लिये छुटटा छोड़ दिये जाते हैं। अतः फसलों की रखवाली करना मुश्किल हो जाता है। अतः किसान जायद की फसल नहीं ले पाते।

शोध परिकल्पना :-

प्रशासन के सिद्धान्त का एक सर्वमान्य तथ्य यह है कि यदि शक्तियों और कार्यो का केन्द्रीयकरण किया जाय तो शिराओं में रक्ताल्पता, कार्य में अक्षमता और शासन में निरंकुशता की प्रवृत्तियों के पनपने की संभावना बढ़ जाती है। किन्तु इसके विपरीत यदि शक्तियों एंव कार्यो का विकेन्द्रीकरण किया जाय तो इसके विपरीत परिणाम मिलने की संभावना बढ़ जाती है। चूंकि भारत में गांव व ग्राम पंचायतें प्रशासन की सबसे छोटी आधारभूत इकाइयाँ हैं, अतः यदि इन्हें शासन में सक्रिय साझीदार बनाया जाय तो इससे कुछ सहज सकारात्मक परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं। भारत में 73वें संविधान संशोधन के बाद विभिन्न राज्यों ने इसके अनुरूप अपने पंचायत अधिनियमों के माध्यम से इसी प्रकार के स्थानीय शासन की इकाइयाँ "पंचायती राज" व्यवस्था के अन्तर्गत स्थापित करने का प्रयास किया है। इस व्यवस्था के माध्यम से शासन के सबसे निचले स्तर "ग्राम पंचायत" पर राजनीतिक शक्ति को समाज के सभी वर्गो में विसरित कर जन-जन को सहभागी बनाने का प्रयास किया गया है। इस दिशा में सबसे महत्वपूर्ण है महिलाओं को अधिक से अधिक सहभागी बनाने का प्रयत्न । उनके लिये एक तिहाई स्थानों में आरक्षण की व्यवस्था कर पंचायत व्यवस्था के माध्यम से निर्णय प्रक्रिया व राजनीतिक प्रक्रिया में उनकी भागीदारी बढाने का प्रयास किया गया है। इस व्यवस्था की सफलता से सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्रों में निम्नलिखित परिवर्तन अथवा उपलब्धियाँ अपेक्षित हैं -

1. किसी क्षेत्र की स्थानीय समस्याओं एवं उनके समाधान हेतु उपलब्ध स्थानीय संसाधनों का जितना अच्छा ज्ञान स्थानीय लोगों को होता है उतना शीर्ष नेतृत्व को नहीं होता। निर्णय का पर्याप्त अधिकार मिलने पर वे स्वास्थ्य, शिक्षा, पेयजल, सिंचाई एवं प्रदूषण

आदि अनेक समस्याओं का अपने स्तर पर अधिक अच्छी तरह निराकरण कर सकते हैं।

2. स्थानीय शासन का एक लाभ होता है कि स्थानीय शासन के मुद्दे स्थानीय स्तर के होते हैं जिसमें लगभग क्षेत्र के हर नागरिक की अभिरूचि होती है। स्थानीय राजनीति एवं निर्वाचन में जन सहभागिता राज्य अथवा केन्द्र स्तरीय मुद्दों व निर्वाचन की तुलना में अधिक होती है। परिणाम स्वरूप ग्राम पंचायतें नागरिकों के राजनीतिक प्रशिक्षण की बेहतर पाठशाला साबित हो सकती है। यहाँ की राजनीतिक गतिविधियाँ व्यक्ति के राजनीतिक समाजीकरण को बढ़ावा देते हुये राजनीतिक सहभागिता व राजनीतिक चेतना में वृद्धि कर सकती हैं।

3. भारत में सामाजिक व जातीय स्तरीकरण के कारण जात-पात की बुराई एक बड़ी समस्या रही है। 73वें संविधान संशोधन द्वारा दलितों एवं पिछड़ों को ग्राम पंचायतों में दिये गये आरक्षण से इस बुराई के साथ-साथ गाँवों में सामन्ती दबदबे वाली मानसिकता का शमन कर सामाजिक न्याय पर आधारित सामाजिक परिवर्तन को बढ़ावा मिलेगा।

4. दलितों और पिछड़ों की ही भांति भारत की आधी आबादी महिलाओं को भी पंचायतों में आरक्षण दिया गया है। इसकी अपेक्षा की जाती है कि महिलाओं की दशा में अपेक्षित सुधार आयेगा शासन में उनकी भागेदारी व स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता बढ़ेगी जिससे उन पर होने वाली उत्पीड़क कार्यवाहियां कम हो सकेंगी।

5. केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा प्रत्येक स्तर पर विकास की अनेक योजनायें संचालित की जाती हैं। इन योजनाओं में से कुछ छोटी व मंझोली योजनाओं को ग्राम पंचायतों के माध्यम से संचालित कर गाँवों के विकास की बेहतर व्यवस्था की जा सकती है। इन योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण स्तर पर व्याप्त बेराजगारी को दूर करने के लिये भी कारगर उपाय किये जा सकते हैं।

6. महिलाओं को इस प्रकार ''निर्णय'' व ''राजनीतिक'' प्रक्रिया में भागीदार बनाकर देश की लगभग आधी आबादी की क्षमता का समाज हित में सदुपयोग किया जा सकेगा।
7. यह व्यवस्था लिंगभेद व इससे सम्बन्धित समस्याओं के समाधान में सहायक सिद्ध होगी और लिंग न्याय आधारित समाज की स्थापना संभव हो सकेगी।
8. महिला सशक्तीकरण के प्रयासों को नया आयाम प्राप्त हो सकेगा।
9. पंचायती राज में महिलाओं की भागीदारी नागरिक समाज के उन्नयन, खाद्य सुरक्षा, ऊर्जा सुरक्षा, प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंध, पर्यावरण सुरक्षा आदि ज्वलंत एवं संवेदनशील मुद्दों, जिनका प्रत्यक्ष संबंध महिलाओं से है के समाधान के लिये सशक्त माध्यम है।
10. महिलाओं को शासन में भागीदारी मिलने से जनसंख्या नियंत्रण, लौकिक असुन्तलन में सुधार, महिला हितों को प्रोत्साहन, महिला शिक्षा को प्रोत्साहन, अंध विश्वासों तथा रूढ़ियों को दूर करने व अनेक सामाजिक बुराइयों के निराकरण में संवेदनशील प्रयास संभव हो सकेंगें।

चूँकि नई पंचायत व्यवस्था के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश में पंचायतें अपना दो कार्यकाल पूरा कर चुकी हैं व 2005 में तीसरे कार्यकाल हेतु निर्वाचन हो चुका है अतः अब यह अनिवार्य हो गया है कि पंचायतों के इस कार्यकाल का मूल्यांकन कर उपर्युक्त कदमों में इनके कार्यकाल की उचित समीक्षा की जाय। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में इसी उद्देश्य से हमीरपुर जनपद में ग्राम पंचायतों के तीनो कार्यकालो का विश्लेषण कर संदर्भित प्रश्नों की समीक्षा का प्रयास किया गया है। इस संदर्भ में कुछ महत्वपूर्ण प्रश्नों के उत्तर जानने का प्रयत्न किया गया है, जैसे -

1. उपर्युक्त लक्ष्यों के संदर्भ में महिला ग्राम प्रधानों की भूमिका कितनी सफल रही है कितनी असफल ।
2. महिलाओं के कार्य करण में किस प्रकार की समस्यायें आयी हैं।
3. उनकी सहभागिता को प्रभावित करने वाले कारक कौन-कौन से हैं ?
4. महिलाओं के ग्राम प्रधान के रूप में भूमिका की वस्तुस्थिति क्या है ?

5. अब तक महिलाओं को दिये गये आरक्षण के क्या सकारात्मक परिणाम उभरे हैं ?

6. क्या पंचायतों को और अधिक अधिकारों की अपेक्षा है ?

7. पंचायतों को प्राप्त वित्तीय संसाधन पर्याप्त है अथवा नहीं ?

8. वर्तमान पंचायत प्रणाली की इस व्यवस्था को और अधिक बेहतर बनाने के लिये इसमें किन संशोधनों, सुधारों की आवश्यकता है ?

इन संदर्भ प्रश्नों की विवेचना पंचायतों में महिलाओं की भूमिका को कारगर बनाने हेतु सुझाव देना इस शोध प्रबन्ध का मुख्य उद्देश्य है। इस उददेश्य से हमीरपुर जनपद में विभिन्न पंचायत चुनावों में चुनी गई महिला प्रधानों की संख्या व प्रतिशत के सम्बन्ध में सामान्य विवरण की जानकारी आवश्यक है । इसे अधोलिखित सारणीयो के माध्यम से दर्शाया गया है।

सारिणी - 1.1

2005 में विकास खण्डवार निर्वाचित महिला ग्राम प्रधानों का प्रतिशत

क्र. सं.	विकास खण्ड	कुल ग्राम पंचायतों की संख्या	महिला ग्राम प्रधानों के लिये आरक्षित ग्राम पंचायतों की संख्या	निर्वाचित महिला ग्राम प्रधानों की संख्या	निर्वाचित महिला ग्राम प्रधानों का प्रतिशत
1	कुरारा	35	24	25	71.42
2	सुमेरपुर	54	29	29	53.70
3	मौदहा	60	27	29	48.33
4	मुस्करा	34	19	18	52.94
5	राठ	41	30	30	73.17
6	गोहाण्ड	48	35	36	75.00
7	सरीला	42	29	31	73.80
	योग -	**314**	**193**	**198**	**63.05**

निर्वाचित महिला ग्राम प्रधानों में सामान्य वर्ग के महिला प्रधानों का प्रतिशत सर्वाधिक कम है। 2005 के पंचायत चुनावों में यह कुल पदों का मात्र 11.78 प्रतिशत है जो

विभिन्न विकास खण्डों में अलग-अलग है। लगभग सभी विकासखण्डों में एक सामान्य प्रवृत्ति देखी गई कि अनारक्षित महिला प्रधान पदों पर पिछड़े वर्ग की महिलाओं ने काफी हद तक कब्जा किया। अनारक्षित महिला प्रधान पदों की 107 की संख्या के सापेक्ष केवल 37 सामान्य वर्ग की महिलाये निर्वाचित हुई, जिनमें दो सामान्य अनारक्षित पदों से निर्वाचित घोषित हुई। पिछड़े वर्ग के महिलाओं के वर्चस्व की यह स्थिति यद्यपि प्रत्येक विकास खण्ड में देखी जा सकती है किन्तु गोहाण्ड और सरीला विकास खण्डों में यह सर्वाधिक है, जहां पिछडे वर्ग की महिलाओं ने अपने लिये आरक्षित प्रधान के पदों की तुलना में तीन गुना अधिक पदों पर कब्जा किया है। सारणी 1.2 व 1.3 से यह बात पूरी तरह से स्पष्ट हो जाती है ।

सारणी 1.2

2005 में विकासखण्डवार सामान्य वर्ग से निर्वाचित महिला ग्राम प्रधानों का प्रतिशत

क्र. सं.	विकासखण्ड	कुल ग्राम पंचायतों की संख्या	महिला ग्राम प्रधानों के लिये आरक्षित कुल ग्राम पंचायतों की संख्या	अनारक्षित महिला प्रधानों के लिये ग्राम पंचायतों की संख्या	सामान्य वर्ग के निर्वाचित ग्राम प्रधानों की संख्या	प्रतिशत
1	कुरारा	35	24	14	07	20.00
2	सुमेरपुर	54	29	16	04	7.40
3	मौदहा	60	27	15	13+	21.66
4	मुस्करा	34	19	10	04++	11.76
5	राठ	41	30	17	06	14.63
6	गोहाण्ड	48	35	21	01	02.08
7	सरीला	42	29	14	02	04.76
	योग -	**314**	**193**	**107**	**37**	**11.78**

+ अनारक्षित एक सीट पर भी सामान्य वर्ग की महिला चुनी गई।

++ अनारक्षित एक सीट पर भी सामान्य वर्ग की महिला चुनी गई।

सारिणी - 1.3

2005 में विकास खण्डवार पिछडे वर्ग से निर्वाचित महिला ग्राम प्रधानों का प्रतिशत

क्र. सं.	विकास खण्ड	कुल ग्राम पंचायतों की संख्या	पिछडे वर्ग के महिला प्रधानों के लिये आरक्षित ग्राम पंचायतों की संख्या	पिछडे वर्ग की निर्वाचित महिला ग्राम प्रधानों की संख्या	प्रतिशत
1	कुरारा	35	05	12	34.28
2	सुमेरपुर	54	09	21	38.88
3	मौदहा	60	08	11	18.33
4	मुस्करा	34	06	13	38.23
5	राठ	41	07	18	43.90
6	गोहाण्ड	48	07	28+	58.33
7	सरीला	42	07	21++	50.00
	योग -	**314**	**49**	**124**	**39.49**

+ पिछडे वर्ग के पुरूषों के लिये आरक्षित एक सीट पर निर्वाचित महिला प्रधान भी सम्मिलित

++ पिछड़े वर्ग के पुरूषों के लिये आरक्षित दो सीटों पर निर्वाचित महिला प्रधान भी सम्मिलित

वर्ष 2005 के ग्राम पंचायत चुनावों में अनुसूचित जाति की महिलाओं के लिये ग्राम प्रधान के कुल 37 पद आरक्षित थे जो समस्त पदों का कुल 11.78 प्रतिशत है। कुल 39 अनुसूचित जाति की महिलायें ग्राम प्रधान के रूप में निर्वाचित हुई जो कुल पदों का 12.24 प्रतिशत है। दो ऐसे पदों पर भी अनुसूचित जाति की महिलायें निर्वाचित हुई जो अनुसूचित जाति के पुरूषों के लिये आरक्षित थी । (देखें सारणी 1.4)

सारिणी - 1.4

2005 में विकास खण्डवार अनुसूचित जाति से निर्वाचित महिला ग्राम प्रधानों का प्रतिशत

क्र. सं.	विकास खण्ड	कुल ग्राम पंचायतों की संख्या	अनु.जाति की महिलाओं के लिये आरक्षित ग्राम प्रधान के पदों की संख्या	अनु.जाति की निर्वाचित महिला ग्राम प्रधानों की संख्या	प्रतिशत
1	कुरारा	35	5	6+	17.14
2	सुमेरपुर	54	4	4	7.40
3	मौदहा	60	4	5++	8.33
4	मुस्करा	34	3	3	8.82
5	राठ	41	6	6	14.63
6	गोहाण्ड	48	7	7	14.58
7	सरीला	42	8	8	19.04
	योग -	**314**	**37**	**39**	**12.24**

+ अनु.जाति के पुरूषों के लिये आरक्षित सीट पर निर्वाचित महिला प्रधान भी सम्मिलित हैं।

सारणी 1.5

2000 में क्षेत्र पंचायतवार निर्वाचित महिला प्रधानों की विवरण

क्रं.	क्षेत्र पंचायत	कुल ग्राम पंचायतें	महिलाओं के लिये आरक्षित ग्राम प्रधान के पद		सामान्य महिला ग्राम प्रधानों की संख्या	पिछड़ी जाति के महिला ग्राम प्रधानों की संख्या	अनु.जाति के महिला ग्राम प्रधानों की संख्या
			संख्या	प्रतिशत			
1	कुरारा	35	13+	37.14	03	07	03
2	सुमेरपुर	54	20++	37.03	05	11	04
3	मौदहा	76	27+	35.52	13	08	06
4	मुस्करा	34	13	38.23	02+	07	04+
5	राठ	41	14	34.14	04	05	05
6	सरीला	42	14	33.33	03	08	03
7	गोहाण्ड	48	17	35.41	03	10+	04
	योग -	**330**	**118**	**35.75**	**33**	**56**	**29**

+ अनारक्षित एक सीट पर निर्वाचित महिलाओं की संख्या भी शामिल ।

++ अनारक्षित दो सीटों पर निर्वाचित महिलाओं की संख्या भी शामिल।

सारणी 1.6

1995 में क्षेत्र पंचायतवार निर्वाचित महिला प्रधानों की विवरण

क्रं.	क्षेत्र पंचायत	कुल ग्राम पंचायतें	महिलाओं के लिये आरक्षित ग्राम प्रधान के पद		सामान्य महिला ग्राम प्रधानों की संख्या	पिछड़ी जाति के महिला ग्राम प्रधानों की संख्या	अनु.जाति के महिला ग्राम प्रधानों की संख्या
			संख्या	प्रतिशत			
1	कुरारा	35	11	31.42	02	06	03
2	सुमेरपुर	53	20+	37.73	04	11	05
3	मौदहा	76	26	34.21	11	08	07
4	मुस्करा	34	13	38.23	02	07	04
5	राठ	41	14	34.14	04	06	04
6	सरीला	40	16	40.00	06	06	04
7	गोहाण्ड	48	16	33.33	03	08	05
	योग -	**327**	**116**	**35.47**	**32**	**52**	**32**

+ अनारक्षित दो सीटों पर निर्वाचित महिलाओं की संख्या भी शामिल ।

शोध पद्धति

प्रस्तुत अध्याय हेतु ऐतिहासिक तथ्यों की जानकारी के लिये ऐतिहासिक पद्धति का अनुसरण किया गया है। इस उद्देश्य से महत्वपूर्ण पुस्तकालयों से आधार सामग्री व तथ्य संकलन किया गया है। चूंकि अध्ययन के विषय जनपद हमीरपुर का क्षेत्र है, अस्तु इसके लिये हमीरपुर प्रशासन के विभिन्न विभागों - जिला पंचायत राज अधिकारी, जिला अर्थ एवं संख्याधिकारी, कार्यालय ग्राम्य विकास अभिकरण आदि से महत्वपूर्ण तथ्यों का संकलन किया गया। विषयों की प्रत्यक्ष जानकारी के लिये पर्यवेक्षण पद्धति व साक्षात्कार अनुसूची पद्धति का प्रयोग किया गया है। विषय के रूप में हमीरपुर जनपद में 1995 में चुने गये 116, 2000 में चुनी गई

118 व 2005 के चुनाव में निर्वाचित 199 कुल 432 महिला ग्राम प्रधानों का चयन किया गया। व्यक्तिगत पर्यवेक्षण व साक्षात्कार अनुसूची पद्धति से लिये गये साक्षात्कार के आधार पर प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण कर निष्कर्ष प्राप्त करने का प्रयास किया गया है। आंकड़ो के विश्लेषण एंव निष्कर्ष निर्धारण हेतु सांख्यिकी पद्धति का प्रयोग किया गया है।

अध्याय–2

भारत में ग्रामीण प्रशासन

- स्वतंत्रता पूर्व ग्रामीण प्रशासन
- स्वातंत्रेतर भारत में ग्रामीण प्रशासन का विकास

भारत में ग्रामीण प्रशासन

भारत में ग्राम और ग्रामीण प्रशासन का अस्तित्व प्राचीन काल से रहा है। गांव हमारे सामाजिक एवं आर्थिक जीवन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण इकाई रहे हैं। ये प्राचीन काल से ही प्राकृतिक रूप से प्रशासन की प्रारम्भिक क्षेत्रीय इकाइयों का निर्धारण करते रहे हैं। प्राचीन काल से ही ग्राम प्रशासन की सशक्त एवं उन्नत परम्परा रही है। अतः भारत में ग्रामीण प्रशासन के विकास का उल्लेख करने के लिये अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इसे दो भागों में विभाजित कर सकते हैं :-

1. स्वतंत्रता पूर्व ग्रामीण प्रशासन
2. स्वातंत्रेतर भारत में ग्रामीण प्रशासन का विकास

1. स्वतंत्रता पूर्व ग्रामीण प्रशासन :-

स्वतंत्रता पूर्व भारत के ग्रामीण प्रशासन के विकास के सन्दर्भ में वैदिक काल की स्थिति से लेकर ब्रिटिश भारत काल तक (15 अगस्त 1947 से पूर्व तक) इसके विकास क्रम का लेखा-जोखा सम्मिलित किया जाता है ।

प्राचीन काल में ग्रामीण प्रशासन :-

सर्वप्रथम वैदिक साहित्य में ग्राम[1] शब्द का उल्लेख मिलता है, जहाँ ग्रामों के समृद्धि के लिये प्रार्थना की गई है।[2] वैदिक काल में ग्रामीण प्रशासन के लिये उत्तरदायी प्रमुख अधिकारी "ग्रामणी" कहलाता था।[3] ग्रामणी का जिस रूप में परिचय प्राप्त होता है वह महत्वपूर्ण

---

[1] ऋग्वेद 1/ 114/ 7 तथा 5/ 54/8 (मण्डल सूक्त मंत्र) भाज्यकार वेंकट माधव, विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान होशियारपुर, 1964

[2] वही 1/ 44/ 70, 0/ 62/ 11, 10/ 07/51

[3] तैत्तिरीय संहिता (2/5/414) (काण्ड प्रपाठक, अनुवाक मंत्र) सायण भाज्य, आनन्दाश्रम संस्कृत ग्रन्थावली, पूनप, तृतीय संस्करण 1966

है। वह प्रमुख रत्नियों में होता था। गाँव की चोर, डाकुओं एवं राज्य कर्मचारियों से पितृवत रक्षा करना उसका प्रमुख कर्तव्य था। वह गांव के लोगों पर अर्थदण्ड लगा सकता था। वही ग्राम सभा की बैठकें आहूत करता था और प्रत्येक सभा अपना विधान स्वयं बनाती थी। ग्राम सभायें स्वनिर्मित विधान में संशोधन भी कर सकती थी। डा0 जायसवाल के अनुसार वह गांव का नेता होता था और राज्याभिषेक समारोह में गांव के प्रतिनिधि के रूप में भाग लेता था।[1] सामान्य रूप से ग्रामणी राजा द्वारा नामित व्यक्ति होता था किन्तु प्रो0 मैकडोनाल्ड का कहना है कि "ग्रामणी" का पद कभी वंशानुगत, कभी नामित तो कुछ समय निर्वाचित रहा होगा। वास्तव में इस सम्बन्ध में कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं है।[2] इस सम्बन्ध में डा0 बनर्जी का मानना है कि वैदिक काल में मौलिक रूप से गांव स्वायत्त-शासी संस्थायें थे और वे केन्द्रीय नियन्त्रण से मुक्त थे। "ग्रामणी" और दूसरे ग्राम पदाधिकारी ग्राम समुदाय द्वारा नियुक्त किये जाते थे और वे उन्हीं के प्रति उत्तरदायी भी होते थे।[3] उत्तर वैदिक काल में, प्राचीन भारत के लगभग हर काल में स्थानीय शासन की स्वायत्तशासी इकाइयों के रूप में गांवों का उल्लेख मिलता है।

मध्य काल :-

पं0 जवाहरलाल नेहरू का मानना है कि मध्य काल में भारत विदेशी आक्रमणों से युद्ध और विनाश, विद्रोह और उनके क्रूर दमन का माहौल बना और नये विदेशी शासक मुख्य रूप से सैन्य शक्तियों पर निर्भर करते थे किन्तु ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की निरन्तरता बनी रही।[4] किन्तु कुछ लोगों का यह मानना है कि इस काल की शासन व्यवस्था में नगरों पर अधिक ध्यान दिया गया और पंचायतों की शक्तियां क्षीण हुई ।[5] मुगलकाल में जमींदार व जागीरदारी प्रथा के विकास से ग्राम पंचायतों का पतन हुआ। इस व्यवस्था में समृद्ध किसान या तो स्वयं कर

---

[1] डॉ0 के.पी.जायसवाल, हिन्दू पोलिटी, तृतीय संस्करण, पृ0 15
[2] प्रो0 मैकडानल्ड, वैदिक इन्डिया, पृ0 247
[3] प्रमथ नाथ बनर्जी, पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन इन एनसिएन्ट इन्डिया, पृ0 289
[4] पं. जवाहर लाल नेहरू, डिस्कवरी ऑफ इण्डिया, चतुर्थ संस्करण, पृ0 262-263
[5] पी.सरन, प्रोविन्सियल गवर्नमेन्ट ऑफ द मुगल्स, इलाहाबाद, 1941, पृ0 19

लेकर या अपने एजेन्टों से कर वसूल कर ग्रामीणों पर नियन्त्रण करता था। व्यहारतः इन्हीं जमींदारों या जागीरदारों द्वारा पंचायतों के क्रियान्वयन के क्रियाकलाप सम्पन्न किये जाते थे।

किन्तु इस काल में हिन्दू राजाओं के यहां ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय शासन विकसित बना रहा।[1] शिवाजी के शासन काल में शासन व्यवस्था में पर्याप्त सुधार हुआ। अष्ट प्रधान योजना इसका प्रत्यक्ष उदाहरण था।[2] इस काल में पाटिल ग्राम प्रधान के रूप में ही कार्य करता था। कुलकरणी उनका लिपिक होता था जो सामान्यतया ब्राह्मण होता था।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी और ब्रिटिश शासन काल में पंचायती राज :-

भारत में ब्रिटिश जाति के आगमन और ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासन की स्थापना के बाद से भारत के प्राचीन ग्रामीण स्वायत्तता के युग का अन्त हो जाता है। ब्रिटिश शासन की स्थापना के साथ ही भारत के लोकप्रिय संस्थाओं में निहित समस्त शक्तियां भारत के गर्वनर जनरल व अन्तिम रूप से ब्रिटिश संसद में केन्द्रित कर दी जाती हैं। चूँकि अंग्रेज भारतीयों को अशिक्षित एवं स्वशासन के लिये अयोग्य मानते थे इसलिये शासन के किसी भी स्तर पर शासन में उन्हें भागीदारी नहीं दी गई ।[3] किन्तु कालान्तर में केन्द्र पर शासन के बढ़ते हुए कार्यभार को देखते हुये स्थानीय शासन के स्थापना की आवश्यकता हुई तो सर्वप्रथम 1793 के चार्टर अधिनियम द्वारा कलकत्ता, बम्बई, मद्रास में निगम प्रशासन की स्थापना की गई।[4] किन्तु ये संस्थायें न्यूनाधिक सरकारी संस्थायें ही थी।[5] इस अधिनियम के द्वारा गवर्नर जनरल को इन तीन महानगरों के लिये शान्ति दण्डाधिकारियों की नियुक्ति का अधिकार दिया गया जोकि सफाई,

---

[1] अवध नारायण दुबे, नई पंचायत व्यवस्थाख वाराणसी, 2002 पृ0 6

[2] ए.के.मजुमदार और भवर सिंह (सम्पा0), हिस्टोरिकल एण्ड कल्चरल डेवलपमेन्ट ऑफ पंचायती राज, राधा प्रकाशन, नई दिल्ली, 1997, पृ0 47

[3] वही पृ0 50

[4] वही

[5] वही

सड़कों की मरम्मत व पुलिस पर आने वाले खर्चों के लिये क्षेत्र के मकानों और भूमि पर कर आरोपित कर सकते थे।[1] बाद में गैर प्रेसीडेन्सी नगरों में निगम प्रशासन प्रारम्भ करने के लिये इसी प्रकार के कदम उठाये गये। पहला निगम अधिनियम 1842 में इस प्रावधान के साथ पारित किया गया कि इसे किसी भी नगर पर केवल स्वैच्छिक आधार पर लागू किया जा सकता है। इस अधिनियम को बम्बई, बंगाल, मद्रास और यू.पी. प्रान्तों के अनेक नगरों पर लागू किया गया। इस अधिनियम द्वारा अप्रत्यक्ष करारोपण का प्रावधान किया गया था।

ब्रिटिश काल में आधुनिक अर्थो में गांवों का वास्तविक विकास 1863 में शाही सैनिक सफाई आयोग के प्रतिवेदन के आने के बाद प्रारम्भ हुआ। इस प्रतिवेदन में गांवों की गन्दी स्थिति का उल्लेख करते हुए वहां सफाई पर ध्यान देने की ओर संकेत किया गया था। इसके बाद ही अनेक प्रान्तों में ग्रामीण सफाई अधिनियम पारित किये गये।[2]

लार्ड मेयो का प्रस्ताव 1870 :-

लार्ड मेयो के प्रस्ताव पर आधारित आर्थिक विकेन्द्रीकरण की योजना ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय स्वायत्त शासन के विकास का पहला महत्वपूर्ण प्रयास था। इस प्रस्ताव के द्वारा भारत सरकार ने प्रशासन के कुछ विषय प्रान्तीय सरकारों को हस्तान्तरित किये जिनमें शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं और सड़कों का विशेष उल्लेख था। प्रान्तीय सरकारों को जितनी आवश्यकता थी उससे कम अनुदान की व्यवस्था की गई तथा यह उल्लेख किया गया कि शेष खर्चे के लिये वे स्थानीय करों पर निर्भर करेंगे इस प्रस्ताव के सन्दर्भ में 1871 में बम्बई, बंगाल, पंजाब और यू.पी. प्रान्तों के ग्रामीण क्षेत्रों के लिये स्थानीय स्वायत्त-शासन हेतु अधिनियम पारित किये गये। संक्षेप में इन अधिनियमों के प्रमुख उपबन्ध निम्नलिखित थे[3] -

---

[1] वहीं

[2] क्वार्टरली जर्नल ऑफ लोकल सेल्फ गवर्नमेन्ट इन्स्टीटयूट, वाल्यूम XXXII, टूस्थू नं0 125, पृ0 449-50 पर उद्धृत ।

[3] ए.के.मजूमदार एवं भवर सिंह, पूर्वोक्त, पृ0 52 पर उद्धृत

1. विद्यमान समाप्त प्राय व्यवस्थाओं का विधायन कर दिया गया था और इन्हें इन विषयों पर आने वा े व्यय का वहन करने हेतु बढ़ा दिया गया था।
2. एक जिले के लिये र तियों का गठन किया जाना था।
3. सभी सरकारी और ै कारी पदाधिकारियों के मनोनीत किये जाने की व्यवस्था थी।
4. सभापति सरकारी व्यक्ति होना था।

लार्ड रिपन प्रस्ताव 1882 :-

ब्रिटिश भारत में ग्रामीण स्वायत्त शासन के विकास के सन्दर्भ में अगला मील का पत्थर था लार्ड रिपन का 18 मई 1882 का प्रस्ताव लार्ड रिपन ने स्थानीय शासन के सम्बन्ध में इस प्रस्ताव में जो सुझाव दिये वे निम्नांकित थे[1] -

1. ग्रामीण क्षेत्रों की आवश्यकताओं को महत्व दिया जाये। अधिक से अधिक तालुका अथवा तहसील का क्षेत्र एक स्थानीय मण्डल अथवा बोर्ड के अधीन रखा जाय और प्रत्येक स्थानीय बोर्ड अपने जिले के नियन्त्रण में रहेगें।
2. प्रस्ताव में गैर-सरकारी बहुमत का प्रस्ताव स्वीकार किया गया था और सभी नामित सदस्यों की संख्या एक तिहाई से अधिक नहीं हो सकती थी। यह भी स्वीकार किया गया था कि जहां तक सम्भव हो निर्वाचन का सिद्धान्त क्रियान्वित किया जाये और निर्वाचन की प्रत्येक सम्भव प्रणाली का प्रयोग किया जाये।
3. स्थानीय संस्थाओं के अध्यक्ष यथासम्भव निर्वाचित और गैर सरकारी व्यक्ति हो क्योंकि इसके बिना गैर सरकारी सदस्यों को अपने मताधिकार तथा उत्तरदायित्व वास्तविक नहीं प्रतीत होंगे।
4. स्थानीय संस्थाओं पर सरकार का नियन्त्रण भीतर से न होकर बाहर से हो और साधारणतया इस नियन्त्रण का स्वरूप मैत्रीपूर्ण परामर्श तक ही सीमित रहे। सरकार

---

[1] श्रीराम महेश्वरी, भारत में स्थानीय शासन, ओरिएन्ट लांगमैन, बम्बई, 1974, पृ0 23

स्थानीय संस्थाओं पर नजर रखे किन्तु उन्हें आदेश न दे। सरकारी हस्तक्षेप तभी हो जब कोई संस्था अपने कर्तव्यों की उपेक्षा करे।

5. स्थानीय सेवायें स्थानीय संस्थाओं के अधीन हो और उनमें काम करने वाले सरकारी कर्मचारी अपने आपको संस्था का सेवक समझें, स्वामी नहीं।
6. स्थानीय संस्थाओं के अपने यथेष्ट तथा विकासशील आर्थिक साधन हो । अपना बजट बनाने की पूर्ण स्वतंत्रता हो ।
7. स्थानीय संस्थाओं में योग्य व्यक्तियों को लाने के लिये इन संस्थाओं के सदस्यों को रायबहादुर, राय साहब आदि उपाधियों से विभूषित किया जाये।

यद्यपि रिपन के ये प्रस्ताव उदारवादी थे किन्तु इनके क्रियान्वयन में उदारता का परिचय नहीं दिया गया। नौकरशाही इसके मार्ग में सबसे बड़ा रोड़ बनी रही। फिर भी इस प्रस्ताव के आधार पर स्थानीय निकायों की स्थापना की गई। इन निकायों में दो तिहाई सदस्य गैर-सरकारी होते थे जिन्हें अपने नामांकन के लिये जिला मजिस्ट्रेट पर निर्भर करना पड़ता था। संयुक्त प्रान्त और पंजाब के ग्रामीण बोर्डो को छोड़कर जिला मजिस्ट्रेट सभी ग्रामीण बोर्डो का चेयरमैन होता था।

इस प्रस्ताव के आधार पर द्विस्तरीय जिला बोर्ड स्थापित किये गये। सबडिवीजन या तहसील स्तर पर उप जिला बोर्ड का गठन किया गया। सब डिवीजन तालुका या तहसील का बड़ा से बड़ा क्षेत्र स्थानीय बोर्ड के अधीन रखा गया तथा जिला बोर्ड को ही समन्वयकर्ता माना गया।[1] असम, मध्य भारत तथा मद्रास को छोड़कर सभी प्रान्तों के जिला बोर्ड़ो को सीमित अर्थ सम्बन्धी तथा स्थानीय सरकार के सभी कार्य सौपें गये।

विकेन्द्रीकरण आयोग (1909) :-

1901 से 1910 तक भारत सचिव के पद पर रहे विस्कॉउन्ट मोरले भारत में केन्द्रीकरण की बढ़ती हुई प्रवृत्ति को देखकर चिन्तित थे और उन्होने इस मामले को गम्भीरता से

[1] हरिशचन्द्र शर्मा, ''भारत में स्थानीय प्रशासन'', कालेज बुक डिपो, जयपुर 1968, पृ0 83

लिया। अतः उन्होंने इस सम्बन्ध में विचार हेतु चार्ल्स हॉबहाउस की अध्यक्षता में 1907 में शाही विकेन्द्रीकरण आयोग का गठन किया । इस आयोग को प्राचीन भारतीय ग्राम पंचायतों की व्यवस्था को पुनर्जीवित करने के उद्देश्य से जनता के विचार भी जानना था। इस आयोग ने स्थानीय शासन के सम्बन्ध में निम्न सुझाव दिये ।[1] -

1. गांवों को स्थानीय शासन की आधारभूत इकाई माना जाय और प्रत्येक गांव में पंचायत हो। नगरीय क्षेत्र में नगर पालिका का निर्माण किया जाये।
2. स्थानीय निकायों में निर्वाचित सदस्यों का पर्याप्त बहुमत हो ।
3. नगरपालिका अपना अध्यक्ष चुने किन्तु जिलाधीश को स्थानीय जिला बोर्ड का अध्यक्ष बना रहना चाहिये।
4. नगरपालिका को आवश्यक सत्ता प्रदान की जानी चाहिये जिससे वे कर निर्धारण कर सकें और न्यूनतम धनराशि को संरक्षित कोष में जमा करके अपना बजट बना सकें।
5. बड़े नगरों को एक पूर्णकालिक नामित अधिकारी की सेवायें उपलब्ध कराई जाय। स्थानीय निकायों को अपने कर्मचारियों पर पूर्ण नियन्त्रण होना चाहिये, केवल नौकरी की सुरक्षा की दृष्टि से कुछ पूर्वोपाय किये जा सकते हैं।
6. स्थानीय निकायों पर बाहरी नियन्त्रण, परामर्श, सुझाव और लेखा-परीक्षण तक सीमित होना चाहिये।
7. नगर पालिकाओं की ऋण लेने की शक्ति पर सरकार का नियन्त्रण बना रहना चाहिये और नगर पालिका की सम्पत्ति को पट्टे पर देने अथवा बेंचने के लिये सरकार की पूर्व स्वीकृति ली जानी चाहिये।
8. प्राथमिक शिक्षा का उत्तरदायित्व नगर पालिकाओं पर होना चाहिये, यदि वह चाहे अथवा उसके पास साधन हो तो वह कुछ धन माध्यमिक विद्यालयों पर भी खर्च करें।

---

[1] श्रीराम महेश्वरी, पूर्वोक्त, पृ0 24

9. जिला तथा उप जिला बोर्ड के सदस्यों के निर्वाचन ग्राम पंचायतों द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से हो और नगर पालिका के सदस्य करदाताओं द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित हों।

10. आयोग इस पक्ष में था कि पंचायतों को कुछ न्यायिक कार्य भी सौपें जाय जिससे कि नियमित न्यायालयों का भार कुछ हल्का हो सके।[1]

आयोग ने पंचायतों की आय के निम्न स्रोतों का भी अनुमोदन किया -

1. गांवों में स्थानीय बोर्डों के उद्देश्य के लिये भूमिकर का एक भाग दिया जाना।
2. कलेक्टर अथवा जिला बोर्ड द्वारा विशिष्ट स्थानीय विषयों में सुधार के उद्देश्य से विशेष अनुदान दिया जाना।
3. गांवों को जिन बाजारों एवं तालाबों आदि का प्रबन्धन सौपा गया है उनसे प्राप्त आय।
4. पंचायत के समक्ष लाये जाने वाले दीवानी मामलों पर मामूली शुल्क लगाकर।[2]

इस आयोग की सिफारिशें दूरगामी थी और गांवों के हित संवर्द्धन के उद्देश्य से प्रेरित थी । इस आयोग के रिपोर्ट के प्रकाशित होने के बाद ही वास्तविक रूप से भारत में गांवों के महत्व को पहचाना गया।

भारत सरकार प्रस्ताव 1915 :-

1915 में भारत सरकार ने एक प्रस्ताव पारित किया जिसमें कहा गया था कि प्रान्तीय सरकारों के काम का जो बोझ अधिकारों के केन्द्रीकरण के कारण बढ़ गया है, वे सरलतापूर्वक स्थानीय संस्थाओं को हस्तान्तरित करके कम किया जा सकता है। बंगाल की चौकीदारी पंचायतों को, मद्रास, बम्बई की स्वास्थ्य समितियों को, मध्य प्रान्त और संयुक्त प्रान्त की ग्राम पंचायतों को तथा पंजाब एवं स्थानीय फण्ड, संगठनों को कुछ अधिकार तथा साधन दिये जायें जिससे वे बराबर अपना संगठन कर सकें। प्रस्ताव में आगे सिफारिश की गयी थी कि किसी

---

[1] रिपोर्ट ऑफ रॉयल कमीशन आन डिसेन्ट्रलाइजेश (1907) पृ0 241
[2] वही, पृ0 244

भी स्थान में जहां कोई भी योजना लोगों के सहयोग से कार्यरूप में परिणीत हो सके, उसका पूरा-पूरा प्रयोग प्रान्तीय सरकार की स्वीकृति के आधार पर किया जाय। इस योजना की सफलता के लिये इस प्रस्ताव में निम्न सुझाव दिये गये थे -[1]

1. योजना का प्रयोग चुने हुए गांवों में हो जहां लोग इससे सहमत हों।
2. पंचायतों को प्रशासकीय और न्यायिक कार्य करने चाहिये।
3. जहां आवश्यक हो वहां विधायन की आज्ञा दी जाय।
4. जहां स्वास्थ्य समिति, शिक्षा समिति आदि प्रशासकीय समितियां हों उन्हें उन ग्राम पंचायतों में सम्मिलित कर दिया जाये, जहां वे स्थित हों।
5. पंचायतों को प्रान्तीय नियन्त्रण वाले कर उठाने का अधिकार दिया जाये।
6. पंचायतों और दूसरी प्रशासनिक संस्थाओं के सम्बन्ध की पूर्ण व्याख्या करनी चाहिये।

यह प्रस्ताव भी क्रियान्वित नहीं हो सका और पूरी योजना कागजी शेर बनकर रह गई।

ब्रिटिश सरकार की 1917 की घोषणा :-

20 अगस्त 1917 को भारत मंत्री ई.एस.माण्टेग्यू ने ब्रिटिश कामन सभा में सरकार की ओर से भारतीय नीति सम्बन्धी यह घोषणा की कि सम्राट के सरकार की नीति, जिससे भारत सरकार पूर्णतः सहमत है, यह है कि शासन की प्रत्येक शाखा में भारतीयों का सम्पर्क उत्तरोत्तर बढ़े और स्वायत्तशासी संस्थाओं का क्रमिक विकास हो, जिससे ब्रिटिश साम्राज्य के विभिन्न अंगों के रूप में भारत में क्रमिक रूप से उत्तरदायी सरकार की स्थापना हो सके। किन्तु राष्ट्रहित की दृष्टि से यह घोषणा सन्तोषजनक नहीं थी। देश के उदारवादी नेता भी इससे पूर्ण सन्तुष्ट नहीं थे। इसमें कुछ ऐसी व्यवस्थायें भी थीं जो आत्म-निर्णय और उत्तरदायी शासन

[1] ए.के. मजूमदार एवं भवर सिंह, पूर्वोक्त, उद्धत पृ0 60-61

के सिद्धान्तों के प्रतिकूल थी जैसे शासन प्रणाली का स्वरूप, परिषद में मनोनीत सदस्यों की व्यवस्था, निषेधाधिकार, अध्यादेश जारी करने आदि का अधिकार।[1]

भारत सरकार का प्रस्ताव 1918 :-

ग्रामीण क्षेत्रों में उत्तरदायी शासन की स्थापना की प्रगति को तीव्र करने के उद्देश्य से व्यवस्थापन की आवश्यकता पर बल देने के लिये मई 1918 में भारत सरकार द्वारा एक अन्य प्रस्ताव पारित किया गया जिसमें कहा गया था कि किसी भी स्थिति में ग्राम पंचायत व्यवस्था का विकास निगम और ग्रामीण बोर्डो के अधिनियमों से अलग व्यवस्थापन द्वारा सुनिश्चित किया जाना चाहिये।[2] इस सम्बन्ध में प्रान्तीय सरकारों को कानून बनाने के निर्देश दिये गये थे जो कि विस्तृत एवं सरल हों।[3] इसी बीच ब्रिटिश संसद ने भारत शासन अधिनियम 1919 पारित किया जिसके द्वारा स्थानीय स्वायत्त शासन को लोकप्रिय मंत्रिमण्डल के नियंत्रण में एक हस्तान्तरित प्रान्तीय विषय बना दिया गया था। इसके इच्छित परिणाम हुए और ब्रिटिश भारत के आठ प्रान्तों में ग्राम पंचायतों की स्थापना के लिये अधिनियम पारित किये गये -

1. बंगाल स्वायत्त शासन अधिनियम, 1919
2. बिहार स्वायत्त शासन अधिनियम, 1920
3. बम्बई ग्राम पंचायत अधिनियम, 1920
4. मध्य प्रान्त और बेरार पंचायत अधिनियम 1920
5. मद्रास पंचायत अधिनियम, 1920
6. यू0पी0 ग्राम पंचायत अधिनियम, 1920
7. पंजाब पंचायत अधिनियम, 1922
8. आसाम स्वायत्त शासन अधिनियम, 1925

---

[1] अवध नारायण दुबे, पूर्वोक्त, पृ0 15-16
[2] गवर्नमेंन्ट आफ इण्डिया रिजोल्यूशन, 16 मई 1918, पैरा 23
[3] वही, पैरा 24

इसके अतिरिक्त ब्रिटिश भारत से बाहर 600 के लगभग देशी रियासतें थी । इनमें से कई राज्यों में जन आन्दोलनों के बाद राज्य पंचायत अधिनियम पारित किये गये। श्री रामायन प्रसाद ने अपने अध्ययन में विभिन्न राज्यों द्वारा पारित अधिनियमों का उल्लेख किया है[1], जोकि निम्न हैं :-

1. कोचीन पंचायत रेगूलेशन एक्ट, 1919
2. होल्कर राज्य पंचायत अधिनियम, 1920
3. ट्रावन्कोर ग्राम पंचायत अधिनियम 1925
4. कोल्हापुर पंचायत अधिनियम, 1926
5. बड़ौदा ग्राम पंचायत अधिनियम, 1926
6. मैसूर ग्राम पंचायत अधिनियम, 1926
7. बीकानेर ग्राम पंचायत अधिनियम, 1928
8. करौली ग्राम पंचायत अधिनियम, 1939
9. हैदराबाद ग्राम पंचायत अधिनियम, 1940
10. मेवाड़ ग्राम पंचायत अधिनियम, 1940
11. जसंदन ग्राम पंचायत अधिनियम, 1940
12. भावनगर ग्राम पंचायत अधिनियम, 1943
13. पोरबन्दर ग्राम पंचायत अधिनियम, 1943
14. भरतपुर ग्राम पंचायत अधिनियम, 1944
15. मारवाड़ ग्राम पंचायत अधिनियम, 1945
16. वाड़िया राज्य ग्राम पंचायत अधिनियम, 1945
17. धनगधा राज्य ग्राम पंचायत अधिनियम, 1946
18. मोरर्वी राज्य ग्राम पंचायत अधिनियम, 1946

---

[1] क्वार्टरली जर्नल आफ द लोकल सेल्फ गर्वनमेन्ट इन्स्टीट्यूट, इस्यू नं0 128 पृ0 452-53

19. सिरोही ग्राम पंचायत अधिनियम, 1947

20. जयपुर ग्राम पंचायत अधिनियम, 1948

भारतीय शासन अधिनियम 1935 :-

भारतीय शासन अधिनियम 1935 में स्थानीय सरकारों को प्रान्तीय सूची में रखा गया था। जब 1937 में प्रान्तों में लोकप्रिय सरकारें बनी, उन्होंने स्थानीय सरकारों को सही अर्थो में प्रतिनिध्यात्मक बनाने के लिये कानून बनाये। किन्तु सितम्बर 1939 में द्वितीय विश्व युद्ध प्रारम्भ होने के साथ ही ये सारे प्रयास व प्रयोग निरर्थक साबित हो गये।

यह सत्य है कि भारत में स्थानीय शासन प्राचीन काल से चला आ रहा है किन्तु उसे नवीन स्वरूप प्रदान करने का कार्य ब्रिटिश शासन काल में हुआ। वस्तुतः प्राचीन ग्रामीण समाज की यह विशेषता रही है वह प्रायः वंशानुगत विशेषाधिकारों अथवा जातीयता को आधार मानकर अपना संगठन करता था किन्तु नवीन ब्रिटिश प्रणाली ने उसे लोकतान्त्रिक स्वरूप प्रदान करने का प्रयास किया। निर्वाचन का समय-समय पर होना, निर्वाचकों के प्रति उत्तरदायी होना, प्रशासन तथा करारोपण के अधिकारों को स्थानीय स्तर पर प्रदान करना एवं प्रजातंत्र के विकास के लिये कुशल नेतृत्व तैयार करना आदि ब्रिटिश देन रही है। फिर भी भारत में ब्रिटिश स्थानीय शासन का उद्देश्य ब्रिटिश हितों की पूर्ति से अधिक प्रेरित था, भारतीय स्थानीय संस्थाओं के विकास की ओर कम। इन संस्थाओं पर अंग्रेजों का पूर्ण अधिकार होता था, जिस कारण अधिकांश भारतीय इसमें भाग हीं नहीं ले पाते थे ।

II

स्वातंत्रेत्तर भारत में ग्रामीण प्रशासन का विकास

15 अगस्त 1947 को भारत को स्वतंत्रता मिली और भारतीयों को अपने भावी राजनीतिक प्रणाली की रूपरेखा निर्धारित करने का अधिकार मिला। कैबिनेट मिशन योजना के अनुसार जुलाई 1946 में संविधान निर्माण करने वाली संविधान सभा के 296 स्थानों के लिये निर्वाचन सम्पन्न हुए जिसने 9 दिसम्बर 1946 को अपनी पहली बैठक के साथ संविधान निर्माण का कार्य प्रारम्भ किया। यह संविधान सभा इस बात को लेकर असमंजस की स्थिति में थी कि संविधान में पंचायतों का गांधी मॉडल सम्मिलित किया जाय अथवा नहीं। बाद में संविधान सभा ने दो समितियों का गठन किया - एक संविधान प्रारूप समिति और दूसरी प्रान्तीय समिति किन्तु इन दोनों ही समितियों के विचार-विमर्श में कहीं भी पंचायतों का उल्लेख नहीं हुआ। डॉ0 अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत प्रारूप संविधान में इस सम्बन्ध में एक शब्द भी नहीं कहा गया था। वैसे भी डा0अम्बेडकर ग्राम पंचायतों के घोर विरोधी थे । उनका कहना था कि गांव स्थानीयता, उपेक्षा, जातिवाद और संकीर्णता के गढ़ हैं।[1]

इस सम्बन्ध में जब संविधान सभा में चर्चा प्रारम्भ हुई तो गांधीवादी सदस्य अपनी बात मनवाने के लिये विशेष प्रभाव नहीं डाल सके। किन्तु अत्याधिक केन्द्रीकृत व्यवस्था और ग्रामीण प्रशासन के उपेक्षा की घोर आलोचना हुई। इस विरोध के कारण संविधान सभा ने ग्राम पंचायतों को कुछ संवैधानिक दर्जा देना स्वीकार किया और इस प्रकार संविधान में राज्य के नीति निर्देशक तत्वों के अन्तर्गत अनु0 40 में ग्राम पंचायतों को स्थान मिला। संविधान में स्थानीय सरकार का विषय सातवीं अनुसूची की दूसरी सूची (राज्य सूची) में रखा गया । अनुच्छेद 40 के क्रियान्वयन के सन्दर्भ में अनु0 246(3) में देश की प्रत्येक राज्य विधान सभाओं को यह अधिकार

[1] एन0 राज गोपाल राव "पंचायती राज" ए स्टडी ऑफ रूरल लोकल गवर्नमेंन्ट इन इण्डिया", उप्पल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1992, पृ0 34 पर उद्धत ।

दिया गया कि वे स्थानीय शासन से सम्बद्ध व्यवस्थाओं के लिये कानून बनावें। संविधान लागू होने के बाद पंचायती राज के क्षेत्र में विशेष प्रगति 1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम के प्रारम्भ से हुई। यह कार्यक्रम जानबूझकर गांधी जयन्ती को प्रारम्भ किया गया था जिसके दो प्रमुख लक्षण थे-

(अ) सम्पूर्ण ग्रामीण क्षेत्र के लोगों का सर्वांगीण विकास, व

(ब) जनता की सहभागिता

इसी प्रकार 1953 में पूरे देश में राष्ट्रीय विस्तार सेवा प्रारम्भ की गई। सामुदायिक विकास कार्यक्रम केन्द्र सरकार द्वारा संचालित था। प्रारम्भ में कार्यक्रम के संचालन का दायित्व योजना आयोग में स्थापित नवीन इकाई सामुदायिक परियोजना प्रशासन को सौंपा गया था शीघ्र ही आगे चलकर 1956 में इस इकाई को एक स्वतंत्र मन्त्रालय - सामुदायिक विकास मन्त्रालय का दर्जा दिया गया। 1966 में इस मन्त्रालय का खाद्य और कृषि मन्त्रालय में विलय कर दिया गया। मन्त्रालय का नाम "खाद्य, कृषि, सामुदायिक विकास और सहयोग" कर दिया गया। यह स्थिति 1974 तक बनी रही। आगे चलकर 'सहयोग' को कृषि मन्त्रालय से हटाकर नवगठित मन्त्रालय औद्योगिकी और सहयोग का हिस्सा बना दिया गया।

सामुदायिक विकास विभाग का प्रमुख कार्य कार्यक्रम सम्बन्धी नीतियों और खण्ड स्तर पर योजनाओं का निर्माण करना है। केन्द्रीय सरकार को सामुदायिक विकास और पंचायती राज के विषय में परामर्श देने के लिये 1971 में एक संयुक्त सलाहकार परिषद का गठन किया गया। इस कार्यक्रम को लागू करने का उत्तरदायित्व राज्य सरकारों पर है। प्रत्येक राज्य में सामुदायिक विकास कार्यक्रम के लिये एक विकास आयुक्त होता है। कुछ राज्यों जैसे उत्तर प्रदेश में एकीकृत कृषि उत्पादन और ग्रामीण विकास विभाग कृषि उत्पादन आयुक्त के अधीन है। इसके अतिरिक्त, राज्य सरकार ने राज्य विकास समिति नामक संस्था की स्थापना की । मुख्यमंत्री इस समिति का अध्यक्ष, विकास विभाग का मंत्री सदस्य और विकास आयुक्त सचिव होता है। जिला स्तर पर जिला परिषद समन्वय और कार्यक्रम के क्रियान्वयन के लिये उत्तरदायी है। खण्ड स्तर पर पंचायत समिति उत्तरदायी है और ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायतों का नियन्त्रण होता है।

यहां यह उल्लेखनीय है कि इन समस्त उपायों ने स्वायत्तशासी इकाई के रूप में पंचायतों को पनपने का अवसर नहीं दिया । इन योजनाओं से स्थानीय शासन के संदर्भ में भी नौकरशाही का दबदबा रहा और पंचायतों को ग्रामीण विकास में भागीदारी का अवसर नहीं मिला।

बलवन्त राय मेहता समिति :-

सामुदायिक विकास कार्यक्रम और राष्ट्रीय प्रसार सेवा पर काफी व्यय किये जाने और इसकी सफलता के लम्बे चौड़े दावों के बाद, इसकी जांच के लिये एक अध्ययन दल 1957 में नियुक्त किया गया जिसके अध्यक्ष बलवन्त राय मेहता थे और जिसका पूरा नाम था "सामुदायिक परियोजनाओं तथा राष्ट्रीय विकास सेवा का अध्ययन दल"। इस अध्ययन दल को सौंपे गये कार्यो में एक कार्य, कार्य सम्पादन में अधिक तेजी लाने के उद्देश्य से कार्यक्रम के संगठनात्मक ढ़ांचे तथा कार्य करने के तरीकों की उपायुक्तता का आंकलन करना था।

मेहता समिति ने देशभर के चुने हुए ब्लाकों, स्थानीय जनता, स्थानीय अधिकारियों, जिला स्तरीय अधिकारियों, प्रतिनिध्यात्मक संगठनों के प्रतिनिधियों, विभागों के अध्यक्षों, विकास विभाग के सरकारी सचिवों से बात की । समिति ने इस बात पर भी विचार किया कि तत्कालीन स्थानीय संस्थायें कार्य कर सकती है या नहीं । यदि नहीं तो कौन सी नवीन संस्थायें स्थापित की जाये। समिति ने 24 नवम्बर 1957 को अपना प्रतिवेदन सरकार के समक्ष प्रस्तुत किया।

बलवन्त राय मेहता समिति के प्रतिवेदन में त्रिस्तरीय पंचायत संरचना की योजना प्रस्तुत की गई। यह स्तरों वाली योजना लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का एक प्रयास था। इस प्रतिवेदन में प्रस्तावित विकेन्द्रीकरण योजना के पांच सिद्धान्त प्रस्तुत किये गये।[1] वे सिद्धान्त निम्न थे -

[1] बी.एस.भार्गव, "ग्रास रूट्स लीडर शिप" नई दिल्ली 1979 पृ0 73

1. जिला स्तर से ग्राम स्तर तक स्थानीय स्वायत्त शासन का ढांचा त्रिस्तरीय होना चाहिये । ये सभी परस्पर सम्बद्ध होने चाहिये।
2. इन संस्थाओं को अपने कार्यों एवं उत्तरदायित्वों का निर्वाह करने के योग्य बनाने के लिये शक्ति एवं उत्तरदायित्व का यथार्थ हस्तान्तरण होना चाहिये।
3. इन निकायों को अपने उत्तरदायित्वों को पूरा करने के योग्य बनाने के लिये पर्याप्त संसाधनों का हस्तान्तरण होना चाहिये।
4. तीनों स्तरों पर सभी कल्याणकारी एवं विकास योजनाओं तथा कार्यक्रमों को केवल इन निकायों के माध्यम से ही पहुंचना चाहिये।
5. ग्रामीण स्थानीय शासन की जो व्यवस्था विकसित की जाये वह ऐसी हो कि भविष्य में इससे भी अधिक शक्ति और उत्तरदायित्वों का अन्तरण सरलता से किया जा सके।

समिति ने जिस त्रिस्तरीय पंचायत व्यवस्था का सुझाव दिया वह निम्नप्रकार से था -

ग्राम स्तर	-	ग्राम पंचायत
खण्ड स्तर	-	पंचायत समिति
जनपद स्तर	-	जिला परिषद

ग्राम पंचायत प्रत्यक्षतः जनता द्वारा निर्वाचित संस्था थी जिसमें दो महिला सदस्यों तथा एक-एक अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों को शामिल किये जाने का सुझाव था।[1] पंचायतों के अनिवार्य कार्य पारिवारिक उपयोग के लिये जल आपूर्ति की व्यवस्था, सफाई, सार्वजनिक मार्गों, नालियों, तालाबों, आदि की व्यवस्था, गलियों, पुलों एवं नालियों का रख-रखाव प्राथमिक पाठशालाओं की निगरानी, पिछड़े वर्गो का कल्याण आदि निर्धारित किये गये थे।[2] इसके साथ ही किसी अन्य योजना या कार्यक्रम को लागू करने में पंचायतों को पंचायत समिति के अभिकरण के

---

[1] वही पृ0 98
[2] वही पृ 18

रूप में कार्य करना था।[1] पंचायतों के आय के साधन के रूप में सम्पत्ति अथवा गृहकर, बाजार हाट आदि पर कर, गाड़ी ,रिक्शा, नाव, पशु आदि पर चुंगी, मवेशीखाने से आय, क्षेत्र के अन्तर्गत बेंचे जाने वाले पशुओं पर शुल्क और पंचायत समिति से मिलने वाले अनुदान को शामिल किया गया था।[2]

पंचायत व्यवस्था के दूसरे स्तर विकास खण्ड स्तर पर पंचायत समिति के स्थापना का सुझाव दिया गया।[3] समिति के अनुसार पंचायत समितियां खण्ड सलाहकार समितियों का स्थान लेंगी। क्षेत्र के विकास का दायित्व इन पंचायत समितियों पर होगा। पंचायत समिति के संगठन के सम्बन्ध में बलवन्त राय मेहता समिति का सुझाव था कि पंचायत समिति का संगठन ग्राम पंचायतों द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से होगा । खण्ड के अन्तर्गत आने वाली ग्राम पंचायतों के समूह को इकाई मानकर उनके सभी पंचों द्वारा निर्धारित संख्या में पंचायत समिति के सदस्यों का चुनाव किया जायेगा। निर्वाचित सदस्यों द्वारा दो महिला सदस्यों का अनुमेलन किया जायेगा। यदि खण्ड में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या 5 प्रतिशत से अधिक है तो उनमें से एक-एक सदस्य का निर्वाचन न होने की दशा में अनुमेलन किया जायेगा। प्रशासन, सार्वजनिक जीवन और ग्रामीण विकास के क्षेत्र में विशिष्ट अनुभवी दो स्थानीय व्यक्तियों को भी पंचायत समिति अनुमेलित कर सकती है। पंचायत समिति में कुल निर्वाचित सदस्यों की संख्या का दस प्रतिशत भाग खण्ड में कार्यरत सहकारी संगठनों के निवेदको के प्रतिनिधियों द्वारा निर्वाचन या अनुमेलन से भरा जायेगा। खण्ड से संलग्न नगर पालिकाओं को भी पंचायत समिति में एक-एक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार होगा।[4] पंचायत समिति का कार्यकाल 5 वर्ष का होगा[5] और इसका एक निर्वाचित अध्यक्ष होगा।

---

[1] वही पृ0 18
[2] वही पृ0 9
[3] वही पृ0 10
[4] वही पृ0 11
[5] वही पृ0 15

मेहता समिति ने पंचायत समिति के कार्यों में कृषि विकास, बीजों का चुनाव, संरक्षण एवं वितरण, सहकारी बैंको एवं शासकीय सहायता के साथ स्थानीय कृषि वित्त की व्यवस्था, लघु सिंचाई का विकास, स्थानीय उद्योगों का विकास, पेयजल आपूर्ति, स्वच्छता और जन स्वास्थ्य, औषधीय सहायता, स्थानीय तीर्थ स्थलों एवं उत्सवों के सम्बन्ध में व्यवस्था, प्राथमिक पाठशालाओं की व्यवस्था और प्रशासकीय नियंत्रण, पिछड़े वर्ग के लोगों का कल्याण, मजदूरी का निर्धारण, ग्राम पंचायतों की सड़कों को छोड़कर स्थानीय महत्व की सड़कों की मरम्मत और निर्माण तथा आंकड़ों का संग्रह एवं रख-रखाव आदि कार्यो को शामिल किया था। समिति द्वारा यह भी सिफारिश की गई थी कि पंचायत समिति ग्राम पंचायतों के क्रिया कलापों में इनका मार्ग निर्देशन करेगी।

मेहता समिति के प्रतिवेदन में कहा गया था कि ग्रामीण क्षेत्रों के समस्त विकास का दायित्व पंचायत समिति का होगा। इसीलिये इसके आय के प्रचुर साधनों की व्यवस्था की गई थी । पंचायत समितियों को आय के निम्न स्रोत सौंपे गये थे -

1. खण्ड के अन्तर्गत संग्रहित भू-राजस्व का विधि के अन्तर्गत निर्धारित प्रतिशत में यदि पंचायत समितियों की राय में अधिक अन्तर होने की सम्भावना हो तो राज्य स्तर पर संगठित भू-राजस्व का एक भाग राज्य की सभी पंचायत समितियों में समान रूप से वितरित किया जा सकता है। दोनों परिस्थितियो में पंचायत समिति और ग्राम पंचायत को दी जाने वाली राशि कुल भूमि राजस्व का 40 प्रतिशत से कम नहीं होना चाहिये।
2. भू-राजस्व, लघु सिंचाई के लिये पानी की दर आदि पर कर ।
3. व्यवसायों व व्यापार पर कर।
4. अचल सम्पत्ति के हस्तान्तरण पर कर।
5. सम्पत्ति से मिलने वाला लाभ और किराया।
6. टोल पट्टी से प्राप्त आय।
7. तीर्थ स्थानों पर कर ।

8. मनोरंजन कर।

9. प्राथमिक शिक्षा पर कर।

10. मेलों, बाजारों व हाटों से प्राप्त आय।

11. मोटर गाड़ी कर का हिस्सा ।

12. स्वैच्छिक दान ।

13. शासन द्वारा दिया गया अनुदान ।

बलवन्त राय मेहता समिति ने पंचायतों के तीसरे स्तर "जनपद स्तर" पर जिला परिषदों के गठन की संस्तुति की । मेहता समिति के अनुसार जिला परिषद जनपद की पंचायत समितियों के मध्य समन्वयात्मक कड़ी के रूप में कार्य करेगी। समिति ने जिला परिषदों को पंचायत समितियों से सम्बद्ध करते हुये यह सुझाव दिया कि इसमें जिले कि पंचायत समितियों के अध्यक्ष, जनपद के समस्त विधायक तथा सांसद, चिकित्सा, लोक स्वास्थ्य, कृषि, पशु चिकित्सा, अभियन्त्रण, शिक्षा, पिछड़े वर्ग का कल्याण, सार्वजनिक निर्माण तथा अन्य विकास विभागों के जिला स्तरीय अधिकारी सदस्य के रूप में सम्मिलित होने चाहिये। कार्य को शीघ्रता के साथ निपटाने के लिये जिला परिषद में स्थायी समितियों का भी निर्माण किया जाना चाहिये। समिति के प्रतिवेदन के अनुसार जिला परिषद का कार्य प्रशासकीय नहीं होना चाहिये क्योंकि इससे ग्राम पंचायतों तथा पंचायत समितियों के कार्य स्वतंत्रता का हनन होगा। जिला परिषद पंचायत समितियों के बजट की जांच करेगी और उस पर अपनी स्वीकृति प्रदान करेगी।

पं0 जवाहर लाल नेहरू के सुझाव पर इस त्रिस्तरीय प्रशासन की प्रक्रिया का नाम पंचायती राज रखा गया। इस सम्बन्ध में राजस्थान राज्य ने 2 अक्टूबर 1959 को पूरे प्रदेश को जनवादी विकेन्द्रीकरण के अधीन लाने की पहल की । पूरे राज्य को 232 सामुदायिक विकास खण्डों में बांट दिया गया और राज्य के विकास की जिम्मेदारी जनता और पंचायतों से प्रारम्भ कर ऊपर तक प्रतिनिधियों को सौंप दी । 1 नवम्बर 1959 को आन्ध्र राज्य ने सभी सक्रिय सामुदायिक विकास खण्ड़ों और सारे जिलों के जिला परिषदों में लोकप्रिय विकेन्द्रीकरण की यह

योजना लागू कर दी ।[1] इसके बाद दूसरे राज्यों ने भी इस ढांचे को कुछ परिवर्तनों के साथ लागू कर दिया।

पंचायत राज वित्त का अध्ययन दल 1962 :-

तीसरी पंचवर्षीय योजना की विशेष पृष्ठभूमि में पंचायती राज के संसाधनों को सुदृढ़ करना आवश्यक हो गया था। इस उद्देश्य से सामुदायिक विकास एवं पंचायती राज मन्त्रालय ने के0सन्थानम की अध्यक्षता में 1962 में पंचायत राज संस्थाओं के वित्त एवं संसाधनों के अध्ययन हेतु एक अध्ययन दल का गठन किया ।[2] तीसरी पंचवर्षीय योजना के व्यापक परिप्रेक्ष्य में इस अध्ययन दल को पंचायत राज संस्थाओं के संसाधनों एवं वित्त की समीक्षा करना और उपयुक्त अनुमोदन प्रस्तुत करना था।

1962 तक इस अध्ययन दल ने यह देखा कि लगभग सभी राज्यों ने पंचायत राज संस्थाओं की स्थापना की है अथवा इसके लिये मात्र कानून पारित किये हैं। यह आन्ध्र प्रदेश, आसाम, मद्रास, महाराष्ट्र, मैसूर, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान तथा उत्तर प्रदेश में काम कर रहीं थी। बिहार, गुजरात और मध्य प्रदेश में अधिनियम पारित किये गये थे। केरल और पश्चिमी बंगाल में 1960 से पहले ही अधिनियम पारित कर लिये गये थे। आधारभूत ढांचा सभी राज्यों में लगभग समान था, जिला परिषदों को छोड़ कर । पंचायत राज संस्थाओं के कार्यकरण का गहन अध्ययन करने के उपरान्त अध्ययन दल ने पंचायतों के संसाधनों के सम्बन्ध में निम्न सुझाव दिये।[3]

1. गृहकर, व्यवसायकर और मोटर वाहनकर पंचायतों के अनिवार्य कर होने चाहिये।
2. अनिवार्य करों की अधिकतम और न्यूनतम दरें निर्धारित होनी चाहिये।
3. गृहकर मकान के पूंजीगत मूल्य के आधार पर निर्धारित किया जा सकता है।

---

[1] एस.के.डे., ''पंचायती राज (हिन्दी) राजकमल प्रकाश, दिल्ली, 1962 पृ0 74
[2] एन. राजगोपाल राव, पूर्वोक्त, पृ0 47
[3] वही, पृ0 48-49

4. गृहकर में कोई छूट नहीं दी जानी चाहिये।
5. मकानों के मूल्यांकन के लिये एक स्वतंत्र अभिकरण स्थापित किया जाना चाहिये।
6. व्यवसाय कर की दरें आन्ध्र प्रदेश में इन्हीं दरों के समान होनी चाहिये।
7. पंचायत समिति द्वारा साइकिल टैक्स निश्चित किया जाना चाहिये, मोटर के अतिरिक्त वाहनों पर वाहन कर लगाया जाना चाहिये।
8. समिति द्वारा तीर्थ कर लगाया जाना चाहिये।
9. प्रकाश एवं जल पर कर वैकल्पिक होना चाहिये।
10. न्याय पंचायतों पर आने वाला व्यय सरकार द्वारा वहन किया जाना चाहिये।
11. सार्वजनिक भूमि पंचायतों की होनी चाहिये।
12. मादक पदार्थो पर लिया जाने वाला शुल्क पंचायतों में बांटना चाहिये।

पंचायतों के व्यय के सम्बन्ध में अध्ययन दल ने विस्तृत प्रस्ताव प्रस्तुत किये -

1. प्रशासकीय व्यय पंचायत की सम्पूर्ण आय के 25 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिये।
2. प्रत्येक पंचायत में एक वैतनिक सचिव और सफाई कर्मी होना चाहिये।
3. जल निकासी पर विशेष ध्यान दिया जाये।
4. विद्युतीकरण को गति प्रदान की जाये।

पंचायत समितियों के सम्बन्ध में जो सुझाव थे वे निम्न थे -

1. केन्द्र और राज्य से प्रति व्यक्ति एक रूपये का अनुदान,
2. वार्षिक अनुदान का पहले से निर्धारण
3. प्राथमिक शिक्षा का पूरे अनुदान के साथ, जिला परिषदों को हस्तान्तरण,
4. सड़कों के रख-रखाव के लिये धन दिया जाना चाहिये।

पंचायती राज संस्थाओं के नाम 1964[1]

राज्य	पंचायत	पंचायत समिति	जिला परिषद
आन्ध्र प्रदेश	पंचायत	पंचायत समिति	जिला परिषद
आसाम	गांव पंचायत	आंचलिक पंचायत	मोहकमा परिषद
बिहार	ग्राम पंचायत	पंचायत समिति	जिला परिषद
गुजरात	गांव पंचायत	तालुका पंचायत	जिला पंचायत
जम्मू-कश्मीर	पंचायत	तालुका पंचायत	जिला पंचायत
केरल	पंचायत	तालुका पंचायत	जिला पंचायत
मध्य प्रदेश	ग्राम पंचायत	जनपद पंचायत	जिला पंचायत
मद्रास	पंचायत	पंचायत यूनियन काउसिंल	डिस्ट्रिक डेवलपमेन्ट काउन्सिल
महाराष्ट्र	पंचायत	पंचायत समिति	जिला परिषद
मैसूर	पंचायत	तालुका बोर्ड	डिस्ट्रिक्ट डेवलपमेन्ट काउन्सिल
उड़ीसा	ग्राम पंचायत	पंचायत समिति	जिला परिषद
पंजाब	ग्राम पंचायत	पंचायत समिति	जिला परिषद
राजस्थान	पंचायत	पंचायत समिति	जिला परिषद
उत्तर प्रदेश	ग्राम पंचायत	क्षेत्र समिति	जिला परिषद
पश्चिम बंगाल	ग्राम पंचायत	आंचलिक परिषद	जिला परिषद

1963-64 तक पंचायती राज संस्थायें पूरी तरह से स्थापित हो चुकी थी और प्रत्येक राज्य एवं संघ शासित क्षेत्र पूरी लगन एवं आशावादी दृष्टिकोण के साथ नयी व्यवस्थाओं

[1] वही, पृ0 49-50

के साथ प्रयोग में संलग्न थी। किन्तु 1965 के बाद से पंचायत व्यवस्था की रफ्तार धीमी पड़ने लगी है और 1977 तक आते-आते यह पूर्ण पराभव का शिकार हो गई है। 1977 में केन्द्र में सत्ता परिवर्तन के बाद स्व0 मोरार जी देसाई के नेतृत्व में जनता पार्टी की सरकार बनी । इस सरकार ने पंचायत व्यवस्था को लोकतांत्रिक और आधुनिकीकृत सन्दर्भो में पुनर्जीवित करने के उद्देश्य से अशोक मेहता की अध्यक्षता में 1977 में एक समिति का गठन किया।

अशोक मेहता समिति :-

जनता पार्टी सरकार ने दिसम्बर 1977 में अशोक मेहता की अध्यक्षता में पंचायर्ती राज संस्थाओं पर एक समिति नियुक्त की जिसका पूरा नाम था ''कमेटी ऑन पंचायत राज इन्स्टीट्यूशन'' । इस समिति के निम्नलिखित उद्देश्य थे[1]

1. राज्यों तथा केन्द्र शासित क्षेत्रों में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के सम्बन्ध में वर्तमान स्थिति का और जिला स्तर से ग्राम स्तर तक पंचायत राज संस्थाओं की प्रणाली का पुनरीक्षण ताकि त्रुटियों व कमियों का पता लगाया जा सके।
2. चुनाव प्रणाली सहित, पंचायत राज संस्थाओं के गठन पद्धति की जांच करना तथा पंचायती राज व्यवस्था के कार्य निष्पादन पर उनके प्रभावों का मूल्यांकन।
3. भविष्य में समेकित ग्रामीण विकास में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका आदि के सम्बन्ध में सुझाव देना।
4. पंचायती राज संस्थाओं को अपनी भावी भूमिका निभाने में समर्थ बनाने के उद्देश्य से उनका पुनर्गठन एवं कमियों और त्रुटियों को दूर करने के उपाय सुझाना।
5. पंचायती राज संस्थाओं, सरकारी प्रशासन तंत्र तथा ग्रामीण विकास में संलग्न सहकारी तथा स्वयं सेवी संस्थाओं के बीच सहयोग पूर्ण सम्बन्धो के विषय में सिफारिशें देना।

---

[1] ''रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑन पंचायत राज इन्स्टीट्यूशन'' नई दिल्ली, अगस्त 1978 प्र0 6

6. पंचायत राज संस्थाओं को सौंपी जाने वाली जिम्मेदारियों को निभाने के लिये पर्याप्त धन सुनिश्चित करने हेतु आवश्यक वित्त सम्बन्धी मामलों सहित, अन्य सिफारिशें देना।

इस समिति ने अगस्त 1978 में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जिसमें 132 सिफारिशें की गई थी। अशोक मेहता समिति का प्रधान मनतव्य यह था कि प्रशासन के विकेन्द्रीकरण के लिये कार्य मूलकता आवश्यक है। जहां करोड़ो व्यक्तियों का सम्बन्ध है और जहां निर्धन लोगों की स्थिति सुधारने के लिये बहुत बड़ी संख्या में सूक्ष्म परियोजनायें बनाई जा रही हैं, वहां प्रशासन का विकेन्द्रीकरण एक अनिवार्य आवश्यकता हो जाती है। साथ ही जनता की इच्छा और आकांक्षाओं के प्रति संवेदनशील बने रहने के लिये लोकतांत्रिक पर्यवेक्षण की भी आवश्यकता होती है। अशोक मेहता समिति द्वारा पंचायती राज संस्थाओं के सम्बन्ध में दिये गये महत्वपूर्ण सुझाव निम्न थे -

1. समिति का सबसे महत्वपूर्ण सुझाव यह था कि पंचायती राज की त्रिस्तरीय पद्धति के स्थान पर द्विस्तरीय पद्धति का निर्माण किया जाय- जनपद स्तर पर जिला परिषद तथा निचले स्तर पर मण्डल पंचायत समिति ।[1]
2. जिले को विकेन्द्रीकरण की धुरी माना जाय तथा जिला परिषद को समस्त विकास कार्यो का केन्द्र बिन्दु बनाया जाय। जिला परिषद ही जिले के आर्थिक नियोजन का कार्य करेगी । समस्त विकास कार्यो में सामन्जस्य स्थापित करेगी और निचले स्तर का मार्गदर्शन करेंगी ।
3. अशोक मेहता समिति ने जिला स्तर के नीचे ब्लाक को विकेन्द्रीकरण का स्तर नहीं माना और गांव तथा ब्लाक के मध्य कई गांवों के समूह को मण्डल के स्तर पर गठन करने पर बल दिया। ये मण्डल 15000 से 20000 की जनसंख्या पर गठित की जायेंगी।[2]

[1] रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑन पंचायती राज इन्स्टीट्यूशन'' नई दिल्ली, अगस्त 1978 पृ0 58

[2] वही पृ0 37, 38, 48, 177, 178

4. पंचायती राज संस्थायें समिति प्रणाली के आधार पर अपने कार्यों का सम्पादन करेंगी।

5. जिलाधीश सहित जिला स्तर के सभी अधिकारी अन्ततः जिला परिषद के अधीन रखे जायेंगे।

6. न्याय पंचायतों को विकास पंचायतों के साथ नहीं लिया जाना चाहिये। यदि न्याय पंचायत की अध्यक्षता योग्य न्यायाधीश करें और निर्वाचित पंचायत को उनके साथ सम्बद्ध कर दिया जाये तो बेहतर होगा। समिति ने पंचायत राज संस्थाओं को आवश्यक कर लगाने का अधिकार दिये जाने की सिफारिश की थी। समिति ने व्यवसाय कर, मनोरंजन कर, भवन कर और भूमि कर लगाने की अनुशंसा की थी।

7. समिति का विचार था कि राज्य सरकारों द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को दलीय भेदभाव के आधार पर भंग नहीं किया जाना चाहिये, यदि अभिक्रमण आवश्यक हो तो उसे भंग किये जाने के 6 माह के भीतर नया निर्वाचन हो। निर्वाचन की तिथि को राज्य सरकारें आगे के लिये न टालें।[1]

8. जिला परिषद में 6 प्रकार के सदस्य होने चाहिये -

   (क) विभाजित निर्वाचन खण्डों से निर्वाचित सदस्य,

   (ख) पंचायत समितियों के अध्यक्ष,

   (ग) पदेन सदस्य,

   (घ) दो महिला सदस्य

   (च) नगर पालिकाओं के निर्दिष्ट व्यक्ति

   (छ) दो अनुमोलित सदस्य जिनमें एक ग्रामीण विकास में रूचि रखता हो व एक विश्वविद्यालय अथवा महाविद्यालय में अध्यापक हो ।

9. समिति की सिफारिश के अनुसार मण्डल पंचायतों में तीन प्रकार के सदस्य होने चाहिये-

   (क) ग्राम और जनसंख्या के आधार पर प्रत्यक्ष निर्वाचित 15 सदस्य

---

[1] वही पृ0 180-181

(ख) कृषक सेवा समितियों के प्रतिनिधि

(ग) दो अनुमेलित महिला सदस्य अथवा दो महिला सदस्य जिन्हें मण्डल पंचायत के निर्वाचन में सर्वाधिक मत मिला हो।

10. पंचायत राज संस्थाओं का निर्वाचन मुख्य निर्वाचन आयुक्त के परामर्श से राज्य के मुख्य निर्वाचन अधिकारी द्वारा सम्पन्न कराया जाना चाहिये।

11. पंचायती राज के लिये जन समर्थन प्राप्त करने हेतु समिति ने ऐच्छिक इकाइयों की भूमिका के महत्व को स्वीकार किया।

पंचायती राज व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने हेतु अशोक मेहता समिति द्वारा दिये गये सुझावों पर विचार करने के लिये 19 दिसम्बर 1978 को अखिल भारतीय पंचायत परिषद के नवम् सम्मेलन का आयोजन किया गया जिसका उद्घाटन करते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई ने सत्ता के विकेन्द्रीकरण को अत्यन्त आवश्यक बताते हुए कहा कि इसके लिये हमारे संविधान निर्माताओं ने देश के संविधान में व्यवस्था कर रखी है।[1]

अशोक मेहता समिति की इस रिपोर्ट पर अनेक राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों ने अपनी असहमति प्रकट की। 6 राज्यों और एक केन्द्र शासित प्रदेश ने तत्कालीन त्रिस्तरीय पद्धति को जारी रखने के पक्ष में अपने विचार प्रस्तुत किये। इसी प्रकार अन्य राज्यों ने भी अपने-अपने सुझाव प्रस्तुत किये। प्रधानमंत्री ने अशोक मेहता समिति की सिफारिशों पर विचार करने के लिये राज्यों के मुख्यमंत्रियों का एक सम्मेलन बुलाया। इस सम्मेलन में एक उच्च्व स्तरीय समिति के गठन की घोषणा की गई जोकि पंचायती राज संस्थाओं का स्तर ऊंचा उठाने और उन्हें कुशलतापूर्वक और लाभकर ढंग से कार्य करने के लिये एवं आर्थिक स्थिति सुदृढ़ बनाने के लिये राज्यों के मार्ग निर्देशन के लिये विधेयक तैयार करने का कार्य करेंगी। सम्मेलन में अधिकांश राज्यों के मुख्यमंत्रियों ने अशोक मेहता समिति के सुझावों के प्रति असहमति व्यक्त की। सम्मेलन में तत्कालीन त्रिस्तरीय पद्धति के प्रति आम राय प्रकट की गई और अशोक मेहता के द्विस्तरीय माडल के प्रति असहमति व्यक्त की गई । प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई ने भी त्रिस्तरीय पद्धति पर

---

[1] जनवार्ता, वाराणसी, 20 दिसम्बर 1978, पृ0 6

अपनी सहमति व्यक्त करते हुए इन संस्थाओं का कार्यकाल 5 वर्ष निर्धारित करने का सुझाव दिया। कर्तव्य और वित्त व्यवस्था के सम्बन्ध में सम्मेलन का निर्णय था कि इन संस्थाओं को विकास का बुनियादी साधन बनाने के लिये उसे और वित्तीय तथा अन्य अधिकार प्रदान किये जाये ताकि वे उचित ढंग से कार्य कर सकें।[1] अशोक मेहता समिति की सिफारिशों पर कोई कार्यवाही नहीं की गई।

अर्स्सी के दशक के मध्य बदलती हुई परिस्थितियों में केन्द्र तथा राज्य सरकारों द्वारा पंचायती राज की भूमिका और महत्व को स्वीकार किया गया साथ ही इस व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने की दिशा में प्रयास प्रारम्भ हुए। योजना आयोग ने भी आठवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत इस बात पर विशेष बल दिया कि ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में अपार वृद्धि के कारण इन कार्यक्रमों को लागू करने के लिये पंचायती राज के माध्यम से जनता की सहभागिता प्राप्त की जानी चाहिये। इस दिशा में 1984 में केन्द्र सरकार द्वारा एक महत्वपूर्ण कदम उठाया गया जिसके अन्तर्गत प्रधानमंत्री ने राज्यों के मुख्यमंत्रियों को पत्र लिखकर कहा कि पंचायतों के चुनाव शीघ्र करायें जायें और उनकी कार्य शैली में सुधार किया जाय। इस दिशा में दूसरा महत्वपूर्ण कदम था केन्द्र सरकार द्वार पंचायती राज को मजबूत बनाने के लिये सुझाव देने हेतु दो समितियों का गठन किया जाना- 1985 में जी.के.राव समिति व 1986 में एल.एम.सिंधवी समिति।

जी.के.राव समिति की रिपोर्ट :-

ग्रामीण विकास के लिये वर्तमान प्रशासनिक प्रबन्धों की समीक्षा के उद्देश्य से योजना आयोग द्वारा 1985 में जी.के.राव समिति का गठन किया गया। राव समिति द्वारा स्थानीय स्तर पर राज्य की शक्तियों को हस्तान्तरित करने की आवश्यकता पर बल देते हुए पूरे देश में पंचायती राज संस्थाओं को पुनर्जीवित करने की सिफारिश की गई जिसमें राज्य विकास परिषद,

[1] दी टाइम्स ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, 21 मई 1979, पृ0 1

जिला परिषद, पंचायत समिति तथा ग्राम सभा होगी। पंचायती राज संस्थाओं को सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से राव समिति ने निम्न सुझाव दिये -

1. प्रत्येक गांव के लिये एक ग्राम सभा होनी चाहिये जिसमें उस गांव के सभी सदस्य मतदाता हों। ग्रामसभा की बैठक 6 माह में एक बार अवश्य हो।
2. ग्रामीण गरीबी दूर करने सम्बन्धी कार्यक्रमों जैसे समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम के अन्तर्गत सहायता के पात्र व्यक्तियों आदि का चुनाव ग्रामसभा की बैठकों में किया जाना चाहिये।
3. विकास खण्ड के स्तर पर समेकित विकास की प्राचीन अवधारणा को पुनः प्रारम्भ किया जाना चाहिये।
4. खण्ड स्तर पर प्रत्यक्ष चुनाव के आधार पर निर्मित पंचायत समिति जैसी संस्था भी होनी चाहिये जो जिला परिषद के मार्ग-निर्देशन में विकास कार्यक्रमों की योजना बनाने और उनके क्रियान्वयन के लिये उत्तरदायी हो।
5. मण्डल पंचायत अथवा पंचायत समिति में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति व महिलाओं के लिये स्थान आरक्षित होना चाहिये।
6. विकास खण्ड स्तर पर जो लाइन डिपार्टमेन्ट का कार्य करते हैं उन्हें पंचायत समिति के अधीन होना चाहिये।
7. पंचायत समितियां विकास खण्डों के लिये योजनायें तैयार करवायेंगी और जिला परिषद का अनुमोदन प्राप्त करेगी। योजनाओं के क्रियान्वयन में पंचायत समितियों का कार्यकारी उत्तरदायित्व भी होगा।
8. वर्तमान ग्राम पंचायतों के स्थान पर कुल 15000 से 20000 तक की जनसंख्या के गांव समूह के लिये मण्डल पंचायत का गठन किया जाना चाहिये। यदि पंचायत समिति का गठन नहीं किया जाता है तो मण्डल पंचायत कार्यकारी संस्था होगी

जिसका कार्य अपने स्तर पर उन योजनाओं का क्रियान्वयन करना होगा जो इसे सौपें जायेगें।

9. राज्य सरकार ब्लाक स्तर पर सलाहकारी व समन्वयकारी संस्था के रूप में एक पंचायत समिति-मण्डल पंचायतों, जिला परिषदों, सहकारी संस्थाओं आदि से प्रतिनिधियों का चुनाव करके गठित कर सकती है। उनका कार्य भी विकास खण्ड़ों के लिये योजनायें तैयार करना होगा।

10. पंचायत समिति और ग्राम/ मण्डल समिति की एक उपसमिति होनी चाहिये। जिसमें मुख्यतः महिला सदस्य होनी चाहिये। इस उपसमिति का काम प्रौढ़ शिक्षा के साथ-साथ महिलाओं और बच्चों के कल्याण के लिये कार्यक्रमों पर विचार करना तथा उनको क्रियान्वित करना होगा।

11. जिला स्तर पर विशेष रूप से विकेन्द्रीकरण किया जाना चाहिये। ग्रामीण क्षेत्र में जिला स्तर पर जिला परिषद संस्था होनी चाहिये। इन संस्थाओं में 30000 से 40000 तक की जनसंख्या पर एक निर्वाचित सदस्य होना चाहिये। जिला सहकारी बैंक, शहरी, स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं के प्रतिनिधियों के अतिरिक्त विधान सभाओं, संसद के सदस्यों, आर्थिक, व्यावसायिक, सामाजिक दृष्टि से पिछड़े वर्गो, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं तथा निर्धन वर्ग के पर्याप्त प्रतिनिधि इन संस्थाओं में होने चाहिये। जिला परिषद का कार्यकाल 3 से 5 वर्ष का होना चाहिये। इन संस्थाओं की कार्यावधि विशेष परिस्थिति में 6 माह से अधिक नहीं बढ़ायी जानी चाहिये और इस अवधि में चुनाव अवश्य करा लिये जाने चाहिये । अध्यक्ष पद के लिये जिला परिषद के सदस्यों में से चुनाव किया जा सकता है। राज्य सरकारों द्वारा इस सम्बन्ध में विकल्प के तौर पर महापौर प्रणाली भी अपनायी जा सकती है। इन दोनों ही स्थितियों में अध्यक्ष और यदि आवश्यक हो तो उपाध्यक्ष के लिये चुनाव अन्तरणीय एकल प्रणाली से किया जा सकता है।

12. जिला स्तर पर सभी विकास विभाग उसके अधीनस्थ कार्यालय स्पष्ट रूप से जिला परिषद के अधीन होना चाहिये। इन विभागों के योजनागत व योजना स्तर बजट और जिला स्तर और इससे नीचे के स्तर पर कार्यान्वित की जाने वाली विभिन्न विशेष योजनाओं के लिये आवंटित धनराशि जिला बजट का अंग होना चाहिये।

13. राज्य स्तर पर मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में राज्य विकास परिषद गठित की जानी चाहिये। राज्य सरकार के सभी मंत्री व जिला परिषदों के अध्यक्ष इस समिति के सदस्य और विकास आयुक्त इसके अधीन सचिव होंगे।

यद्यपि राव समिति की रिपोर्ट में प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण की एक प्रभावी योजना प्रस्तुत की गई थी, किन्तु ये सिफारिशें भी लागू नहीं की जा सकीं।

एल.एम. सिंधवी समिति की रिपोर्ट 1986 :-

16 जून 1986 को पंचायती राज सम्बन्धी संकल्पना प्रपत्र तैयार करने के लिये ग्रामीण विकास विभाग, भारत सरकार ने सिंधवी की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया। इस समिति ने अपनी रिपोर्ट 27 नवम्बर 1986 को प्रस्तुत की । इस समिति ने पंचायतों का अवलोकन व मूल्यांकन करने के उपरान्त पंचायती राज व्यवस्था को पुनर्जीवित करने के उद्देश्य ये निम्न सिफारिशें प्रस्तुत की -

1. संगत मापदण्ड के आधार पर गांवों को पुनर्गठित किया जाये और सक्षम ग्राम पंचायतों का गठन करने के लिये सामूहिक रूप से उन्हें समूहित तथा बड़ा किया जाये।
2. पंचायती राज संस्थाओं को स्वशासन प्रणाली का अंग माना जाये तथा पंचायतों के अधीन विकास कार्यों में लोगों की सीधी भागीदारी सुनिश्चित की जाये।
3. पंचायती राज संस्थाओं को संविधान में संशोधन कर संवैधानिक दर्जा तथा संरक्षण प्रदान किया जाय।

4. प्रत्येक राज्य में एक पंचायती राज न्यायिक अभिकरण की स्थापना के लिये प्रावधान किया जाय, जो चुनावों, निलम्बनों, अधिक्रमणों, विघटनों तथा पंचायती राज संस्थाओं के कार्य तथा निर्वाचित कार्यकर्ताओं से सम्बन्धित अन्य मामलों में विवाद का निर्णय करे।

5. पंचायती निकायों के लिये नियमित चुनाव सुनिश्चित करने के लिये संवैधानिक प्रावधान किया जाय और यह कार्य आयोग अथवा इसी प्रकार की अन्य व्यवस्था के माध्यम से भारत के निर्वाचित आयोग को सौंप दिया जाना चाहिये।

6. पंचायती राज संस्थाओं को प्रभावी ढंग से कार्य करने हेतु पर्याप्त वित्तीय साधनों की उपलब्धि सुनिश्चित करने के लिये आर्थिक संसाधनों की खोज की जाये।

7. कर और शुल्क लगाने की शक्तियां पंचायती राज संस्थाओं को सौंपी जाये जिनमें ऐसा प्रावधान किया जाये कि एक निर्धारित अवधि तक राज्य सरकारें पंचायती राज की ओर से कर वसूल करेंगी तथा प्रत्येक राज्य में वित्त आयोग की सिफारिशों के आधार पर उनमें वितरित करेंगी।

8. संविधान के अन्तर्गत केन्द्र सरकार द्वारा नियुक्त किये गये वित्त आयोग तथा पंचायती राज संस्थाओं के लिये पर्याप्त प्रावधान किया जाय।

9. विभिन्न ग्रामीण विकास तथा गरीबी निवारण कार्यक्रमों के लिये आवंटित किये गये संसाधनों को पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से उपलब्ध कराया जाय जिससे उन्हें शक्ति तथा प्रभाव प्राप्त हो सके।

10. स्वशासन तथा विधि शासन की सामाजिक आदतों के विकास के लिये न्याय पंचायतों का योगदान बहुमूल्य है। न्याय पंचायतों को अधिनिर्णय के साथ-साथ मध्यस्थता तथा समझौते आदि का कार्य भी सौंपा जाये।

11. उच्च चरित्र वाले व पंचायती राज संस्थाओं से सहानुभूति रखने वाले अधिकारियों को पंचायत राज अधिकारी के रूप में कार्य करने के लिए रखा जाय। कर्मचारियों और

प्रशासनिक अधिकारियों को पंचायती राज संस्थाओं के महत्व की जानकारी दी जाय तथा उनके प्रति इन्हें उत्तरदायी बनाया जाये।

12. राष्ट्रीय तथा राज्य स्तरीय स्वशासन संस्थाओं के जिला स्तरीय प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना की जाये तथा उन्हें पंचायती राज तथा शहरी संस्थाओं से सम्बन्धित प्रशिक्षण, मूल्यांकन तथा अनुसंधान की जिम्मेदारी सौंपी जायें।

सरकारिया आयोग 1988 :-

सरकारिया आयोग ने भी केन्द्र राज्य सम्बन्धों के सन्दर्भ में यह अनुभव किया कि अधिकांश स्वायत्तशासी निकायों द्वारा इस समय प्रभावी रूप से कार्य नहीं किया जा रहा है। इसका मुख्य कारण यह है कि इनके चुनाव नियमित रूप से नहीं कराये जाते हैं और इन निकायों का अधिक्रमण सारहीन आधारों पर किया जाता है। इस सम्बन्ध में सरकारिया आयोग ने कार्यवाही के जिन विकल्पों का सुझाव दिया वे निम्न हैं -

1. सभी राज्य विधान मण्डलों को राज्यों की आम राय प्राप्त करने के बाद बनाये जाने वाले मॉडल बिल के आधार पर कानून बनाना चाहिये।
2. संसद को राज्य विधान मण्डलों की सहमति से कानून बनाना चाहिये।
3. स्थानीय शासन के विषय को संवैधानिक संशोधन के द्वारा राज्य सूची में समवर्ती सूची में स्थानान्तरित किया जाय और तत्पश्चात संसद द्वारा उपयुक्त कानून पारित किया जाना चाहिये।
4. सरकारिया आयोग की एक समिति ने यह सुझाव दिया कि पंचायती राज संस्थाओं को वैधानिक रूप से मान्यता दी जानी चाहिये और जिले के राजनीतिक एवं प्रशासनिक ढांचे का आधार ग्राम पंचायतों को बनाया जाना चाहिये।

पी.के.थुंगन उप समिति :-

सन् 1988 में ही पी.के.थुंगन की अध्यक्षता में कार्मिक लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय की संसदीय सलाहकार समिति की एक उपसमिति का गठन किया गया और इस

5. विधेयक द्वारा राज्य द्वारा विधायी शक्तियों एवं उत्तरदायित्वों को योजना बनाने तथा विकास योजनाओं के क्रियान्वयन के सम्बन्ध में, ग्राम पंचायतों को हस्तान्तरित करने का प्रावधान था।
6. पंचायतों के लिये सुदृढ़ वित्तीय व्यवस्था करना और राज्य के संचित निधि से अनुदान देने की व्यवस्था को निश्चित करना।
7. प्रत्येक राज्य के लिये हर पांच वर्ष पर वित्त आयोगों के गठन एवं विधानमण्डल को अनुशंसा के सम्बन्ध में प्रावधान करना।
8. पंचायतों के तीनो स्तरों के चुनाव का दायित्व निर्वाचन आयोग को सौपने का प्रावधान।
9. भारत के महालेखा परीक्षक एवं नियंत्रक को यह शक्ति प्रदान करना कि वे पंचायतों के लेखा की जांच की समुचित व्यवस्था कर सके।
10. कुछ राज्यों और क्षेत्रों को विशिष्ट परिस्थितियों के कारण इस विधेयक को लागू करने से मुक्त रखना।
11. पंचायतों के अधिकार क्षेत्र में आने वाले 29 विषयों को सम्मिलित करते हुए संविधान में एक और अनुसूची (ग्यारहवीं) अनुसूची जोड़े जाने का प्रावधान।

यद्यपि संविधान का 64वां संविधान संशोधन विधेयक ग्रामीण विकास की प्रक्रिया को और अधिक गतिशील बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम था किन्तु दुर्भाग्यवश यह संशोधन विधेयक पारित नहीं हो सका क्योकि राज्य सभा द्वारा इसका अनुमोदन नहीं किया गया।

73वां संविधान संशोधन 1992 :-

समितियों वर्कशॉप और सम्मेलनों में व्यक्त किये गये विचारों को ध्यान में रखते हुए केन्द्रीय सरकार ने संविधान में संशोधन करने का निर्णय लिया । ऐसा करना पंचायती राज के प्रति उपेक्षा और राज्य सरकारों के स्वेच्छाकारी निर्णयों पर प्रतिबन्ध लगाने के लिये आवश्यक समझा गया। परिणामस्वरूप संसद ने 22 दिसम्बर 1992 को ऐतिहासिक 73वां संविधान संशोधन

5. विधेयक द्वारा राज्य द्वारा विधायी शक्तियों एवं उत्तरदायित्वों को योजना बनाने तथा विकास योजनाओं के क्रियान्वयन के सम्बन्ध में, ग्राम पंचायतों को हस्तान्तरित करने का प्रावधान था।
6. पंचायतों के लिये सुदृढ़ वित्तीय व्यवस्था करना और राज्य के संचित निधि से अनुदान देने की व्यवस्था को निश्चित करना।
7. प्रत्येक राज्य के लिये हर पांच वर्ष पर वित्त आयोगों के गठन एवं विधानमण्डल को अनुशंसा के सम्बन्ध में प्रावधान करना।
8. पंचायतों के तीनो स्तरों के चुनाव का दायित्व निर्वाचन आयोग को सौपने का प्रावधान।
9. भारत के महालेखा परीक्षक एवं नियंत्रक को यह शक्ति प्रदान करना कि वे पंचायतों के लेखा की जांच की समुचित व्यवस्था कर सके।
10. कुछ राज्यों और क्षेत्रों को विशिष्ट परिस्थितियों के कारण इस विधेयक को लागू करने से मुक्त रखना।
11. पंचायतों के अधिकार क्षेत्र में आने वाले 29 विषयों को सम्मिलित करते हुए संविधान में एक और अनुसूची (ग्यारहवीं) अनुसूची जोड़े जाने का प्रावधान।

यद्यपि संविधान का 64वां संविधान संशोधन विधेयक ग्रामीण विकास की प्रक्रिया को और अधिक गतिशील बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम था किन्तु दुर्भाग्यवश यह संशोधन विधेयक पारित नहीं हो सका क्योकि राज्य सभा द्वारा इसका अनुमोदन नहीं किया गया।

73वां संविधान संशोधन 1992 :-

समितियों वर्कशॉप और सम्मेलनों में व्यक्त किये गये विचारों को ध्यान में रखते हुए केन्द्रीय सरकार ने संविधान में संशोधन करने का निर्णय लिया । ऐसा करना पंचायती राज के प्रति उपेक्षा और राज्य सरकारों के स्वेच्छाकारी निर्णयों पर प्रतिबन्ध लगाने के लिये आवश्यक समझा गया। परिणामस्वरूप संसद ने 22 दिसम्बर 1992 को ऐतिहासिक 73वां संविधान संशोधन

विधेयक पारित कर पंचायती राज को नयी दिशा देने का प्रयास किया। 17 राज्यों के विधान मण्डलों द्वारा इसकी पुष्टि किये जाने के उपरान्त 20 अप्रैल 1993 को राष्ट्रपति ने इस विधेयक को अपनी स्वीकृति प्रदान की । तत्पश्चात 24 अप्रैल 1993 को यह 73वें संविधान संशोधन अधिनियम के रूप में प्रवृत्त हो गया। इस अधिनियम द्वारा संविधान के भाग 9 में 16 अनुच्छेद तथा 11वीं अनुसूची जोड़ी गई। इस अधिनियम की प्रमुख विशेषतायें निम्न हैं -

1. 20 लाख से कम जनसंख्या वाले राज्यों को छोड़कर सभी राज्यों में पंचायती राज की त्रिस्तरीय प्रणाली लागू होगी ।
2. पंचायती राज संस्थाओं के सभी अंगों का कार्यकाल 5 वर्ष होगा। समय से पूर्व भंग होने की दशा में शेष अवधि के लिये छः माह के भीतर चुनाव का प्रावधान है।
3. पंचायत के लिये मतदाता सूची तैयार करने, चुनाव प्रक्रिया की देख-रेख, निर्देश एवं नियन्त्रण के लिये स्वतंत्र निर्वाचन आयोग को दायित्व सौंपा जायेगा।
4. अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति के लोगों को जनसंख्या के अनुपात में व महिलाओं के लिये एक तिहाई आरक्षण की व्यवस्था होगी।
5. पंचायती राज संस्थाओं की वित्तीय स्थिति की देख-रेख के लिये प्रत्येक राज्य में वित्त आयोग के गठन का प्रावधान है।
6. पंचायती राज संस्थायें आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिये नियोजन बना सकती हैं।
7. पंचायती राज के अंकेक्षण के लेखा-जोखा का दायित्व राज्य सरकार को दिया गया है।
8. पंचायती राज संस्थाओं को राज्य सरकार द्वारा अनुदान के रूप में वित्तीय सहायता प्राप्त होगी। पंचायतें पथकर और शुल्क आदि से अपनी आय में वृद्धि कर सकती हैं।

इस संशोधन अधिनियम में राज्य सरकारों से यह अपेक्षा की गई है कि अब वे इस संशोधन के आलोक में पंचायती राज संस्थाओं के विकास की दिशा में उचित

कदम उठायेंगी । इस सम्बन्ध में आन्ध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान आदि राज्यों ने पंचायती राज व्यवस्था का पुनर्गठन किया। कुछ राज्यों ने इस दिशा में संविधिक संशोधन किये जैसे- आसाम, बिहार, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, सिक्किम, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल और केरल आदि।

उत्तर प्रदेश में पंचायतों के विकास की प्रक्रिया उत्तर प्रदेश पंचायती राज अधिनियम 1947 से प्रारम्भ होती है। 73वें संविधान संशोधन के अनुक्रम में उत्तर प्रदेश पंचायत विधि (संशोधन) विधेयक 1994 से प्रदेश में प्रवृत्त हुआ जिसमें संयुक्त प्रान्त पंचायत राज अधिनियम 1947 तथा उत्तर प्रदेश क्षेत्र समिति तथा जिला परिषद अधिनियम 1961 में संशोधन कर राज्य को तीनों स्तर की पंचायत संस्थाओं में एकरूपता लाने, पंचायतों का संगठन, संरचना, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़े वर्ग और महिलाओं के लिये आरक्षण, पंचायतों के निश्चित कार्यकाल, निर्वाचन आयोग तथा वित्त आयोग की स्थापना, पंचायतों के कार्य, शक्तियों एवं उत्तरदायित्व के सम्बन्ध में व्यापक व्यवस्था की गई है। इस नयी पंचायत व्यवस्था के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश में पंचायत संस्थाओं के पहले चुनाव अप्रैल-मई 1995 में सम्पन्न हुए। 5 वर्ष का एक कार्यकाल पूरा कर लेने के उपरान्त दूसरे कार्यकाल हेतु निर्वाचन मई-जून 2000 में समयानुसार सम्पन्न हुए। वर्ष 2005 में नई व्यवस्था के अन्तर्गत तीसरी बार पंचायत चुनाव हो चुके हैं।

अध्याय-3

राजनीतिक सहभागिता

- राजनीकि सहभागिता की प्रकृति
- राजनीतिक सहभागिता के सिद्धान्त
- सहभागिता के विविध रूप
- लोकतन्त्र एवं राजनीतिक सहभागिता
- नई पंचायत व्यवस्था एवं राजनीतिक सहभागिता

राजनीतिक सहभागिता

आधुनिक युग की राजनीतिक प्रणालियों को प्रमुख रूप से दो प्रतिमानों में वर्गीकृत किया जा सकता है। एक वर्ग में लोकतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं को और दूसरे में निरंकुश व स्वेच्छाचारी प्रणालियों को रखा जा सकता है। शासन व्यवस्थाओं का यह वर्गीकरण मूलतः राजनीति में जन सहभागिता पर आधारित होता है। यद्यपि राजनीतिक सहभागिता प्रत्येक प्रकार की राजनीतिक व्यवस्था का अनिवार्य संघटक है किन्तु लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं में यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका में होता है। अरस्तू ने राज्यों का वर्गीकरण भी मोटे तौर पर इसी आधार पर किया था। वह एक व्यक्ति के शासन को राजतंत्र, कुछ लोगों के शासन को कुलीनतंत्र और बहुमत के शासन को ''पोलिटी' कहता है। इन्हीं के विकृत रूप को उसने क्रमशः आततायों तंत्र, धूनिकतंत्र व भीडतंत्र का नाम दिया है। अरस्तु से लेकर आज तक शासन प्रणालियों के वर्गीकरण में राजनीतिक सहभागिता को आधार बनाया जाता रहा है। एस.ई.फाइनर ने शासन व्यवस्थाओं को सहभागिता अपवर्जन या विलगन आयाम के आधार पर वर्गीकृत करके उसकी वास्तविक प्रकृति को समझने का प्रयत्न किया है। इसमें फाइनर यह देखता है कि शासन प्रक्रिया में जनता कितनी सहभागी है या उसे कितना इस प्रक्रिया से वंचित रखा गया है। स्पष्ट है कि अधिक सहभागिता वाली व्यवस्थायें लोकतांत्रिक और इससे दूर शासन को निरंकुश अथवा स्वच्छेचारी माना जा सकता है।

यद्यपि अधिकांश देशों में राजनीतिक शक्ति व सत्ता सीमित लोगों में ही सीमित रहती है, फिर भी सत्ताधारी व्यक्ति जनसाधारण की राजनीतिक सक्रियता व सहभागिता में वृद्धि के लिये प्रयास करते हैं। इससे राजनीतिक सत्ता की वैधता को बल मिलता है और राजनीतिक व्यवस्था में स्थायित्व और निरन्तरता बनाये रखा जाता है। राजनीतिक सहभागिता से वंचित समाज में लोगों में आक्रोश पनप सकता है, जो कि विस्फोटक हो सकता है। अधिक राजनीतिक सहभागिता राजनीतिक व्यवस्था में अधिक संचार को संभव बनाती है और अधिक संचार शासन

को सरल, सुगम, सर्वसुलभ व सर्वहितकारी बनाता है। इस प्रकार आज लोकतंत्रों का प्रमुख आधार है - राजनीतिक सहभागिता । किसी भी लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था की सफलता या असफलता इस एक तत्व पर निर्भर करती है। जिस राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक सहभागिता का स्तर जितना ही ऊंचा होगा, लोकतंत्र उतना ही अधिक सफल होगा। इससे स्पष्ट है कि आधुनिक राज व्यवस्थाओं की प्रकृति, कार्यप्रणाली, कार्यक्षमता और प्रभावशीलता को समझने में राजनीतिक सहभागिता की निर्णायक भूमिका है।

सामान्य रूप से व्यक्ति के राजनीतिक क्रियाओं में आवेष्टन या उलझाव को ही राजनीतिक सहभागिता कहा जाता है । व्यक्ति की राजनीतिक क्रिया लगातार हो सकती है, कभी-कभी हो सकती है या फिर कुछ क्रियायें एक बार ही हो सकती हैं, किन्तु हर स्थिति में यह व्यक्ति की ऐसी क्रिया है जिसका सीधा प्रभाव राजनीतिक समाज की संक्रियात्मकता पर पड़ता है। व्यक्ति की ऐसी क्रिया ही व्यक्ति को राजनीति में सहभागी बनाती है, यही व्यक्ति की राजनीतिक सहभागिता है। अतः हम कह सकते है कि राजनीतिक सहभागिता नागरिकों व प्रजाजनों के वे कार्य वे गतिविधिया हैं जिनसे राजनीतिक व्यवस्था की निर्णयकारी प्रक्रिया प्रभावित व निरूपित होती है। इससे यह स्पष्ट है कि सहभागिता की अवधारणा प्रायः दृष्टिकोणों एवं अभिवृत्तियों से सम्बन्धित नहीं होती है, उसका क्षेत्र केवल गतिविधियों से हैं। वास्तव में राजनीतिक सहभागिता में कई बातें सम्मिलित होती हैं किन्तु उनमें विविधता के बावजूद सभी प्रकार की सहभागिता में कार्य होता है, अतः उसमें इस प्रकार का निर्णय करना अन्तर्ग्रस्त है, जो विभिन्न कार्यो में से किसी एक को छांटना है। इस दृष्टि से "सहभागिता एक विवेकपूर्ण कार्य है क्योंकि इससे पूर्व सभी वैकल्पिक कार्यो की परीक्षा की जाती है और उसे छांटा जाता है जिससे सबसे अधिक उपयोगिता हासिल होने की आशा है"।[1] नार्मन एच.नीई और सिडनी वर्वा ने अपने लेख "पोलिटिकल पारटिसिपेशन" में राजनीतिक सहभागिता को परिभाषित करते हुए लिखा है कि "राजनीतिक

---

[1] रिकर और फ्रेडशोक, एन इन्ट्रोडक्शन टू पोजिटिव पोलिटिकल थ्योरी, पृ0 45

सहभागिता आम लोगों की वे विधिसम्मत गतिविधिया हैं जिनका उद्देश्य राजनीतिक पदाधिकारियों के चयन और उनके द्वारा किये जाने वाले निर्णयों को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करना होता है"।[1]

उपर्युक्त विवेचन से राजनीतिक सहभागिता के सम्बन्ध में निम्न पहलू स्पष्ट होते हैं :-

1. इसमें केवल कार्य या गतिविधियां सम्मिलित है, अभिवृत्तियां नहीं। कुछ विद्वान इसमें राजनीति की ओर नागरिकों के अभिमुखों को भी शामिल करते हैं। ऐसे विद्वानों में एप्टर का नाम प्रमुख है।
2. इसका सम्बन्ध नागरिकों की राजनीतिक गतिविधियों से है । कहा जा सकता है कि इसमें सरकार अधिकारियों, राजनीतिक दलों के अधिकारियों, विधायकों और व्यावसायिक पत्रकारों की गतिविधियों को शामिल नहीं किया जा सकता है।
3. इसका सम्बन्ध उसी गतिविधि से है जिसका उद्देश्य सरकार की निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित करना होता है।
4. इसमें स्वयं द्वारा तय किये गये उद्देश्यों के साथ-साथ दूसरों के द्वारा तय किये गये प्रयोजनों के आधार पर संचालित गतिविधियों को भी सम्मिलित किया जाता है।

आधुनिक लोकतंत्र में राजनीतिक सहभागिता का महत्व निम्न कारणों से बढ़ गया है :-

1. पूर्व में राज्य के कार्यों का क्षेत्र सीमित था । अब जबकि राज्य जनकल्याण से सम्बन्धित प्रत्येक कार्य करने लगा है, राजकीय कार्यो के सन्दर्भ में जन-जागरूकता व जनसहभागिता का महत्व बढ़ गया है।
2. आज का युग लोकतंत्र का युग कहा जाता है जिसमें सबको समान राजनीतिक अधिकार प्राप्त है। इन अधिकारों का सम्यक प्रयोग हो इसके लिये सक्रिय राजनीतिक सहभागिता आवश्यक है।

---

[1] उद्धृत, गेना, सी.बी. तुलनात्मक राजनीति" विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि. नई दिल्ली 1988 पृ0 416

3. आज प्रिन्ट मीडिया व इलेक्ट्रानिक मीडिया के प्रसार से जनता का राजनीतिक शिक्षण दर बढ़ा है, परिणामस्वरूप उनकी राजनीति में रूचि व सक्रियता भी बढ़ी है।

4. राजनीतिक सहभागिता के अधोलिखित उद्देश्यों के कारण भी इसका महत्व बढ़ा है।

   (i) सरकार के निर्णयों व कार्यो को राष्ट्रीय, प्रादेशिक व स्थानीय सभी स्तरों पर प्रभावित करना ।

   (ii) व्यक्तिगत व पारिवारिक कल्याण को प्रोत्साहित करना ।

   (iii) पड़ोस व नगर आदि में साथ रहने सम्बन्धी सुविधाओं को बढ़ाना ।

   (iv) प्राकृतिक विपदाओं का मिल-जुलकर प्रभावी ढंग से समाना करना ।

लोकतंत्र ''जनता का जनता के लिये व जनता के द्वारा शासन है '' अस्तु इसे वास्तव में जनता का शासन बनाने के लिये जनता के प्रति उत्तरदायी भी बनाये रखना आवश्यक है और यह तभी संभव होगा जब नागरिकों की राजनीति में सक्रियता व सहभागिता का स्तर उच्च रहे अन्यथा शासन का स्वरूप लोकतांत्रिक होते हुए भी शासक जनभावनाओं की उपेक्षा करते हुए स्वेच्छाधारी ढंग से कार्य कर सकते हैं।

राजनीतिक सहभागिता की प्रकृति

राजनीतिक सहभागिता की परिभाषाओं से ही स्पष्ट हो जाता है कि व्यक्ति की एक विशेष प्रकार की गतिविधि अर्थात उसकी राजनीतिक क्रिया ही राजनीतिक सहभागिता है। इससे स्पष्ट है कि राजनीतिक सहभागिता में राजनीतिक व्यवस्था के लोगों की राजनीतिक गतिविधियां ही आती हैं, हित समूहों, दबाब समूहों, राजनीतिक दलों या राज व्यवस्था में भागीदार अन्य अभिकरणों की भूमिका या उनकी राजनीतिक गतिविधियों को राजनीतिक सहभागिता में शामिल नहीं किया जाता है। इनसे व्यक्ति राजनीति में गतिविधियों का सम्पादन करता है अतः ये व्यक्ति की राजनीतिक सहभागिता के माध्यम अथवा साधन हैं, स्वयं इनकी गतिविधियों को राजनीतिक सहभागिता नहीं कहा जा सकता।

प्रत्येक प्रकार की और प्रत्येक संरचनात्मक व्यवस्था की राजनीतिक गतिविधि को भी राजनीतिक सहभागिता नहीं कहा जा सकता । यह अवधारणा व्यक्ति आधारित है और इसके केन्द्र में केवल व्यक्ति है। इसमें व्यक्ति ही मुख्य है । किसी भी देश के नागरिकों की ऐसी क्रियाओं को ही राजनीतिक सहभागिता का नाम दिया जा सकता है जो शासन तंत्र की निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित करती हैं। राजनीतिक सहभागिता में व्यक्ति की राजनीति में सक्रिय भागीदारी होती है।

कुछ विचारकों ने राजनीतिक सहभागिता को व्यापक संकल्पना के रूप में स्वीकार किया है। ऐप्टर ने इसमें जन परियोजना को भी सम्मिलित किया है। इससे राजनीतिक सहभागिता में नागरिकों के राजर्नीति की ओर दृष्टिकोण और झुकाव भी शामिल हो जाते हैं, किन्तु ऐप्टर की इस मान्यता को स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि जन परियोजना राजनीतिक सहभागिता में जनता को प्रवृत्त करना है।[1]

आमण्ड व पावेल ने ''हित एकीकरण' व 'हित अभिव्यक्ति' में राजनीतिक सहभागिता का विवेचन करते हुए राजनीतिक दलों व दबाब समूहों के कार्यो को भी राजनीतिक सहभागिता में शामिल किया है। उनका मानना है कि चूंकि व्यक्ति अपने राजनीतिक कार्य इन्हीं के माध्यम से सम्पादित कर पाता है अस्तु ये भी राजनीतिक सहभागिता के क्रिया कारक माने जाने चाहिये। राजनीतिक दलों व दबाब समूहों के माध्यम से ही व्यक्ति का राजनीतिक समाजीकरण होता है और व्यक्ति का राजनीति के प्रति रूझान तय होता है, उसकी राजनीतिक भर्ती और राजनीतिकरण होता है। उसकी राजनीति के प्रति यह रूचि, रूख व दृष्टिकोण ही उसकी राजनीतिक गतिविधि का आधार होता है । अतः कुछ विद्वान राजनीतिक सहभागिता में दलों व दबाब समूहों की गतिविधियों को भी सम्मिलित करते हैं। किन्तु वस्तुतः ये दोनों ही राजनीतिक सहभागिता के प्रेरक मात्र हैं। इनसे राजनीतिक सहभागिता की तीव्रता व उग्रता का नियमन होता है। इन्हें स्वयं राजनीतिक सहभागिता के कारक नहीं बल्कि उसके प्रेरक के रूप में ही स्वीकार

[1] गेना, सी.बी. पूर्वोक्त, पृ0 417

किया जा सकता है। अतः केवल व्यक्ति के राजनीतिक कार्यो को ही राजनीतिक सहभागिता कहा जा सकता है, दल, समूह आदि के कार्यो को नहीं ।

सहभागिता के सिद्धान्त

सहभागिता के सम्बन्ध में सिद्धान्त निर्माण में अनेक कठिनाइयां हैं तथा सहभागिता से सम्बन्धित आंकड़े एकत्र कर लेने के बाद भी उनका विश्लेषण करना तथा उन विश्लेषणों के आधार पर सिद्धान्त निर्माण करना उतना ही कठिन है जितना कि सहभागिता सम्बन्धी आँकड़े एकत्र करके उनका सामान्यीकरण करना। इसका कारण यह है कि सहभागिता का स्तर समय व परिस्थिति के अनुसार बदलता रहता है। एक राज्य में सहभागिता के कारक दूसरे राज्यों के कारकों से भिन्न होते हैं तथा एक ही राज्य में एक समय में किसी विशेष कारक के कारण सहभागिता स्तर ऊंचा हो सकता है, वही कारक दूसरे समय में सहभागिता के नवीन स्तर का निर्धारण कर सकता है।

बुडवर्ड तथा रोवर ने अमेरिकी चुनाव प्रक्रिया के सम्बन्ध में सहभागिता के कई पहलुओं का उल्लेख किया है किन्तु उनका लेख वर्णनात्मक है जिन पर सिद्धान्तों का निर्माण सम्भव नहीं है, फिर भी उन्होंने इस सम्बन्ध में कुछ निष्कर्ष निकाले हैं जो सामान्य रूप से स्वीकार किये जा सकते हैं, जैसे -

1. शिक्षा स्तर और सहभागिता स्तर परस्पर सम्बन्धित हैं तथा उच्च शिक्षा स्तर सहभागिता के स्तर को ऊंचा रखता है।
2. आर्थिक सम्पन्नता भी सहभागिता स्तर को प्रभावित करती है अर्थात आर्थिक स्थिति और सहभागिता स्तर परस्पर और प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित हैं। रोपर ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि जो देश आर्थिक रूप से जितना पिछड़ा होता है उसमें सहभागिता का स्तर निम्न रहता है। यह भी स्पष्ट है कि इन देशों में अमीर और गरीब के बीच आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक दृष्टि से अन्तर होता है।

इसके साथ ही वे यह भी मानते हैं कि आर्थिक दृष्टि से गरीब व्यक्तियों के मध्य, कम शिक्षित व्यक्तियों के मध्य उदासीनता उच्च श्रेणी का होता है। इस सम्बन्ध में काज एवं लेजारफेल्ड ने स्पष्ट किया है कि जिन देशों में सहभागिता का स्तर उच्च श्रेणी का पाया जाता है, उन देशों की पद्धति में विकासात्मक परिवर्तन संवैधानिक तरीके से ही होता है । जहां राजनीति के प्रति उदासीनता होती है वहां व्यवस्था व संविधानवाद में अविश्वास प्रकट किया जाता है। ऐसे देशों में न केवल समाजीकरण के सिद्धान्त हिंसात्मक होते हैं बल्कि हिंसक प्रदर्शनों के माध्यम से ही नागरिक अपने विरोध मतों को प्रकट करते हैं। हिंसा ऐसे देशों में जीवन का अंग बन जाती है। परिणामस्वरूप निर्वाचन व्यवस्था में विश्वास नहीं रहता और शासन तथा प्रशासन की सम्पूर्ण रूपरेखा लोकतांत्रिक नहीं रह जाती ।

काम्पबेल, गुरई और मिलर ने अपने अध्ययन " Sense of Political Efficacy and Political Participation" में राजनीतिक सहभागिता व उसको प्रेरणा देने वाले कारक के बीच निकट का सम्बन्ध स्थापित किया है -

1. राजनीतिक दृष्टि से कौन सक्रिय है ?
2. सहभागिता में भाग न लेने वाले कौन हैं ?
3. राजनीतिक उदासीनता क्यों है ?
4. राजनीतिक प्रभावोत्पादकता की भावना

वास्तव में अलग-अलग राज्यों में राजनीतिक सहभागिता का महत्व भिन्न-भिन्न होता है । अमेरिकी समाज राजनीतिक सहभागिता को बहुत ही महत्वपूर्ण मानता है, यही कारण है कि वहां संघों की संख्या बहुत बड़ी है। गुन्नार मिर्डाल ने सामाजिक आर्थिक पिछड़ेपन और असमानता के बीच सम्बन्ध के बारे में प्रचलित मत को प्रकट करते हुए लिखा है कि "बहुधा यह देखा गया है मानों कि इस प्रकार का आर्थिक कानून बन गया है, कि कोई देश जितना निर्धन होता है वहां धनवान और निर्धन के बीच उतना ही बड़ा अन्तर होता है।" एम.एस.लिप्सैट और डी. लर्नर ने भी स्वीकार किया है कि आर्थिक विकास और प्रजातंत्र के बीच व सामाजिक आर्थिक आधुनिकीकरण एवं राजनीतिक सहभागिता के बीच निश्चित सम्बन्ध होता है।

आधुनिक राष्ट्रीय राज्य चाहे प्रजातंत्रात्मक हो या अधिनायक तन्त्री, उसमें बहुदलीय पद्धति हो या एकदलीय पद्धति, चाहे वह व्यक्तिवाद समर्थक हो या समाजवादी, नागरिकों को शासन के निकट लाने का प्रयास करता है और उन्हें राजनीतिक कार्यो में सहभागी होने के लिये प्रेरित भी करता है। राज्य यह चाहता है कि व्यक्ति केवल अपने स्थानीय समुदाय, कबीले और परिवार को ही न जाने, बल्कि वह राष्ट्र को जाने और अपने को उससे अलग न समझे । इस सम्बन्ध में यह अपेक्षा की जाती है कि इस प्रकार की नयी जानकारी से नागरिकों की निष्ठा में भी परिवर्तन आयेगा। स्थानीय व प्रादेशिक भावना के स्थान पर उसमें राष्ट्रीय भावना का विकास होगा तथा नागरिकों में राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित संस्थाओं के प्रति निष्ठा उत्पन्न होगी । वर्तमान समय की यह एक महती आवश्यकता है कि नागरिक अपने पारिवारिक या स्थानीय नेतृत्व का अनुगमन न कर व्यापक आधार पर राष्ट्रीय दृष्टिकोण को अपनावें और इस उद्देश्य की पूर्ति उनकी राजनीति में सहभागिता वृद्धि से ही संभव है। कोई भी आधुनिक सरकार निष्क्रिय नागरिक को महत्व नहीं देती । प्रत्येक सरकार सक्रिय नागरिकता को प्रोत्साहित करती है। श्रेष्ठ नागरिकों से अपेक्षा की जाती है कि वे सार्वजनिक मामलों के संचालन में सक्रिय रूप से सहभागी हो। अधिनायकतंत्री व सर्वाधिकारवादी पद्धतियों में भी जहां राज्य की नीति को यथार्थ में प्रभावित करने के लिये नागरिकों की स्वतंत्रता अत्यन्त सीमित होती है, राज्य यह दिखाने का प्रयत्न करता है कि वह सामान्य इच्छा को अभिव्यक्त करता है और सभी नागरिकों को राजनीतिक कार्यो में भाग लेने के लिये प्रेरित करता है , चाहे वह केवल दिखावे के लिये ही हो । वस्तुतः राजनीति में नागरिकों की सहभागिता किसी भी राजव्यवस्था में सत्ता की वैधता का आधार होता है। इससे न केवल सत्ता को अर्जित किया जा सकता है बल्कि उसे स्थिर बनाये रखने में भी मदद मिलती है। यह जन सहभागिता ही है जो किसी भी व्यवस्था के स्थायित्व और अखण्डता की गारण्टी होता है तथा लोकतंत्र की दशा एवं दिशा तय करता है। राजनीतिक सहभागिता की मात्रा के आधार पर ही किसी राज व्यवस्था के लोकतांत्रिक आयाम का निर्धारण किया जा सकता है।

सहभागिता के विविध रूप

किसी भी देश में राजनीतिक सहभागिता प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचन सम्बन्धी गतिविधियों में भाग लेने से सम्बन्धित होती है। निर्वाचन में मतदान करना, चन्दा देना, चुनाव अभियान (प्रचार) आदि में भाग लेना तथा ऐसे कार्य करना जिनका उद्देश्य चुनाव परिणाम को प्रभावित करना हो, ये सब चुनाव सम्बन्धी गतिविधियों में आती है। राजनीतिक सहभागिता के निर्धारण के सम्बन्ध में इन्हीं गतिविधियों की मात्रा का विश्लेषण किया जाता है। इसके अतिरिक्त विधायकों पर ''लाबिंग'' अथवा अन्य प्रकार से प्रभाव डाल कर निर्णय निर्माण प्रक्रिया को प्रभावित करने की क्रिया भी इसके अन्तर्गत सम्मिलित की जाती है।

इसी प्रकार निर्णयकारी प्रक्रिया को प्रभावित करने के उद्देश्य से संचलित संगठनात्मक गतिविधियों को भी इस विश्लेषण में शामिल किया जाता है किन्तु शासकीय अधिकारियों और राजनेताओं से सम्पर्क स्थापित करने की क्रिया सहभागिता के विश्लेषण में नहीं आती है जबकि ये निर्णय निर्माण की प्रक्रिया को प्रभावित करती है। इसी प्रकार हिंसात्मक गतिविधियां, मांगों को प्रस्तुत करने, एवं निर्णय निर्माण क्रिया को प्रभावित करने में सहायक सिद्ध होती है, किन्तु इन्हें भी सहभागिता विश्लेषण में शामिल नहीं किया जा सकता ।

प्रशासन में भाग लेने तथा औपचारिक व अनौपचारिक संगठनों के निर्माण की क्रिया भी सहभागिता स्तर के निर्माण में सहायक होती है । साथ ही प्रशासन भी यह प्रयत्न करता है कि वह अपने कार्यों को वैधता की दृष्टि से नागरिकों के विशेष समूह से सम्बन्ध स्थापित कर लें। इस रूप में मंत्रणा, सहयोग एवं सम्बन्धित होने को सहभागिता में महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है।

माइसकीन ने दो प्रकार की सहभागिता का वर्णन किया है - एक ऐसी सहभागिता जो सरकार के आदेशों के अधीन संगठनों का निर्माण करते प्राप्त की गई हो जिसे वह मिडेलाइज्ड सहभागिता कहता है तथा दूसरी ऐसी सहभागिता जो स्वतंत्र हो, स्वशासी हो जिसे वह स्वशासी सहभागिता कहता है। कीन के अनुसार दोनों के मध्य सैद्धान्तिक अन्तर है किन्तु

वास्तविकता भिन्न है क्योंकि प्रायः हर देश में हर सरकार यह प्रयत्न करती है कि वह अपने कार्यक्रम में अधिक से अधिक नागरिकों का समर्थन प्राप्त करें और यह तभी सम्भव है जबकि न केवल निर्णय निर्माण क्रिया में नागरिकों को सहभागी बनाया जाय बल्कि कार्यक्रमों को लागू करने में तथा उनको व्यावहारिक रूप देने में भी नागरिकों का सहयोग प्राप्त किया जाय। उसके अनुसार प्रथम प्रकार की क्रिया स्वशासी है और दूसरी प्रकार की चालित है। सहभागिता के ये दोनो ही रूप महत्वपूर्ण हैं क्योंकि इन दोनों के मध्य एक गतिशील सम्बन्ध पाया जाता है।

किसी भी राजनीतिक व्यवस्था में यदि हम उस व्यवस्था के लोगों की राजनीतिक गतिविधियों का संज्ञान ले तो सामान्य रूप से हमें दो प्रकार के व्यक्ति दिखाई देंगे - एक जो राजनीति में सक्रिय रूप से सहभागी होते हैं और दूसरे जो प्रायः राजनीतिक के प्रति उदासीन ही रहते हैं । इन दोनों ही प्रकार के लोगों की राजनीतिक सहभागिता में मात्रात्मक अन्तर होते हैं। मिलब्राथ ने इन मात्रात्मक अन्तरों का उल्लेख करते हुए कहा है कि राजनीति से अलग लोगों के अतिरिक्त राजनीति में सहभागी लोग तीन प्रकार के होते हैं। प्रथम प्रकार के लोगों की राजनीतिक सहभागिता औपचारिक ही होती है। ऐसे व्यक्ति पूरी तरह से राजनीति से अलग तो नहीं होते किन्तु राजनीति में उनका लगाव कमतर ही होता है। ऐसा व्यक्ति सामान्यतया राजनीति का ऐसा दर्शक रहता है, जो खेल में शामिल नहीं होता किन्तु उसमें परोक्ष रूप से सहभागी अवश्य होता है। इसे राजनीतिक सहभागिता में दर्शक गतिविधियां कहा जा सकता है । इसके अन्तर्गत निम्न कार्य किये जाते हैं :-

1. मतदान में भाग लेना
2. राजनीतिक विषयों पर वार्ता प्रारम्भ करना
3. अपने वाहन, भवन अथवा कपड़ों के ऊपर किसी राजनीतिक दल का चिन्ह चिपकाना अथवा ध्वज लगाना
4. दूसरे व्यक्तियों के मतदान व्यवहार को किसी के पक्ष में परिवर्तित करने के लिये प्रयास करना
5. राजनीतिक प्रेरणा से विरक्त न होना आदि ।

इन कार्यो से स्पष्ट है कि किसी भी राज-व्यवस्था की अधिकांश जनता इसी प्रकार की राजनीतिक सहभागिता तक सीमित रहती है। वे राजनीति से न तो अलग होते हैं और न ही उसके सक्रिय पात्र होते हैं।

दूसरे प्रकार के लोगों की राजनीतिक सक्रियता साधारण से कुछ अधिक होती है। ऐसी गतिविधियों को संक्रान्तिक गतिविधियां कह सकते हैं जिसमें निम्न गतिविधियों को सम्मिलित किया जा सकता है -

1. राजनीतिक बैठकों, प्रदर्शनों व रैलियों में भाग लेना
2. राजनेताओं से निकट व विशिष्ट सम्पर्क
3. किसी प्रत्याशी अथवा राजनीतिक दल को वित्तीय सहायता प्रदान करना ।

इस संक्रांतिक गतिविधि में लिप्त व्यक्ति की राजनीति में सक्रियता अधिक व गम्भीर किस्म की होती है और व्यक्ति स्वयं को राजनीति से वास्तविक रूप से सम्बद्ध कर लेता है।

तीसरी श्रेणी में पेशेवर राजनीतिज्ञों को सम्मिलित किया जाता है, राजनीति ही जिनका पेशा बन जाता है। इनके जीवन के तमाम कार्यो में राजनीति ही सर्वप्रमुख कार्य रह जाता है। इनके द्वारा प्रमुख रूप से निम्न कार्य किये जाते हैं :-

1. राजनीतिक मंचो का संचालन,
2. राजनीतिक प्रचार प्रसार,
3. अपने राजनीतिक दल के लिये सदस्य बनाना व चंदा एकत्र करना
4. दल की बैठकों में भागीदारी,
5. निर्वाचन में उम्मीदवारी
6. सार्वजनिक पद (मंत्री आदि) धारण करना
7. दल के संगठनात्मक पदों को धारण करना व दल की गतिविधियों का नियंत्रण व संचालन

तीसरी श्रेणी के व्यक्तियों की राजनीतिक गतिविधियों को लड़ाकू गतिविधियां कहा जा सकता है जिसमें राजनीति व्यक्ति के जीवन मरण का प्रश्न बन जाता है। यद्यपि ये गतिविधियां व्यक्ति विशेष की राजनीतिक सहभागिता से सम्बन्धित हैं फिर भी भारत जैसे देश में, जहां राजनीति में परिवारवाद का बोलबाला है, राजनीति में सफल व्यक्ति अपने पूरे परिवार के सदस्यों को राजनीतिक पेशे में खींच लाता है। चुनावों में सीटों के आवंटन के समय प्रभावशाली राजनेताओं का प्रायः यही प्रयास रहता है कि उनके पत्नी, पुत्र, पुत्री अथवा भाई-भतीजों को अधिक से अधिक टिकट मिलें। यह स्थिति प्रायः सभी राजनीतिक दलों में देखने को मिलती है। निश्चय ही यह लोकतंत्र का विकृत रूप है। यदि यही परम्परा जारी रही और भारतीय राजनीति में ''वंशवाद'' व ''परिवारवाद'' की जड़े गहरी होती गई तो राजनीतिक सहभागिता की ''लडाकू गतिविधियां'' राजनीतिक परिवारों की विशिष्ट विरासत बन कर रह जायेगी और जन सामान्य ''दर्शक गतिविधियों'' व ''संक्रान्तिक'' गतिविधियों तक सिमट कर रह जायेगा।

लोकतंत्र एवं राजनीतिक सहभागिता

वर्तमान युग लोकतंत्र का युग कहा जाता है क्योंकि आज समूचे विश्व में सर्वाधिक प्रचलित व लोकप्रिय शासन प्रणाली लोकतंत्र है । जो राज्य लोकतांत्रिक नहीं हैं वे भी स्वयं को किसी न किसी रूप में लोकतांत्रितक मूल्यों पर आधारित सिद्ध करने की चेष्टा करते हैं। यहाँ तक कि सर्वाधिकारवादी शासन वाले राज्य भी किसी न किसी रूप में स्वयं को लोकतांत्रिकवादी साबित करने से नहीं चूकते । लोकतंत्र ''जनता का जनता के लिये और जनता के द्वारा'' शासन है जिसमें स्पष्ट रूप से जन सहभागिता की अपेक्षा होती है।

लोकतन्त्र के दो रूप होते हैं - प्रत्यक्ष लोकतंत्र और अप्रत्यक्ष अथवा प्रतिनिध्यात्मक लोकतन्त्र । प्रत्यक्ष लोकतंत्र प्राचीन भारत के कुछ गणराज्यों व यूनान के एथेन्स जैसे नगर राज्यों में प्रचलन में रहा। वर्तमान में स्विटजरलैण्ड में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के कुछ उपकरणों का प्रचलन है। एक कैण्टन और चार अर्द्धकैण्टनों में प्रत्यक्ष लोकतंत्र का वास्तविक

स्वरूप प्रारम्भिक सभाओं (Landsgemeinde) के रूप में विद्यमान है, जहां प्रत्येक वयस्क नागरिक शासन कार्यो में प्रत्यक्ष रूप से भाग लेता है। वे वर्ष में एक बार विधायिका के रूप में एक स्थान पर एकत्र होते हैं व विधि निर्माण, वित्तीय निर्धारण व प्रशासकीय चुनाव आदि कार्यो को सम्पादित करते हैं । किन्तु अधिकांश बड़े भौगोलिक क्षेत्र व विशाल जनसंख्या वाले राज्यों में लोकतन्त्र का यह प्रतिमान व्यवहार्य नहीं है।

अस्तु लोकतंत्र का प्रतिनिध्यात्मक स्वरूप ही आज सर्वाधिक व्यवहार्य प्रणाली है। लोकतंत्र की यह आधुनिक अवधारणा आधुनिक परिस्थितिों की देन है, जिसमें जनता अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से राज्य के शासन का संचालन करती है। लगभग सोलहवीं शताब्दी से विश्व के सामाजिक आर्थिक राजनीतिक, धार्मिक व सांस्कृतिक जीवन में ऐसे परिवर्तन प्रारम्भ हुए जिसमें मध्य युगीन सामन्ती प्रणाली का पतन हुआ और "व्यक्ति" या "मानव" को सब जगह नई प्रतिष्ठा मिली। सत्रहवीं शताब्दी में अंग्रेज विचारक जॉन लॉक ने यह विचार व्यक्त किया कि मनुष्य के कुछ प्राकृतिक अधिकार होते हैं जिन्हें उससे कोई छीन नहीं सकता। इन्हीं अधिकारों की रक्षा के लिये काननू राज्य और शासन की संस्थायें स्थापित की जाती है। लॉक ने यह तर्क दिया कि व्यक्ति परस्पर सहमति से राज्य का निर्माण करते हैं और शासन व्यवस्था स्थापित हो जाने के बाद भी वे निश्चित नहीं होते बल्कि सरकार के काम की निगरानी करते हैं। सरकार को अपनी सत्ता के प्रयोग के लिये नागरिकों के "सहमति" की आवश्यकता होती है। इस प्रकार आधुनिक प्रतिनिध्यात्मक लोकतंत्र सीधे-सीधे "जनता का शासन" नहीं है। इसमें जनसाधारण निम्न दो माध्यमों से अपनी सत्ता का प्रयोग करते हैं -

1. वे ऐसे लक्ष्य निर्धारित करते हैं, जिनकी पूर्ति करना उनकी सरकार का उद्देश्य होना चाहिये और
2. वे उन लोगों की निगरानी करते हैं जिनके हाथों में वे शासन की बागडोर सौप देते हैं।

डेविड ईस्टन के व्यवस्था सिद्धान्त के परिप्रेक्ष्य में देखा जाय तो नागरिकों को व्यवस्था के निवेश, शासन के निर्गतों व पुनर्निवेश तीनों के प्रति सचेत, सचेष्ट व जागरूक रहना

पड़ता है। अपनी इस राजनीतिक जागरूकता व सक्रियता से ही जनसाधारण शासन को जनकल्याण की ओर उन्मुख बनाये रख सकता है और राजनीतिक सामाजीकरण की प्रक्रिया सही दिशा में संचालित हो सकती है और यह सब तभी संभव होगा जब जनसामान्य राज्य की राजनीति में सहभागी बने ।

इस प्रकार राजनीतिक सहभागिता को लोकतंत्र का आधार माना जा सकता है। किसी भी राजव्यवस्था के लोकतांत्रिक स्वरूप का परिमापन उसमें राजनीतिक सहभागिता के आधार पर ही किया जा सकता है। यह स्वीकार किया जाता है कि लोकतंत्र की सफलता नागरिको की सहभागिता पर ही निर्भर करती है। सहभागिता जिनती अधिक होगी उतना ही लोकतन्त्र सफल माना जायेगा । यह जनता का जनता के द्वारा और जनता के लिये शासन तभी सिद्ध होगा, जब लोग इसमें अधिक से अधिक सहभागी होंगे। यह सहभागिता व्यापक मताधिकार के माध्यम से संभव हो पाता है। लोकतांत्रिक व्यवस्था की कार्यात्मकता का आधार राजनीतिक व्यवस्था में जन सहभागिता ही मानी जाती है। किसी भी लोकतंत्र में जनता की उदासीनता उसे कमजोर बनाती है व सक्रियता लोकतंत्र के सफलता की गारंटी बनती है।

किन्तु किसी भी लोकतंत्र में जनसहभागिता की मात्रा कितनी होनी चाहिये, इस विषय पर विद्वानों में मतभेद हैं। मात्रात्मक आधार पर सहभागिता के तीन आयाम बताये गये हैं - दर्शक गतिविधियां, संक्रान्तिक गतिविधियां और लड़ाकू गतिविधियां । विद्वानों का एक वर्ग आम नागरिकों की राजनीतिक सहभागिता को दर्शक गतिविधियों तक ही सीमित रखना चाहते हैं। इन विद्वानों में जोसेफ शुंपीटर, सी.बी.मैम्फर्सन, विलफ्रेडों पैरेटो, गीतानो मोस्का, कार्ल मन्हाइन, रेमोंद आरो व सार्टोरी आदि के नाम प्रमुख हैं। इनका मानना है कि किसी भी समाज या संगठन के अन्तर्गत महत्वपूर्ण निर्णय केवल गिने चुने लोग ही करते हैं। चाहे उस संगठन का बाहरी रूप कैसा भी क्यों न हो। इस मत के समर्थक तर्क यह देते हैं कि किसी भी समाज में अधिकांश मनुष्य स्वभाव से जड़, आलसी व दास मनोवृत्ति वाले होते हैं जो शासन चलाने में समर्थ नहीं होते । इसलिये समाज में राजनीतिज्ञों का एक अभिजन वर्ग पैदा हो जाता है जो अपनी वाक्पाटुता व कौशल के बल पर सत्ता पर अधिकार कर लेता है। लोकतंत्र के इस सिद्धान्त को

विशिष्ट वर्गीय सिद्धान्त कहा जाता है। यह सिद्धान्त लोकतंत्र के ऐसे प्रतिरूप को मान्यता देता है जिसमें सम्पूर्ण समाज पर शासन करने के लिये दो या दो से अधिक विशिष्ट वर्गो में प्रतिस्पर्धा चलती रहती है। यहां नागरिक सहभागिता के निम्न स्तर को लोकतंत्र के सिद्धान्त के विरूद्ध नहीं समझा जाता, बल्कि उसे इसके लिये उपयुक्त माना जाता है क्योंकि इससे राजनीतिक प्रणाली सन्तुलन की अवस्था में बनी रहती है।

सी.बी.गेना का भी मानना है कि ''लोकतंत्र की सफलता के लिये व्यक्ति की ''दर्शक गतिविधियां'' ही निर्णायक होती हैं। राजनीतिक सहभागिता की अधिकता लोकतंत्र के लिये घातक ही होती है क्योंकि जन सहभागिता विधि सम्मत नहीं हो सकती। किसी भी देश के संविधान में इसकी व्यवस्था की संरचनात्मक व्यवस्था नहीं होती है। अतः राजनीतिक सहभागिता की अधिकता संविधानेतर साधनों से ही निष्पादित हो सकती है। इसमें जन-आन्दोलन, हिंसक विरोध, तोड़-फोड़, जोर-जबरदस्ती व विधि सम्मत साधनों का परित्याग कर सड़कों-बाजारों में धरना, घेराव और बंद आदि का बोलबाला रहता है। यह स्थिति लोकतंत्र के लिये घातक होती है और दुविधा यह हो जाती है कि यह सब लोकतंत्र को वास्तविक बनाने के लिये किए गये कार्य हैं जो वास्तव में लोकतंत्र का गला घोटने की स्थिति बन जाती है। विकासशील देशों में एक के बाद एक देश में यही जन सहभागिता का प्रातिमान लोकतंत्रों को चौपट करने वाला बना है। अतः लोकतंत्र की प्रभावकारी क्रियात्मकता के लिये जनता की सहभागिता ''दर्शक गतिविधियों'' सदृश या काफी कुछ व्यापक रहते हुए भी सीमित पैमाने की ही रहना अनिवार्य है।[1]

किन्तु इस मत को पूरी तरह स्वीकार नहीं किया जा सकता । सर्वप्रथम तो जलसा, तोड़-फोड़, हड़ताल, विरोध-प्रदर्शन, धरना, बहिष्कार आदि समस्त क्रियाओं को राजनीतिक सहभागिता की अभिव्यक्ति नहीं माना जाना चाहिये। राजनीतिक सहभागिता की मुख्य कसौटी यह है कि इस गतिविधि के बल पर कोई नागरिक सार्वजनिक नीति और निर्णयों को कहां तक प्रभावित कर पाता है ? दूसरे तोड़-फोड़, धरना प्रदर्शन, बहिष्कार, आन्दोलन व हड़ताल आदि का विध्वंसक रूप सामान्य रूप से विकासशील देशों में ही देखा जाता है, जहा राजनीति में सहभागिता

---

[1] गेना, सी.बी. पूर्वोक्त, प्रा.लि. 1999, पृ0 425

न्यून अथवा ''दर्शक गतिविधियों'' तक ही सीमित रहती है। ऐसा जनसामान्य की राजनीतिक उदासीनता, निष्क्रियता व अल्प राजनीतिक समाजीकरण के कारण नेताओं के भड़काऊ सन्देशों के कारण सम्भव हो पाता है। अधिक राजनीतिक सहभागिता लोकतंत्र के लिये घातक नहीं बल्कि उसकी साधक ही बनती है। विकसित राज्यों में यदि अधिक सहभागिता लोकतंत्र को सफल बना सकती है तो विकासशील राज्यों में भी यही तत्व लोकतंत्र को सुदृढ़ करने वाला सिद्ध होगा।

वास्तव में आम जनता की राजनीतिक सहभागिता ही लोकतंत्र का आधारभूत लक्षण है। राजनीतिक सहभागिता ऐसी गतिविधि है जिसके अन्तर्गत कोई व्यक्ति सार्वजनिक नीतियों और निर्णयो के निर्माण, निरूपण और कार्यान्वयन की प्रक्रिया में सक्रिय भाग लेता है। व्यापक अर्थो में यह किसी भी राजनीतिक व्यवस्था के अन्तर्गत किसी राजनीतिज्ञ, सरकारी अधिकारी या साधारण नागरिक की गतिविधि हो सकती है। यह गतिविधि चुनाव में मतदान, चुनाव प्रचार ,उम्मीदवारी अथवा सामुदायिक गतिविधियों के रूप में भी हो सकती है।

सामान्य रूप से अधिकांश विकासशील राज्यों में नागरिकों में राजनीतिक विषयों व समस्याओं के बारे में कम जानकारी का होना व निर्वाचन में मतदान के प्रति उदासीनता के कारण जन प्रतिनिधि अपने सार्वजनिक दायित्व से विमुक्त हो जाते हैं और सम्पूर्ण शासन प्रशासन में शक्ति के दुरूपयोग व भ्रष्टाचार का बोलबाला हो जाता है। यदि नागरिकों की राजनीतिक सहभागिता अधिक होगी तो वे सार्वजनिक समस्याओं से अधिक परिचित और उनके प्रति सचेत रहेगें और साथ ही अपने राजनीतिक प्रतिनिधियों पर भी नियंत्रणकारी दृष्टि रखेगें । ऐसे में शक्ति के दुरूपयोग व भ्रष्टाचार की प्रवृत्ति को कारगर तरीके से रोका जा सकता है। अतः राजनीतिक सहभागिता लोकतांत्रिक समाज की एक अनिवार्य आवश्यकता है। यही कारण है कि अधिकांश राज्यों द्वारा जन सहभागिता में वृद्धि के उद्देश्य से प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण कर स्थानीय लोगों को निर्णय प्रक्रिया में स्थानीय प्रशासन के माध्यम से भागीदार बनाया जा रहा है अथवा जनमत संग्रह जैसे उपायों का सहारा लिया जा रहा है। भारत में नयी पंचायत राज व्यवस्था इसी श्रंखला की एक महत्वपूर्ण कड़ी है।

किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था में सक्रिय जनसहभागिता के सामान्य रूप से निम्न लाभ होते हैं :-

1. यदि जनसामान्य राजनीतिक मामलों में दर्शक गतिविधियों से अधिक अर्थात संक्रान्तिक गतिविधियों तक सहभागी होता है तो वह शासन की निरंकुशता पर प्रभावी नियंत्रण आरोपित कर सकता है।
2. सक्रिय जन सहभागिता जनप्रतिनिधियों के स्वेच्छाचारी रवैय्ये पर रोक लगाती है। जन प्रतिनिधि मनमानी नहीं कर पाते । भारत जैसे विकाशसील राज्य में जनसहभागिता की कमी के कारण ही राजनीति में परिवारवाद, अपराधियों का प्रवेश, अवसरवादी दल-बदल व वोट बैंक की तुष्टि के लिये किये जाने वाले वायदे व कार्य आमतौर पर देखे जा सकते हैं।
3. सक्रिय जनसहभागिता एक सीमा तक शासन को भ्रष्ट होने से भी रोकती है। भ्रष्टाचारी प्रवृत्तियों पर इसके माध्यम से प्रभावी नियंत्रण लगाया जा सकता है।
4. सजग जागरूक नागरिक राजनीतिक सहभागिता के माध्यम से ही शासन को सही मायने में जनता के प्रति जागरूक बनाये रखते हैं।
5. इससे नीतिगत निर्णय को जनोनुकूल बनाने के प्रयास संभव हो पाते हैं।
6. राजनीतिक समाजीकरण व राजनीतिक शिक्षा की प्रक्रिया तीव्र होती है जिससे नेतृत्व के अधिक से अधिक विकल्प तैयार करना सहज हो जाता है।

भारत में राजनीतिक सहभागिता

भारत में राजनीतिक सहभागिता का मूल्यांकन स्वतंत्रता के पश्चात की राजनीतिक स्थितियों के संदर्भ में ही किया जा सकता है क्योंकि स्वतंत्रता से पूर्व शासन के निर्णय प्रक्रिया व राजनीतिक गतिविधियों में भारतीयों की भूमिका नगण्य ही थी । स्वतंत्रता के बाद से 1952 में पहले आम चुनाव हुए और तब से अब तक (2004 तक) लोकसभा के 14 चुनाव हो चुके हैं।

इन चौदह चुनावों में चुनाव-दर-चुनाव भारत में राजनीतिक सहभागिता में वृद्धि हुई है। 1952 के चुनावों से ही काफी लम्बे समय तक केन्द्र और राज्यों की राजनीति में कांग्रेस दल का वर्चस्व रहा। भारत बहुदलीय व्यवस्था वाला राज्य होते हुए भी एकदलीय प्रधानता वाला राज्य बना रहा। इसका कारण राजनीतिक समाजीकरण व राजनीतिक सहभागिता की कमी थी । कांग्रेस राष्ट्रीय आन्दोलन से जुड़ा हुआ सर्वप्रमुख दल था व महात्मा गांधी तथा नेहरू, पटेल व अन्य ऐसे ही जनप्रिय नेताओं की उपस्थिति के कारण इसकी पैठ जन-जन तक बनी हुई थी, परिणामस्वरूप भारतीय संसदीय लोकतंत्र के प्रारम्भिक चरण में उसे इसका लाभ मिला । किन्तु 1967 तक आते-आते कांग्रेस का यह तिलिस्म टूटने लगा। निश्चय ही इसके पीछे लोगों में बढ़ती हुई राजनीतिक चेतना और सहभागिता थी। "वोट हमारा राज तुम्हारा नहीं चलेगा" जैसे नारे इस तथ्य की एक अभिव्यक्ति मात्र थे। इस राजनीतिक चेतना के उभार के पीछ चाहे क्षेत्रीय कारण रहे हों या भाषाई अथवा जातिवादी, इसने व्यक्ति को राजनीति में घसीटने का काम किया और इससे निश्चय ही राजनीतिक सहभागिता में क्रमिक विकास संभव हो सका। इस स्थिति के लिये निम्न कारणों को उत्तरदायी माना जा सकता है :-

1. नये संविधान ने सार्वभौम वयस्क मताधिकार के सिद्धान्त को स्वीकार किया जिस कारण सभी वयस्क स्त्री-पुरूषों को चाहे वे किसी भी जाति या धर्म के हो मतदान करने व चुनाव में भाग लेने का अवसर मिला। प्रारम्भ में अधिकांश अशिक्षित, निर्धन व ग्रामीण जनता के लिये चुनाव में वोट देना मेले, हाट व खेल जैसा था किन्तु धीरे-धीरे उेस अपने मत का मूल्य समझ में आने लगा व वह विचारपूर्वक दल व प्रत्याशी का चयन करने लगा।
2. शिक्षण सुविधाओं के विकास से साक्षरता दर व शिक्षित व्यक्तियों की संख्या में वृद्धि से राजनीतिक जागरूकता में भी वृद्धि हुई ।
3. राजनीतिक दल अपने सिद्धान्तों, नीतियों व कार्यक्रमों का जनता में प्रचार-प्रसार करते रहे जिससे लोगों का पर्याप्त राजनीतिक शिक्षण हुआ और राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया तीव्र हुई ।

4. पंचायतीराज की संकल्पना के माध्यम से सत्ता का विकेन्द्रीकरण किया गया जिससे अधिक से अधिक लोगों को राजनीतिक गतिविधियों व निर्णय निर्माण प्रक्रिया में भाग लेने का अवसर मिला।
5. विभिन्न स्तरों पर होने वाले चुनावों में लोगों को अधिक से अधिक भाग लेने का अवसर मिला जिससे उनकी सक्रियता निरन्तर बढ़ती गई।
6. राजनीतिक दलों ने अपने संगठन को सुदृढ़ करने के लिये अधिक से अधिक सदस्य बनाने का प्रयास किया व राष्ट्रीय, प्रान्तीय मण्डल जनपद स्तर के संगठनात्मक ढांचों का निर्माण किया जिससे लोगों की रूचि राजनीतिक क्रियाकलापों में बढ़ी ।
7. आजादी के बाद विभिन्न दबाब समूहों, हित समूहों का भी उदय हुआ। इन समूहों की गतिविधियों ने भी राजनीतिक सहभागिता में वृद्धि की ।

उपर्युक्त कारणों से भारत में राजनीतिक सहभागिता के अवसरों में वृद्धि हुई तथा जन सामान्य की राजनीतिक गतिविधियों में दिलचस्पी भी बढ़ी। नये अभिजन समूहों का भी विकास हुआ जिनमें ग्रामीण, कृषक, पिछड़े व अनुसूचित जाति, जनजाति व महिलाओं के वर्ग शामिल थे। अभिजन समूहों में वृद्धि के साथ ऐसे लोगों की संख्या भी बढ़ी जिनके लिये राजनीति अब महत्वपूर्ण हो गई । फिर भी भारत की यह सहभागिता वृद्धि अभी संक्रमण काल में है क्योंकि अभी सहभागिता के महत्वपूर्ण कारकों में जाति , क्षेत्र, भाषा, धर्म या सम्प्रदाय प्रमुख हैं। नेता और मतदाता दोनों इन तथ्यों के प्रभाव में भ्रमित हैं और उनकी सहभागिता पूर्णतया राष्ट्रहित से प्रेरित नहीं है। किन्तु निश्चय ही आने वाले दिनों में संक्रमण की यह धुन्ध हट जायेगी और भारत एक विकसित राजनैतिक संस्कृति का निर्माण कर सकेगा।

नयी पंचायत व्यवस्था एवं राजनीतिक सहभागिता

विभिन्न राज व्यवस्थाओं द्वारा राजनीतिक सहभागिता वृद्धि के उद्देश्य से सत्ता का विकेन्द्रीकरण किया जाता है जिससे स्थानीय स्तर के मामलों में निर्णय प्रक्रिया में स्थानीय

लोगों को भागीदार बनाते हुए अधिक से अधिक लोगों को सम्पूर्ण राजनीतिक प्रक्रिया में सहभागी व उत्तरदायी बनाया जा सके। भारत में प्राचीन काल से ही ग्राम शासन की सबसे छोटी इकाई के रूप में स्थापित रहे हैं। स्वतंत्र भारत में बलवन्तराय मेहता समिति की सिफारिशों (1957) के आधार पर 1959 से ही त्रिस्तरीय पंचायत व्यवस्था की स्थापना की गई थी किन्तु यह व्यवस्था अपने लक्ष्य के अनुरूप कारगर सिद्ध नहीं हुई । पुनश्च 1992-93 में 73वें संविधान संशोधन द्वारा पंचायत व्यवस्था का नया संशोधित एवं प्रभावी प्रारूप प्रस्तुत किया गया जिसमें ग्राम पंचायतें स्थानीय शासन की सबल व सक्षम इकाइयों के रूप में उभरकर सामने आयी।

73वें संविधान संशोधन के आलोक में उत्तर प्रदेश में पंचायतीराज अधिनियम 1947 संशोधित द्वारा उ0प्र0 पंचायत विधि (संशोधन) अधिनियम 1994 पारित कर नयी पंचायत व्यवस्था लागू कर दी गई जिसमें समाज के हर वर्ग को शासन के इस स्तर पर सहभागी बनाने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत शोध के विषय ''महिलाओं की सहभागिता के मूल्यांकन से पूर्व ग्राम पंचायतों की रचना एवं शक्ति का उल्लेख अनिवार्य होगा, तभी इसके संदर्भ में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता का विशिष्ट मूल्यांकन संभव हो सकेगा।

ग्राम पंचायत की रचना एवं शक्ति

ग्राम पंचायत वर्तमान पंचायती राज व्यवस्था के सबसे निचले स्तर की इकाई है। राज्य सरकार, सरकारी गजट में अधिसूचना के द्वारा किसी ग्राम के या ग्रामों के समूह के लिए एक ग्राम पंचातय घोषित करेंगी । ग्राम पंचायत पहले ग्राम सभा की कार्यकारिणी समिति थी किन्तु अब यह ग्राम स्तर पर स्वशासी निगमित निकाय है जबकि ग्राम सभा अब ग्राम पंचायत के प्रादेशिक क्षेत्र के भीतर उस ग्राम सम्बन्धित मतदाता सूची में पंजीकृत व्यक्तियों से मिलकर बना निकाय मात्र है। पहले ग्राम सभा का प्रधान होता था जो पदेन ग्राम पंचायत का भी प्रधान होता था किन्तु अब प्रधान ग्राम पंचायत का अध्यक्ष होगा और वह ग्रामसभा का पदेन प्रधान होगा।

पहले ग्रामसभा 250 की आबादी पर गठित होती थी किन्तु अब यह व्यवस्था कर दी गई है कि सरकार जहां तक सम्भव हो एक हजार की आबादी पर किसी ग्राम या ग्राम समूह को राज्य सरकार पंचायत क्षेत्र घोषित कर सकती है।[1]

पंचायतों के पुर्नगठन के सम्बन्ध में निम्नलिखित निर्देश भी जारी किये गये हैं :-

1. किसी ग्राम पंचायत के प्रादेशिक क्षेत्र का पुर्नगठन करते समय किसी राजस्व ग्राम या इसके मजरे को तोड़ा नहीं जायेगा।[2]
2. किसी ग्राम पंचायत के प्रादेशिक क्षेत्र में केवल ऐसे ग्राम या मजरों को सम्मिलित किया जायेगा जो भौगोलिक दृष्टि से एक दूसरे से निकटस्थ हो तथा समान दूरी होने पर कम जनसंख्या वाली ग्राम सभा में संविलयन किया जाय।
3. ऐसे मजरे या ग्रामों को किसी पंचायत क्षेत्र में सम्मिलित करने में यह ध्यान रखा जाय कि इसके मध्य किसी दूसरी ग्राम पंचायत का कोई प्रादेशिक क्षेत्र न पड़ता हो।
4. ऐसे मजरों या राजस्व ग्रामों के बीच में कोई प्राकृतिक नदी या नाला, पहाड़ या अन्य कोई अवरोध उनके आवागमन में बाधक न हो।
5. ऐसे पंचायत क्षेत्र में सबसे अधिक आबादी वाले ग्राम या मजरे के नाम से ही उक्त ग्राम पंचायत क्षेत्र को जाना जायेगा।

सदस्य :-

प्रत्येक ग्राम पंचायत का एक प्रधान होगा और किसी पंचायत क्षेत्र की स्थिति में जिसकी जनसंख्या एक हजार तक हो, 9 सदस्य होगें, एक हजार से अधिक किन्तु दो हजार से अनाधिक हो, ग्यारह सदस्य होंगे, दो हजार से अधिक किन्तु तीन हजार से अनधिक हो, 13

---

[1] पंचायती राज अधिनियम 1947 संशोधित द्वारा उ.प्र. पंचायत निधि (संशोधन) अधिनियम 1994 की धारा 11(च)

[2] वही

सदस्य होंगे या तीन हजार से अधिक जनसंख्या होने पर 15 सदस्य होंगे।[1] ग्राम पंचायत के सदस्यों के निर्वाचन के प्रयोजन के लिये प्रत्येक पंचायत क्षेत्र को ऐसी रीति से प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों में विभाजित किया जायेगा कि प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र की जनसंख्या और उसको आवंटित स्थानों की संख्या के बीच अनुपात समस्त पंचायत क्षेत्र में यथासाध्य एक ही हो।[2] ग्राम पंचायत के प्रत्येक प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व ग्राम पंचायत में एक सदस्य द्वारा किया जायेगा।[3]

ग्राम पंचायत के प्रधान एवं सदस्यों के लिये अनर्हता :-

कोई भी व्यक्ति किसी ग्राम पंचायत का प्रधान या सदस्य चुने जाने के लिये अनर्ह होगा, यदि[4] -

1. वह राज्य विधान मण्डल के निर्वाचन के प्रयोजनों के लिये तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा या उसके अधीन अनर्ह हो किन्तु कोई व्यक्ति इस आधार पर अनर्ह नहीं होगा कि वह 25 वर्ष से कम आयु का है, यदि उसने 21 वर्ष की आयु प्राप्त कर ली हो।
2. वह ग्राम पंचायत या किसी न्याय पंचायत का वैतनिक सेवक हो।
3. वह किसी राज्य सरकार या केन्द्रीय सरकार या ग्राम पंचायत या न्याय पंचायत से भिन्न किसी स्थानीय प्राधिकारी या किसी राज्य सरकार या केन्द्रीय सरकार के स्वामित्वाधीन या नियंत्रणाधीन किसी बोर्ड, निकाय या निगम के अधीन लाभ का पद धारण करता हो।
4. वह किसी राज्य सरकार, केन्द्रीय सरकार या किसी स्थानीय प्राधिकारी या किसी न्याय पंचायत की सेवा से दुराचरण के कारण पदच्युत कर दिया गया हो।

---

[1] वही धारा 12(1) ग
[2] वही धारा 12(1) घ
[3] वही धारा 12(1) ङ
[4] वही धारा 5(क)

5. उस पर ऐसी अवधि के लिये जैसी नियत की जाय, ग्राम पंचायत, क्षेत्र पंचायत या जिला पंचायत का कोई कर, फीस, शुल्क जो कोई अन्य देय बकाया हो, या वह ग्राम पंचायत, न्याय पंचायत, क्षेत्र पंचायत या जिला पंचायत के अधीन कोई पद धारण करने के कारण प्राप्त उसके किसी अभिलेख या सम्पत्ति को उसे देने में, उसके द्वारा ऐसा किये जाने कि अपेक्षा किये जाने पर भी विफल रहा हो।

6. वह अनुन्योचित दिवालिया हो।

7. वह नैतिक अधमता के किसी अपराध के लिये दोष सिद्ध ठहराया गया हो।

8. उसे आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 के अधीन दिये गये किसी आदेश का उल्लघंन किये जाने के कारण 3 मास से अधिक की अवधि के कारावास का दण्ड दिया गया हो।

9. उसे ऐसेन्शियल सप्लाइज (टेम्पोरेटी पावर्स) एक्ट, 1946 या यू.पी. कन्ट्रोल ऑफ सप्लाई (टेम्पोरेटी पावर्स) एक्ट, 1947 के अधीन दिये गये किसी आदेश का उल्लघंन करने के कारण 6 मास से अधिक की अवधि के कारावास का या निर्वासन का दण्ड दिया गया हो ।

10. उसे उ.प्र. आबकारी अधिनियम, 1910 के अधीन 3 मास से अधिक की अवधि के कारावास का दण्ड दिया गया हो।

11. उसे स्वास्थ्य औषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम 1985 के अधीन किसी अपराध के लिये दोष सिद्ध ठहराया गया हो ।

12. उसे निर्वाचन सम्बन्धी किसी अपराध के लिये दोष सिद्ध ठहराया गया हो।

13. उसे उत्तर प्रदेश सामाजिक निर्योग्यताओं का निराकरण अधिनियम, 1947 या सिविल अधिकार संरक्षण अधिनियम 1955 के अधीन दोष सिद्ध ठहराया गया हो।

किन्तु उक्त 4, 6, 7, 8, 9, 10, 11, 12 व 13 के अधीन अर्हता कि अवधि ऐसे दिनांक से जिसे नियत किया जाये 5 वर्ष होगी। प्रतिबन्ध यह है कि जैसी भी स्थिति

हो, बकाया का भुगतान कर दिये जाने पर या अभिलेख या सम्पत्ति दिये जाने पर उक्त भाग 5 के अधीन अनर्हता नहीं रह जायेगी ।

निर्वाचन :-

ग्राम पंचायत के प्रधान तथा सदस्यों का निर्वाचन नियत रीति से गुप्त मतदान प्रणाली द्वारा कराया जायेगा। पंचातयों के निर्वाचन के लिये एक पृथक राज्य निर्वाचन आयोग के गठन की व्यवस्था की गयी है। राज्य निर्वाचन आयोग के निर्देशन, अर्धाक्षण तथा नियंन्त्रण में ही पंचायत चुनाव होगे, राज्य निर्वाचन आयोग के आयुक्त को जो कि राज्यपाल द्वारा नियुक्त किया जायेगा हटाने के लिये उसी प्रक्रिया का अनुसरण करना होगा जो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को हटाने के लिए किया जाता है।

निर्वाचन नामावली :-

ग्राम पंचायत के प्रत्येक प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र के लिये निर्वाचक नामावली, राज्य निर्वाचन आयोग के अधीक्षण, निर्देशन और नियन्त्रण के अधीन तैयार की जायेगी।[1] निर्वाचक नामावली नियत रीति से प्रकाशित हो जाने के बाद उस प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र की निर्वाचक नामावली होगी, नामावली तैयार करने के वर्ष में जिसने पहली जनवरी को 18 वर्ष की आयु पूरी कर ली हो तथा जो ग्राम पंचायत के किसी प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र में सामान्यतः निवासी हो, उस प्रादेशिक निर्वाचक क्षेत्र की निर्वाचन नामावली में पंजीकरण का हकदार होगा। किन्तु निम्न अनर्हताये होने पर ऐसा नहीं हो सकेगा।

1. वह भारत का नागरिक न हो
2. विकृतचित्त हो (सक्षम न्यायालय की घोषणा के आधार पर)
3. निर्वाचन सम्बन्धी भ्रष्ट आचरण का दोषी करार दिया गया हो।

---

[1] वही धारा 9

आरक्षण :-

नयी पंचायत व्यवस्था की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें ग्राम पंचायत के प्रधान पद तथा पंचायत सदस्यों के लिये अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, पिछड़े वर्ग एवं महिलाओं के लिये स्थानों के आरक्षण की व्यवस्था की गई है। राज्य में अनुसूचित जनजातियों, अनुसूचित जातियों तथा पिछड़े वर्गो के लिये आरक्षित प्रधानों के पदों की संख्या का अनुपात प्रधानों की कुल संख्या के यथाशक्य वही होगा, जो राज्य की अनुसूचित जातियों की या राज्य की अनुसूचित जनजातियों की या राज्य के पिछड़े वर्गो की जनसंख्या का अनुपात राज्य की जनसंख्या से है।[1] किन्तु साथ ही यह भी प्रतिबन्धित किया गया है कि पिछड़े वर्गो के लिये आरक्षण प्रधानों के पदों की कुल संख्या के 27 प्रतिशत से अधिक नहीं होगा। यह भी प्रावधान किया गया है कि यदि पिछड़े वर्गो की जनसंख्या के आंकड़े उपलब्ध न हों तो नियत रीति से सर्वेक्षण करके उनकी जनसंख्या अवधारित की जा सकती है। राज्य की कुल जनसंख्या में अनुसूचित जाति 21.25 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति 0.21 प्रतिशत पिछड़ी जाति लगभग 45 प्रतिशत है।

अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति व पिछड़े वर्ग के आरक्षित प्रधानों के पदों की कुल संख्या के एक तिहाई से अन्यून पद यथास्थिति इन्हीं वर्गो की महिलाओं के लिये आरक्षित होंगे।[2] इसी प्रकार प्रधानों के पदों की कुल संख्या के एक तिहाई से अन्यून पद जिसमें अनुसूचित जाति, जनजाति व पिछड़े वर्ग की महिलाओं के आरक्षित प्रधानों के पदों की संख्या भी शामिल हैं, महिलाओं के लिये आरक्षित होंगे।[3] आरक्षित प्रधानों के पद भिन्न-भिन्न ग्राम पंचायतों में चक्रानुक्रम द्वारा ऐसे क्रम में जैसा नियत हो, अवधि किये जायेगें।[4] यहां यह भी स्पष्ट किया गया है कि अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, पिछड़े वर्गो के व्यक्तियों और महिलाओं के अनारक्षित पदों पर निर्वाचन हेतु कोई प्रतिबन्ध नहीं होगा।

---

[1] वही धारा 11(क) उपधारा 2
[2] वही धारा 11(क) उपधारा 3
[3] वही धारा 11(क) उपधारा 4
[4] वही धारा 11(क) उपधारा 5

इसी प्रकार ग्राम पंचायत सदस्यों के पदों के लिये भी आरक्षण की व्यवस्था की गई है। प्रत्येक ग्राम पंचायतों के सदस्यों हेतु अनुसूचित जनजातियों, अनुसूचित जातियों और पिछड़े वर्गो के लिये स्थान इस प्रकार आरक्षित किये जाने है कि आरक्षित स्थानों की संख्या का अनुपात ग्राम पंचायतों में स्थानों की कुल संख्या में यथाशक्य वहीं होगा जो पंचायत क्षेत्र में अनुसूचित जातियों की या पंचायत क्षेत्र में अनुसूचित जनजातियों की या पंचायत क्षेत्र में पिछड़े वर्गो की जनसंख्या का अनुपात ऐसे क्षेत्र की कुल जनसंख्या में हो और ऐसे स्थान किसी ग्राम पंचायत के विभिन्न प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों में ऐसे क्रम में चक्रानुक्रम में आवंटित किये जायेंगे, जैसा कि नियत किया जाय।[1] इन स्थानों के एक तिहाई से अन्यून स्थान महिलाओं के लिये आरक्षित पद भी इन्हीं वर्गो की महिलाओं के लिये आरक्षित रहेंगे।[2] साथ ही ग्राम पंचायत में कुल स्थानों की संख्या के एक तिहाई से अन्यून स्थान महिलाओं के लिये आरक्षित पद भी सम्मिलित होंगे।[3] ऐसे स्थान किसी ग्राम पंचायत के विभिन्न प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों में ऐसे चक्रानुक्रम में आवंटित किये जायेगें, जैसा नियत किया जाय। ग्राम पंचायत में आरक्षित स्थान उस ग्राम पंचायत के विभिन्न प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों में निम्नलिखित क्रम में आवण्टित किये जायेंगे।[4]

(क) अनुसूचित जनजातियों की महिलायें

(ख) अनुसूचित जनजातियां

(ग) अनुसूचित जातियों की महिलायें

(घ) अनुसूचित जातियां

(ड) पिछड़े वर्गो की महिलायें

(च) पिछडे वर्ग के लोग

(छ) महिलायें

---

[1] वही धारा 12 उपधारा 5(क)

[2] वही धारा 12 उपधारा 5(ख)

[3] वही धारा 12 उपधारा 5(ग)

[4] उत्तर प्रदेश पंचायत राज (स्थानों और पदों का आरक्षण और आवंटन) नियमावली 1994 भाग 4

ग्राम पंचायत का कार्यकाल :-

संविधान के अनुच्छेद 243(ड़) तथा 243(6) के प्रावधानों के अनुसार ग्राम पंचायत का कार्यकाल 5 वर्ष का होगा और ग्राम पंचायत के संघटन से पूर्व निर्वाचन करवाना अनिवार्य होगा। ग्राम पंचायत के किसी सदस्य का कार्यकाल ग्राम पंचायत के कार्यकाल तक ही सीमित रहेगा। राज्य सरकार किसी ग्राम पंचायत, संयुक्त समिति अथवा न्याय पंचायत को विघटित कर सकती है यदि उस संस्था ने अपनी हैसियत का दुरूपयोग किया हो या अपने कर्तव्यों के पालन में निरन्तर चूक की हो या उसका बना रहना जनहित में न हो। किन्तु उसके विघटन की तिथि से 6 माह की अवधि से पूर्व निर्वाचन करा लिया जाना चाहिये किन्तु जहां विघटन ग्राम पंचायत की शेष अवधि 6 माह से कम हो वहां निर्वाचन कराना आवश्यक नहीं है। किसी ग्राम पंचायत के कार्यकाल की समाप्ति न होने पर ग्राम पंचायत बनी रहती है।[1]

ग्राम प्रधान को अपदस्थ करने के लिये अविश्वास प्रस्ताव :-

ग्राम प्रधान को उसके पद से अपदस्थ करने के लिये ग्रामसभा के आधे सदस्यों के हस्ताक्षर से एक लिखित नोटिस जिला पंचायत राज अधिकारी को दी जायेगी। इस नोटिस में उन कारणों का उल्लेख किया जायेगा जिसके कारण प्रधान को हटाया जाना आवश्यक है। नोटिस पर हस्ताक्षर करने वालों में कम से कम 3 सदस्य स्वयं उपस्थित होकर इसे जिला पंचायत राज अधिकारी को देगें । नोटिस मिलने के 30 दिन के अन्दर जिला पंचायत राज अधिकारी ग्राम पंचायत की बैठक बुलायेगा और बैठक की सूचना कम से कम 15 दिन पूर्व दी जायेगी। ग्राम सभा अपनी बैठक में दो तिहाई बहुमत से ग्राम प्रधान के विरूद्ध अविश्वास प्रस्ताव पारित कर अपदस्थ कर सकती है। प्रधान को हटाने के लिये कोई बैठक उसके निर्वाचन के दो वर्ष के भीतर नहीं बुलाई जायेगी । यदि अविश्वास की बैठक कोरम के अभाव में नहीं हो पाती है या प्रस्ताव

---

[1] उ.प्र. पंचायती राज अधिनियम 1947, उ.प्र पंचायती राज विधि (संशोधन अधिनियम, धारा 12, उपधारा 2 (क) (ख) (ग)

दो तिहाई बहुमत नहीं प्राप्त कर पाता तो उसी प्रधान को हटाने के लिये दोबारा बैठक दो वर्ष तक नहीं बुलायी जा सकती ।[1]

प्रधान के पद की अस्थायी रिक्ति का भरा जाना :-

ग्राम प्रधान की मृत्यु होने या उसे पद से हटाये जाने या त्याग पत्र देने अथवा अन्य किसी कारण से प्रधान का पद रिक्त होने की दशा में छः माह की अवधि समाप्त होने के पूर्व शेष कार्यकाल के लिये निर्वाचन कराया जाना अनिवार्य है।[2]

उप प्रधान :-

प्रत्येक ग्राम पंचायत में एक उप प्रधान होगा जिसे ग्राम पंचायत के सदस्यों द्वारा अपने सदस्यों में से ऐसी रीति से निर्वाचित किया जायेगा जो नियत की जाय।[3] प्रतिबन्ध यह है कि ग्राम पंचायत तदर्थ नियमों द्वारा या उनके अधीन नियत समय के भीतर उप प्रधान को इस प्रकार निर्वाचित करने में चूक करें, तो विहित प्राधिकारी ग्राम पंचायत के किसी सदस्य को उप प्रधान नाम निर्दिष्ट व्यक्ति सम्यक रूप से निर्वाचित समझा जायेगा। उप प्रधान को उसके पद से हटाने के लिये उसी प्रक्रिया का अनुसरण किया जायेगा, जिस प्रक्रिया का अनुसरण प्रधान को अपदस्थ करने के लिये किया जाता है।

बैठक :-

कार्य सम्पादन के लिये ग्राम पंचायत की बैठक सामान्यतः प्रत्येक मास में कम से कम एक बार होगी किन्तु दो लगातार बैठकों के बीच दो मास का अन्तर नहीं होगा।[4] साधारणतया बैठक उस गांव में बुलाई जायेगी जहां ग्राम सभा का कार्यकाल स्थित हो। यह बैठक ग्राम पंचायत कार्यालय अथवा किसी अन्य सार्वजनिक स्थल पर आयोजित की जायेगी। ग्राम

---

[1] वही, अनुच्छेद 14, उपधारा 1, 2 व 3
[2] वही, धारा 12(ज)
[3] वही धारा 11(ग)
[4] वही धारा 12(ख)

पंचायत के बैठक की सूचना बैठक से कम से कम पांच दिन पूर्व चौकीदार या चपरासी के माध्यम से प्रत्येक सदस्य को भेजी जायेगी और ग्राम पंचायत की अधिकारिता के अन्तर्गत सहजदृश्य स्थान पर नोटिस की प्रतिलिपि चिपकाकर प्रकाशित की जायेगी।[1] ग्राम पंचायत की बैठक ग्राम प्रधान या उसके अनुपस्थिति रहने पर उप प्रधान आहूत कर सकता है। यदि पंचायत के 1/ 3 सदस्य किसी भी समय हस्ताक्षर कर लिखित रूप से बैठक बुलाने को कहें तो प्रधान को पत्र मिलने के 15 दिन के अन्दर बैठक बुलानी होगी।[2] यदि प्रधान बैठक नहीं बुलाता है तो निर्धारित अधिकारी बैठक बुला सकता है।[3]

कोरम :-

ग्राम पंचायत की बैठक के लिये प्रधान व उप प्रधान को शामिल करते हुए पंचायत सदस्यों के एक तिहाई सदस्यों की उपस्थिति बैठक का कोरम मानी जायेगी। यदि कोरम के पूरा न होने पर बैठक नहीं होती है तो दोबारा सूचना देकर बैठक बुलाई जा सकती है। इसमें कोरम की आवश्यकता नहीं होगी ।[4]

अध्यक्षता :-

सामान्य रूप से ग्राम पंचायत के बैठकों की अध्यक्षता प्रधान करेगा उसके उपस्थित न होने पर उप प्रधान व इन दोनों के मौजूद न रहने पर प्रधान द्वारा लिखित रूप से मनोनीत सदस्य अध्यक्षता करेगा। यदि प्रधान ने इस सम्बन्ध में किसी को मनोनीत नहीं किया है तो यह कार्य विहित अधिकारी करेगा। यदि ग्राम प्रधान व विहित अधिकारी दोनों ही किसी सदस्य

---

[1] उ.प्र. पंचायतीराज नियमावली 1947, नियम 37
[2] वही, नियम 33
[3] वही, नियम 33(क)
[4] वही, नियम 35

को मनोनीत न कर पाये हो तो ग्राम पंचायत की बैठक में उपस्थित सदस्य बैठक की अध्यक्षता करने के लिये ग्राम पंचायत के किसी सदस्य को चुन सकते हैं।[1]

ग्राम प्रधान के कर्तव्य :-

ग्राम प्रधान के निम्न कर्तव्य होंगे[2]

1. क. ग्राम सभा तथा ग्राम पंचायत की सभी बैठकों को आयोजित करना अथवा अध्यक्षता करना।

   ख. बैठकों में कारबार के संव्यवहार को नियंत्रित करना तथा व्यवस्था बनाये रखना।

2. ग्राम पंचायत के वित्त की निगरानी करना, प्रशासन का अधीक्षण करना और उसमें किसी व्यतिक्रम को ध्यान में लाना।
3. ग्राम पंचायत द्वारा पोषित संस्थापन का अधीक्षण करना तथा उस पर नियंत्रण रखना ।
4. ग्राम पंचातय के प्रस्ताव को क्रियान्वित करना।
5. नियमावली के अधीन उपबन्धित विभिन्न रजिस्टरों को बनाये रखने के लिये व्यवस्था करना तथा ग्राम पंचायत और ग्राम सभा की ओर से पत्राचार करना।
6. ग्राम पंचायत की सम्पत्ति की अभिरक्षा के लिये विभिन्न कार्यो के निष्पादन के लिये और ग्राम पंचायत द्वारा अधिरोपित करों, शुल्कों तथा फीस के निर्धारण तथा वसूली के लिये व्यवस्था करना।
7. ग्राम पंचायत तथा ग्राम सभा की ओर से सिविल वाद दाखिल करना और अभियोजना प्रारम्भ करना।
8. ऐसे अन्य कर्तव्यों का निर्वहन करना जो अधिनियम या किसी अन्य विधि द्वारा पंचायत से अधीन अपेक्षित हो या उस पर अधिरोपित हों।

---

[1] वही नियम 46

[2] वही, नियम 47

ग्राम सभा :-

राज्य सरकार किसी ग्राम के लिये या ग्रामों के समूह के लिये एक ग्राम सभा की स्थापना सरकारी गजट में अधिसूचना द्वारा करेगी किन्तु यदि ग्रामसभा की स्थापना ग्रामों के समूहों को मिलाकर की जायेगी तो ग्रामों के समूहों में से जिस ग्राम की जनसंख्या सबसे अधिक होगी उसी के नाम पर ग्राम सभा का नाम रखा जायेगा।[1] ग्राम सभा में पंचातय क्षेत्र की वोटर लिस्ट में दर्ज सभी लोग सदस्य होते हैं।

बैठक :-

प्रत्येक ग्राम सभा की प्रतिवर्ष दो सामान्य बैठकें होगी। एक बैठक खरीफ की फसल के तुरन्त बाद होगी जो खरीफ की बैठक कही जायेगी। इसी प्रकार दूसरी बैठक रबी की फसल काटने के तुरन्त बाद होगी जो रबी की बैठक कही जायेगी। इन बैठकों की अध्यक्षता सम्बन्धित ग्राम पंचायत का प्रधान करेगा।[2] इसके अलावा विहित प्राधिकारी द्वारा लिखित रूप से मांग किये जाने पर अथवा सदस्यों की संख्या के कम से कम 1/ 5 की मांग पर ऐसी मांग के दिनांक के तीस दिन के अन्दर किसी भी समय एक असाधारण सामान्य बैठक बुला सकता है।[3] ग्राम सभा की समस्त बैठकों का समय एवं स्थान निर्धारित रीति से प्रकाशित किया जायेगा। बैठक की गणपूर्ति के लिये कुल सदस्यों की संख्या के 1/ 5 भाग का उपस्थिति होना अनिवार्य है।[4]

कार्य :-

ग्राम सभा निम्न मामलों पर विचार कर ग्राम पंचायत को सिफारिश और सुझाव दे सकती है।[5]

---

[1] उ.प्र. पंचायती राज अधिनियम 1947, संशोधित द्वारा उ.प्र. पंचायती राज विधि (संशोधन) अधिनियम 1994 धारा 3

[2] वही धारा 11(1)

[3] वही

[4] वही धारा 11(2)

[5] वही, धारा 11(3)

1. ग्राम पंचायत के खातों का वार्षिक विवरण पूर्ववर्ती वित्तीय वर्ष की प्रशासन की रिपोर्ट और अन्तिम लेखा परीक्षा टिप्पणी और उस पर दिये उत्तर, यदि कोई हों
2. पूर्ववर्ती वर्ष से सम्बन्धित ग्राम पंचायत के विशेष कार्यक्रमों और चालू वित्तीय वर्ष के दौरान लिये जाने के लिये प्रस्तावित विकास कार्यक्रमों की रिपोर्ट
3. ग्राम में सभी वर्गों के बीच एकता और समन्वय की अभिवृद्धि ।
4. ग्राम के भीतर प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम
5. ऐसे अन्य मामले जैसे नियत किया जाये

इस सम्बन्ध में प्रावधान यह है कि ग्राम पंचायत ग्राम सभा की सिफारिशों पर सम्यक विचार करेगी।[1] साथ ही ग्राम सभा निम्न कार्यो का भी सम्पादन करेगी[2] -

1. सामुदायिक कल्याण, कार्यक्रमों के लिये स्वैच्छिक श्रम और अंशदान जुटाना
2. ग्राम से सम्बन्धित विकास योजनाओं के क्रियान्वयन के लिये लाभार्थी की पहचान
3. ग्राम से सम्बन्धित विकास योजनाओं के क्रियान्वयन में सहायता पहुंचाना

ग्राम पंचायत के कार्य

उत्तर प्रदेश पंचायत राज अधिनियम 1947 संशोधित द्वारा उ.प्र. पंचायती राज्य विधि (संशोधन) अधिनियम 1994 के धारा 15 में ग्राम पंचायतों के कार्यो का विस्तृत उल्लेख किया गया है। इसमें कहा गया कि राज्य सरकार द्वारा समय-समय पर निर्दिष्ट की गई शर्तो के अधीन प्रत्येक ग्राम पंचायत निम्नलिखित कार्यो का सम्पादन करेगी -

1. कृषि, जिसके अन्तर्गत कृषि विस्तार भी है :-

क. कृषि और बागवानी का विकास और प्रोन्नति ।

ख. बंजर भूमि और चरागाह भूमि का विकास और उसके संक्रमण और प्रयोग की रोकथाम करना।

---

[1] वही, धारा 11(4)
[2] वही धारा 11(5)

2. भूमि विकास, भूमि सुधार का कार्यान्वयन, चकबन्दी और भूमि संरक्षण :-

क. भूमि विकास, भूमि सुधार और भूमि संरक्षण में सरकार और अन्य एजेन्सियों की सहायता करना।

ख. भूमि चकबन्दी में सहायता करना ।

3. लघु सिंचाई, जल व्यवस्था और जल आच्छादन विकास :-

क. लघु सिंचाई परियोजनाओं से जल वितरण में प्रबन्ध और सहायता करना।

ख. लघु सिंचाई परियोजनाओं का निर्माण, मरम्मत और अनुरक्षण, सिंचाई के उद्देश्य से जलपूर्ति का दिनियमन ।

4. पशुपालन, दुग्ध उद्योग और कुक्कुट पालन :-

क. पालतू जानवरों, कुक्कटों और अन्य पशुधनों की नस्लों में सुधार करना।

ख. दुग्ध उद्योग, कुक्कुट पालन, सुअर पालन इत्यादि की प्रोन्नति ।

5. मत्स्य पालन :-

6 गांवों में मत्स्य पालन का विकास करना ।

6. सामाजिक और कृषि वानिकी :-

क. सड़कों और सार्वजनिक भूमि के किनारों पर वृक्षारोपण और परिरक्षण।

ख. सामाजिक और कृषि वानिकी और रेशन उत्पादन का विकास और प्रोन्नति ।

7. लघु वन उत्पाद :-

लघु वन उत्पादों की प्रोन्नति और विकास ।

8. लघु उद्योग :-

क. लघु उद्योगों के विकास में सहायता करना ।

ख. स्थानीय व्यापारों की प्रोन्नति ।

9. कुटीर और ग्राम उद्योग :-

क. कृषि और वाणिज्यिक उद्योगों के विकास में सहायता करना ।

ख. कुटीर उद्योगों की प्रोन्नति ।

10. ग्रामीण आवास :-

क. ग्रामीण आवास कार्यक्रमों का क्रियान्वयन ।

ख. आवास स्थलों का विवरण और उनसे सम्बन्धित अभिलेखों का अनुरक्षण।

11. पेयजल :-

पीने, कपड़ा धोने, स्नान करने के प्रयोजनों के लिये जल सम्भरण के लिये सार्वजनिक कुओं, तालाबों और पोखरों का निर्माण, मरम्मत और अनुरक्षण और पीने के प्रयोजनों के लिये जल सम्भरण के श्रोतों का विनियमन ।

12. ईंधन और चारा भूमि :-

क. ईंधन और चारा भूमि से सम्बन्धित घास और पौधों का विकास ।

ख. चारा भूमि के अनियमित अन्तरण पर नियंत्रण ।

13. सड़कें, पुलियों, पुलों, नौका घाट, जलमार्ग और संचार के अन्य साधन :-

क. ग्राम की सड़कों, पुलियों, पुलों और नौका घाटों का निर्माण और अनुरक्षण।

ख. जल मार्गो का अनुरक्षण ।

ग. सार्वजनिक स्थानों पर से अधिक्रमण का हटाना ।

14. ग्रामीण विद्युतीकरण :-

सार्वजनिक मार्गो और अन्य स्थानों पर प्रकाश उपलब्ध कराना और अनुरक्षण करना।

15. गैर पारम्परिक ऊर्जा स्रोत :-

ग्राम में गैर परम्परागत ऊर्जा स्रोतों के कार्यक्रमों का विकास, प्रोन्नति और उनका अनुरक्षण ।

16. गरीबी उपशमन कार्यक्रम :-

गरीबी उपशमन कार्यक्रमों की प्रोन्नति और क्रियान्वयन ।

17. शिक्षा :-

शिक्षा जिसके अन्तर्गत प्रारम्भिक और माध्यमिक विद्यालय भी है। शिक्षा के बारे में सार्वजनिक चेतना ।

18. **तकनीकी प्रशिक्षण और व्यावसायिक शिक्षा :-**

ग्रामीण कला एवं शिल्पकारों की प्रोन्नति ।

19. **प्रौढ़ शिक्षा और अनौपचारिक शिक्षा :-**

प्रौढ़ साक्षरता की प्रोन्नति ।

20. पुस्तकालय :-

पुस्तकालयों और वाचनालयों की स्थापना और अनुरक्षण ।

21. **खेलकूद और सांस्कृतिक कार्य :-**

क. सामाजिक और सांस्कृतिक क्रिया-कलापों की प्रोन्नति ।

ख. विभिन्न त्योहारों पर सांस्कृतिक संगोष्ठियों का आयोजन ।

ग. खेलकूद के लिये ग्रामीण क्लबों की स्थापना और अनुरक्षण ।

22. **बाजार और मेले :-**

पंचायत क्षेत्र में मेलों, बाजारों और हाटों का विनियमन ।

23. **चिकित्सा और स्वच्छता :-**

क. ग्रामीण स्वच्छता की प्रोन्नति ।

ख. महामारियों के विरूद्ध रोकथाम ।

ग. मनुष्य और पशु टीकाकरण के कार्यक्रम ।

घ. छुट्टा पशु और पशुधन के विरूद्ध निवारक कार्यवाही ।

ड. जन्म, मृत्यु और विवाह का पंजीकरण ।

24. परिवार कल्याण :-

परिवार कल्याण कार्यक्रमों की प्रोन्नति और क्रियान्वयन ।

25. आर्थिक विकास के लिये योजना :-

ग्राम पंचायत के क्षेत्र के आर्थिक विकास के लिये योजना तैयार करना ।

26. प्रसूति और बाल विकास :-

क. ग्राम पंचायत स्तर पर महिला एवं बाल विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में भाग लेना।

ख. बाल स्वास्थ्य और पोषण कार्यक्रमों की प्रोन्नति ।

27. समाज कल्याण जिसके अन्तर्गत विकलांगों और मानसिक रूप से मंद व्यक्तियों का कल्याण भी है :-

क. वृद्धावस्था व विधवा पेंशन योजनाओं में सहायता करना ।

ख. विकलांगों और मानसिक रूप से मंद व्यक्तियों के कल्याण को सम्मिलित करते हुए समाज कल्याण कार्यक्रमों में भाग लेना ।

28 कमजोर वर्गो और विशिष्टतया अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों का कल्याण :-

क. अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और समाज के अन्य कमजोर वर्गो के लिये विशिष्ट कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में भाग लेना।

ख. सामाजिक न्याय के लिये योजनाओं की तैयारी और क्रियान्वयन ।

29. सार्वजनिक वितरण प्रणाली :-

क. अत्यावश्यक वस्तुओं के लिये वितरण के सम्बन्ध में सार्वजनिक चेतना की प्रोन्नति ।

ख. सार्वजनिक वितरण प्रणाली का अनुश्रवण ।

30. सामुदायिक अस्तियों का परिरक्षण और अनुरक्षण :-

उक्त कार्यो के अतिरिक्त राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा निम्न में से किसी या सभी कार्यो को ग्राम पंचायत को सौप सकती है । (धारा 16)

1. पंचायत क्षेत्र में स्थित किसी वन की व्यवस्था और अनुरक्षण ।
2. पंचायत क्षेत्र के भीतर स्थिति सरकार की बंजर भूमि, चरागाह, ऊसर भूमि या खाली पड़ी भूमि की व्यवस्था ।

3. किसी कर या भूराजस्व का संग्रह और सम्बन्धित अभिलेखों का अनुरक्षण ।

ग्राम पंचायत की समितियां :-

ग्राम पंचायत अपने कार्यों में सहायता के लिये 6 समितियों का गठन करेगी। इन समितियों को ग्राम पंचायत आवश्यकतानुसार अपने सभी कार्यों या किन्हीं कार्यों को करने के लिये सौंप सकती है। ऐसी प्रत्येक समिति में एक सभापति तथा 6 अन्य सदस्य होंगे जो ग्राम पंचायत के सदस्यों द्वारा अपने में से नियत रीति से निर्धारित किये जायेगें। किन्तु इस सम्बन्ध में प्रतिबन्ध यह है कि प्रत्येक समिति में कम से कम एक महिला सदस्य, अनुसूचित जनजातियों, अनुसूचित जातियों का एक सदस्य और एक पिछड़े वर्ग का एक सदस्य अवश्य होगा। राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा यह निर्देश दे सकती है कि प्रधान या उप प्रधान या ग्राम पंचायत का कोई अन्य सदस्य ऐसी किसी समिति का सभापति होगा ।[1] ये 6 समितियाँ निम्नलिखित हैं :-

1. **नियोजन एवं विकास समिति** :- इस समिति का कार्य ग्राम पंचायत की योजना तैयार करना, कृषि, पशुपालन तथा गरीबी उन्मूलन के कार्यक्रमों का संचालन करना है।
2. **शिक्षा समिति** :- शिक्षा समिति का कार्य है प्राथमिक शिक्षा, उच्च प्राथमिक शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा तथा साक्षरता आदि से सम्बन्धित कार्य करना।
3. **निर्माण कार्य समिति** :- गांव में सभी प्रकार के निर्माण कार्य करवाना और गुणवत्ता सुनिश्चित करना इस समिति का दायित्व है।
4. **स्वास्थ्य एवं कल्याण समिति** :- इस समिति का दायित्व है चिकित्सा, स्वास्थ्य, परिवार कल्याण सम्बन्धी कार्य और समाज कल्याण विशेष रूप से महिला एवं बाल कल्याण की योजनाओं का संचालन व अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा पिछड़े वर्गो की उन्नति एवं संरक्षण के लिये कार्य करना है।

---

[1] उ.प्र. अधिनियम संख्या 33 वर्ष 1999 की धारा (3) द्वारा प्रतिस्थपित (दिनांक 29.07.99 से प्रभाव) उ.प्र. पंचायती राज अधिनियम की धारा 29

5. **प्रशासनिक समिति** :- इस समिति के अधीन जो विषय हैं वे हैं - कर्मियों सम्बन्धी समस्त विषय तथा राशन की दुकान सम्बन्धी कार्य ।

6. **जल प्रबन्धक समिति** :- जल प्रबन्धन समिति द्वारा राजकीय नलकूपों का संचालन तथा पेयजल सम्बन्धी कार्य सम्पादित किये जायेंगे।

ग्राम पंचायत को हस्तान्तरित कर्मी :-

विकेन्द्रीकरण की नई व्यवस्था में ग्रामीण स्तरीय कार्यकर्ताओं की गांव में उपलब्धता सुनिश्चित करने के उद्‌देश्य से प्रत्येक ग्राम पंचायत में कम से कम एक बहुउद्‌देशीय कर्मी तैनात किया गया है जिसे "ग्राम पंचायत विकास अधिकारी" का नाम दिया गया है। निम्नलिखित आठ विभागों के कर्मचारी पंचायतों के अधीन ग्राम पंचायत विकास अधिकारी (बहुउद्‌देशीय कर्मी) बनाये गये हैं :-

विभाग का नाम	कर्मी का पद नाम
1. ग्राम्य विकास विभाग	ग्राम विकास अधिकारी
2. पंचायती राज विभाग	ग्राम पंचायत अधिकारी
3. कृषि विभाग	किसान सहायक
4. चिकित्सा विभाग	पुरूष स्वास्थ्य कार्यकर्ता
5. सिंचाई विभाग	क. नलकूप चालक ख. सींचपाल (नलकूप) ग. सींचपाल (नहर)
6. समाज कल्याण	ग्राम विकास अधिकारी (समाज कल्याण)
7. गन्ना विकास	गन्ना पर्यवेक्षक
8. भूमि विकास एवं जल संसाधन विभाग	सभादेश प्रक्षेत्र विकास अभिकरण के ग्राम स्तरीय कार्यकर्ता, निरीक्षक एवं सींचपाल पर्यवेक्षक

इनके अतिरिक्त निम्न चार विभागों के कर्मी पंचायतों के अधीन किये गये हैं किन्तु वे बहुउद्देशीय कर्मी नहीं हैं :-

1. बेसिक शिक्षा विभाग	प्राथमिक, उच्च प्राथमिक विद्यालय तथा अनौपचारिक शिक्षा के अन्तर्गत प्रधानाध्यापक / शिक्षक तथा अनुदेशक
2. चिकित्सा,स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग	ए.एन.एम. व दाई
3. महिला कल्याण विभाग	आंगनबाडी कार्यकत्री व सहायिका
4. पशुधन विभाग	पशुधन प्रसार अधिकारी

यदि ग्राम पंचायत में एक ही ग्राम पंचायत विकास अधिकारी तैनात है तो वह ग्राम पंचायत का सचिव होगा। यदि एक से अधिक ग्राम पंचायत विकास अधिकारी तैनात हैं तो उनमें से एक को ग्राम पंचायत के सचिव का कार्य ग्राम पंचायत द्वारा प्रस्ताव पारित करके प्रदत्त किया जायेगा।

ग्राम पंचायतों की वित्तीय व्यवस्था :-

किसी भी प्रकार की सरकार का संचालन चाहे वह केन्द्रीय हो, प्रान्तीय हो या स्थानीय हो बिना सम्यक वित्तीय संसाधनों के सम्भव नहीं हैं। केवल राजनीतिक शक्तियों के हस्तान्तरण मात्र से विकेन्द्रीकरण का लक्ष्य प्राप्त नहीं किया जा सकता । इसके लिये आर्थिक, वित्तीय शक्तियों का हस्तान्तरण भी अपरिहार्य है। अस्तु नवीन पंचायती राज व्यवस्था में भी उसके कार्यो के समुचित सम्पादन के संदर्भ में वित्तीय संसाधनों की व्यवस्था की गई है। ग्राम पंचायतों की वित्तीय व्यवस्था के सम्बन्ध में प्रमुख प्रावधान निम्न हैं -

1. कर और फीस का आरोपण :-

ग्राम पंचायतों द्वारा लगाये जाने वाले करों के सम्बन्ध में स्पष्ट किया गया है कि ग्राम पंचायत एतद्पश्चात दिये गये खण्ड (क) और (ख) में वर्णित कर लगायेगी और खण्ड (ग),

(घ),(ड.), (छा), (ज), (झ), (ब), और (ट), में वर्णित सभी या कोई कर, फीस और शुल्क लगा सकती है ।[1] -

(क) उन क्षेत्रों में जहां उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश और भूमि व्यवस्था अधिनियम 1950, जौनसार बावर जमींदार विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम 1956, अथवा कुमाऊं तथा उत्तराखण्ड जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम 1960 के अधीन मध्यवर्तीयों के अधिकार आगम और स्वत्व अर्जित कर लिये गये हों, भूमि पर उसके लिये देय अथवा देय समझी जाने वाली भूराजस्व की धनराशि पर प्रति रूपया कम से कम पच्चीस पैसे किन्तु पचास पैसे से अनाधिक कर लगा सकती है। यदि भूमि पर उस व्यक्ति से जिसके द्वारा उसके लिये भू-राजस्व देय हो अथवा देय समझा जाय । भिन्न व्यक्ति वास्तव में कृषि करता हो तो कर उस व्यक्ति द्वारा देय होगा जो वास्तव में खेती करता हो ।

(ख) खण्ड (क) में अनिर्दिष्ट क्षेत्रों से भिन्न क्षेत्रों में भौतिक अधिकार से सम्बन्धित प्रवृत्त विधि के अधीन किसी काश्तकार द्वारा वह कुछ भी कहलाता हो, देय भू राजस्व की धनराशि पर प्रति रूपया कम से कम पच्चीस पैसे किन्तु पचास पैसे से अनाधिक कर लगा सकती है। यदि भूमि पर उस व्यक्ति से जो उसके लिये भूराजस्व का देनदार हो, भिन्न व्यक्ति वास्तव में कृषि करता हो तो कर उस व्यक्ति द्वारा देय होगा जो उस पर वास्तव में कृषि करता हो ।

(ग) ग्राम पंचायत के क्षेत्र में अस्थायी रूप से स्थित प्रेक्षागृह, सिनेमा अथवा इसी प्रकार के अमोद पर कर जो पांच रूपया प्रतिदिन से अधिक नहीं होगा, लगा सकती है।

(घ) ग्राम पंचातय के क्षेत्र के भीतर रखे गये और किराये पर चलाये जाने वाले पशुओं और यन्त्र चलित वाहनों से भिन्न वाहनों पर उनके स्वामियों द्वारा निम्नलिखित दर से देय कर लगा सकती है ।

1. जानवरों की दशा में प्रति जानवर तीन रूपया
2. गाड़ियों की दशा में प्रतिवाहन 6 रूपया प्रतिवर्ष से अधिक न होगा।

[1] उ.प्र. पंचायती राज अधिनियम धारा 37

(ड़) उन व्यक्तियों पर कर लगा सकती है जो ऐसे व्यक्ति नहीं हैं जिन पर खण्ड (ग) के अधीन कर निर्धारित किया जाता हो और ऐसे बाजारों, हाटों अथवा मेलों में बिक्री के लिये सामानों को अभिदर्शित करे जो सम्बन्धित ग्राम पंचायत के हों अथवा उसके नियंत्रण में हो।

(च) ऐसे पशुओं के पंजीकरण पर फीस लगा सकती है जिनकी बिक्री किसी ऐसे बाजार अथवा स्थान पर की जाती हो, जो ग्राम पंचायत के हो अथवा उसके नियंत्रण में हो।

(छ) वधशालाओं और पड़ावों की भूमि के प्रयोग के लिये फीस लगा सकती है ।

(ज) जल शुल्क जहां ग्राम पंचायत द्वारा घरेलू उपयोग के लिये जल सम्भारित किया जाता हो।

(झ) निजी शौचालयों या नालियों कि सफाई के लिये कर जो उन गृहों के जिनसे निजी शौचालय की नाली संलग्न हो स्वामियों या अध्यासियों द्वारा देय होगा, उस दशा में ऐसी सफाई ग्राम पंचायत के अभिकरण के माध्यम से की जाय।

(ञ) सड़कों की सफाई और उन पर रोशनी व स्वच्छता कर ।

(ट) सिंचाई शुल्क, जहां ग्राम पंचायत द्वारा अपने द्वारा निर्मित या अनुरक्षित किसी लघु सिंचाई प्रयोजन से सिंचाई के लिये जल सम्भारित किया जाता हो ।

(ठ) कोई ऐसा अन्य कर जिसे राज्य में आरोपित करने का अधिकार राज्य विधान मण्डल को संविधान के अधीन, उसके अनुच्छेद 277 को सम्मिलित करते हुए हो और जिसका ग्राम पंचायत द्वारा आरोपण राज्य सरकार ने प्राधिकृत किया हो ।

2. भूमि अर्जित करने की शक्ति :-

यदि कोई ग्राम पंचायत अथवा ग्राम पंचायतें इस अधिनियम के किसी प्रयोजन को क्रियान्वित करने के लिये किसी भूमि की अपेक्षा करे तो वह ग्राम पंचायत अथवा ग्राम पंचायतें पहले तो आपसी बातचीत द्वारा भूमि ग्रहण करने का प्रयत्न करेंगी और यदि सम्बन्धित पक्ष करार करने में चूक जायें तो ऐसी ग्राम पंचायत या ग्राम पंचायतें भूमि अर्जित करने के लिये

कलेक्टर को नियत आवेदन प्रपत्र में आवेदन पत्र दे सकती हैं और कलेक्टर ऐसी भूमि को ऐसी ग्राम पंचायत अथवा ग्राम पंचातयों के लिये अर्जित कर सकती है।[1]

3. ग्राम पंचायत में निहित सम्पत्ति :-

राज्य सरकार द्वारा किये गये किसी विशेष आरक्षण के अधीन रहते हुए ग्राम पंचायत की अधिकारिता के भीतर स्थित समस्त सार्वजनिक सम्पत्ति ग्राम पंचायत में निहित होगी और ऐसी समस्त अन्य सम्पत्ति सहित जो ग्राम पंचायत में निहित हो जाये, उसके निर्देश, प्रबन्ध तथा नियंत्रण में होंगी।[2] ऐसे समस्त बाजार तथा मेले अथवा उनके ऐसे अंश, जो सार्वजनिक भूमि पर लगते हों, प्रबन्ध और विनिश्चय ग्राम पंचायत द्वारा किया जायेगा और ग्राम पंचायत, गांव निधि के खातों में ऐसे समस्त देयों को प्राप्त करेगी जो उसके सम्बन्ध में उदग्रहित या आरोपित किये गये हो।[3]

4. दावों का निस्तारण :-

यदि उपर्युक्त निहित किसी सम्पत्ति के स्वामित्व के सम्बन्ध में ग्राम पंचायत और किसी व्यक्ति के बीच विवाद उत्पन्न हो तो ग्राम पंचायत ऐसे व्यक्तियों को सुनवाई का समुचित अवसर देगी और तब यह निर्णय करेगी की उक्त सम्पत्ति को ग्राम पंचायत की सम्पत्ति समझी जाय अथवा नहीं।[4]

5. उधार लेने की शक्ति :-

कोई ग्राम पंचायत राज्य सरकार से अथवा नियत प्राधिकारी की पूर्व स्वीकृति से तथा ऐसी शर्तो के अधीन रहते हुए जो नियत की जाय, विधि द्वारा स्थापित किसी वित्तीय निगम अथवा किसी समुचित बैंक या उत्तर प्रदेश कोआपरेटिव बैंक अथवा डिस्ट्रिक्ट कोआपरेटिव बैंक

---

[1] वही धारा 33

[2] वही धारा 34(1)

[3] वही धारा 34(2)

[4] वही धारा 35

या किसी ग्राम पंचायत से इस अधिनियम के किसी भी प्रयोजन को क्रियान्वित करने के लिये धनराशि उधार ले सकती है।[1]

6. गांव निधि :-

प्रत्येक ग्राम पंचायत के लिये एक ग्राम कोष होगा जिसमें से ग्राम पंचायत के सालाना आय व व्यय के अनुमान की सीमा के अन्दर ग्रामसभा व ग्राम पंचायत या उसकी किसी समिति के कर्तव्यों के पालन करने के लिये धन खर्च किया जायेगा।[2] ग्राम निधि में निम्नप्रकार से धन को जमा करने की व्यवस्था है।[3] -

क. ग्राम पंचायत अधिनियम के अधीन आरोपित किसी कर से होने वाली आय

ख. राज्य सरकार द्वारा ग्राम पंचायत को दी गई समस्त धनराशि

ग. ग्राम पंचायत अधिनियम के अधीन पहले से मौजूद ग्राम पंचायत के नाम जमा अवशेष, यदि कोई हो ।

घ. ऐसी सभी धनराशि जिन्हें गांव निधि के खाते में जमा करने के लिये किसी न्यायालय द्वारा आदेशित किया गया हो अथवा किसी विधि के अधीन अपेक्षा की गई हो ।

ड़ ग्राम पंचायत के नियमों के विरूद्ध किये गये अपराधों के शमन के सम्बन्ध में प्राप्त होने वाली धनराशि

च. ग्राम पंचायत के सेवकों द्वारा एकत्र समस्त धूल, गन्दगी, गोबर या कूड़ा-करकट जिसमें पशुओं के शव भी शामिल है की बिक्री से प्राप्त होने वाली आय।

छ. नजूल की सम्पत्ति के लगान अथवा उससे प्राप्त होने वाली अन्य आय का ऐसा भाग जिसे राज्य सरकार गांव निधि के खातें में जमा किये जाने का निर्देश दे।

ज. जिला पंचायत अथवा किसी अन्य स्थानीय प्राधिकारी द्वारा गांव निधि में अंशदान के रूप में दी गई धनराशियां

---

[1] वही धारा 36
[2] वही धारा 32(1)
[3] वही धारा 32(2)

झ. ऋण अथवा दान स्वरूप प्राप्त समस्त धनराशि

ट. ऐसी अन्य धनराशि जो राज्य सरकार द्वारा किसी विशेष या सामान्य आदेश द्वारा गांव निधि को अभ्यर्थित की जाये।

ठ. राज्य के संचित निधि से सहायता के अनुदान के रूप में प्राप्त समस्त धनराशियां ।

उ.प्र. पंचायत राज नियमावली के नियम 179 के अनुसार गांव निधि का नकद अतिशेष राज्य कोषागार में विहित प्राधिकारी के अनुमोदन के बाद निकटतम डाकघर के बचत बैंक लेखा में या निकट के सहकारी बैंक या क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक या राष्ट्रीयकृत बैंक की किसी शाखा में रखा जायेगा किन्तु यदि ग्रामसभा के मुख्यालय के निकट क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक और राष्ट्रीयकृत बैंक की कोई शाखा हो, तो क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक को प्रमुखता दी जायेगी। गांव निधि से धन का समस्त आहरण और उसका वितरण ग्राम पंचायत के प्रधान और सचिव द्वारा संयुक्त रूप से किया जायेगा।[1]

7. ग्राम पंचायत का बजट :-

प्रत्येक ग्राम पंचायत ऐसी अवधि के भीतर और ऐसी रीति से जैसी नियत की जाय, आगामी पहली अप्रैल से प्रारम्भ होने वाले वित्तीय वर्ष के लिये ग्राम पंचायत के अनुमानित आय और व्यय का विवरण तैयार करेगी जोकि ग्राम पंचायत द्वारा उसकी बैठक में उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के साधारण बहुमत से पारित किया जायेगा और ऐसी बैठक के लिये गणपूर्ति ग्राम पंचायत के सदस्यों की कुल संख्या के आधे से अधिक होगी।[2]

8. लेखा परीक्षा :-

प्रत्येक ग्राम पंचायत और न्याय पंचायत के लेखे का परीक्षण प्रत्येक वर्ष ऐसी रीति से और ऐसी फीस का भुगतान करने पर की जायेगी जो नियत की जाय।[3]

---

[1] वही धारा 32(1)
[2] वही धारा 41
[3] वही धारा 38

73वें संविधान संशोधन के बाद से ग्राम पंचायत की नयी संशोधित व्यवस्था काफी परिवर्द्धित एवं व्यापक है, न केवल इसे संगठित नियमित किया गया है बल्कि इसे विभिन्न वर्गो के आरक्षण के माध्यम से अत्याधिक प्रतिनिध्यात्मक वनाने का भी प्रयास किया गया है। दी गई राजनीतिक और वित्तीय शक्तियां निश्चय ही नयी विकेंद्रित व्यवस्था का आभास कराती है जो एक नये युग का सूत्रपात करने में सक्षम हैं।

अध्याय–4

भारतीय राजनीति में महिला सहभागिता

- राष्ट्रीय राजनीति
- राज्य राजनीति
- पंचायत राजनीति

भारतीय राजनीति में महिला सहभागिता

गुरू रविन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार "स्त्री राष्ट्र के भाग्य की निर्माता व विधाता है। लिली की तरह सौम्य व कोमल होने के बावजूद वह पुरूष की तुलना में अधिक सशक्त एवं दृढ़ ह्रदय की स्वामिनी होती है। निःसन्देह उसके प्रभावी व्यक्तित्व के कारण उससे अधिक दृढ़ और पवित्र कुछ भी नहीं है।[1] प्राचीन भारतीय संस्कृति में भी "यत्र नार्यस्तु पूज्यते तत्र रमन्ते देवताः " कहकर नारी गरिमा व महत्व का गुणगान किया गया है। मनुस्मृति में भी कहा गया, "यत्रोस्तु न पूज्यन्ते सर्वास्वात्रफला क्रियः"[2] अर्थात जहां इनकी (स्त्रियों) पूजा नहीं होती वहां समस्त क्रियायें व्यर्थ हो जाती हैं। वैदिक भारत में स्त्रियों का कार्य क्षेत्र परिवार तक ही सीमित नहीं था। पुरूषों के समान उसका भी वैयक्तिक व सामाजिक जीवन रहता था। उसे वेद पढ़ने तथा उपनयन आदि संस्कारों द्वारा सुसंकृत बनने का अधिकार था। स्त्रियां वेदाध्ययन करती थी व उन्होंने वैदिक ऋचाओं की रचना की थी। स्त्रियां पतियों के साथ युद्ध मैदान में भी जाती थी। विवाह वयस्क आयु में अपनी पसन्द के अनुरूप करने का प्रावधान था।

किन्तु स्त्रियों के सम्बन्ध में स्मृतियों के उद्धरण, टैगोर की अनुशंसा व वैदिक उदाहरण स्त्री अधिकारों एवं उनकी सामाजिक स्थिति के सम्बन्ध में मृग मारीचीका के ही समान है। वास्तविकता यह है कि भारत हीं नहीं, विश्व की तमाम सभ्यताओं व मुल्कों में प्राचीनकाल से ही स्त्री को दोयम दर्जे की स्थिति प्राप्त रही है। सामाजिक व राजनीतिक क्षेत्रों में उन्हें अपनी प्रतिभा व क्षमता दिखाने के पर्याप्त अवसर प्राप्त नहीं हुए। परिणामस्वरूप विश्व अपनी आधी आबादी के संरचनात्मक सहयोग से वंचित रहा। यदि हम स्त्रियों की राजनीति में सहभागिता की बात करें तो स्थिति निराशाजनक ही नजर आती है। निर्णय निर्माण और शासन में सहभागिता तो दूर की बात है, लोकतंत्र के आदर्श माने जाने वाले राज्यों ने लम्बे समय तक उन्हें मताधिकार से ही वंचित रखा। संसदीय शासन की जननी कहे जाने वाले इंगलैण्ड में 1918 से पूर्व स्त्रियों को

[1] उद्धृत सी.आर.जैन, वुमैन पार्लियामेन्टे रियन्स इन इण्डिया, सुरजीत पब्लिकेशन, बम्बई 1991, पृ0 23

[2] मनुस्मृति 3.56

मताधिकार प्राप्त नहीं था। 1918 में एक कानून द्वारा 30 वर्ष से ऊपर की आयु वाली महिलाओं को मताधिकार प्रदान किया गया। इसके 10 वर्ष बाद यह अवस्था घटाकर पुरूषों के बराबर अर्थात 21 वर्ष कर दी गई। इसी प्रकार अध्यक्षीय शासन के जन्मदाता व 1787 में विश्व के पहले संविधान का निर्माण करने वाले संयुक्त राज्य अमेरिका ने 1789 में लागू हुए इस संविधान के क्रियान्वयन के 130 वर्षो बाद 1919 में स्त्रियों को पुरूषों के समान मताधिकार प्रदान किया गया। प्रजातंत्र का घर कहे जाने वाले स्विटजरलैण्ड ने फरवरी 1971 में महिलाओं को मताधिकार प्रदान कर उन्हें देश की राजनीति में सहभागी होने का अधिकार प्रदान किया। अद्यतन् कुवैत में 2005 में महिलाओं को मताधिकार प्रदान किया गया।

पूर्व स्थिति चाहे कुछ भी रही हो अब प्रायः हर देश में महिलाओं की दशा में बदलाव के संकेत मिल रहे हैं। हर समाज इस बात व इस आवश्यकता को समझ रहा है कि देश की आधी आबादी को सामाजिक आर्थिक व राजनीतिक क्षेत्र में बराबर का भागीदार बनाये बिना अपने संसाधनों का पूर्ण सदुपयोग व विकास लक्ष्य प्राप्त करना संभव न होगा। महिलाओं की स्थिति में आये सकरात्मक बदलाव के लिये अन्तर्राष्ट्रीय महिला कम्युनिष्ट नेता क्लारा केरकिन के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। उन्होंने अपने संघर्ष के पहले दिन को अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस घोषित किया था।[1] महिलाओं की दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति की ओर ध्यान आकृष्ट करने के उद्‌देश्य से पहली बार 1975 को अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष घोषित किया गया। प्रतिवर्ष 8 मार्च अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में मनाया जाता है। किन्तु ज्यादातर महिलायें अशिक्षा और निर्धनता के अभिशाप के कारण इस प्रकार के दिवस और वर्ष का अर्थ ही नहीं समझ पाती, उन्हें यह भी नहीं मालूम कि यह दिन अमेरिका की उन मजदूर औरतों के संघर्ष का दिन है, जिन्होंने 100 से अधिक साल पहले काम के घण्टे मजदूरी और काम की शर्तो को लेकर न सिर्फ हड़ताल की बल्कि अपनी मांगों के सन्दर्भ में प्रदर्शन करते हुए पुलिस की लाठियां और गोलियां भी झेली थी।[2]

---

[1] सुभाषिनी अली, महिला दिवस का असली अर्थ, दैनिक जागरण, लखनऊ 21 मार्च 2002
[2] वही

यहां समीक्षा का प्रश्न स्त्रियों की दशा में सुधार नहीं है, बल्कि प्रश्न यह है कि किस प्रकार समाज की इस आधी आबादी को हर मामले में स्वावलम्बी बनाते हुए समाज के विनिश्चिय प्रक्रिया में भागीदार बनाया जाय। यह सत्य है कि राजनीतिक-सामाजिक निर्णय प्रक्रिया में जब तक समाज के सभी वर्गो की भागीदारी नहीं होगी, समाज समग्र रूप से अपने विकास और समृध्दि के लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकता। फिर महिलायें तो किसी भी देश अथवा समाज की आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करती हैं। ऐसे में इन्हें सामाजिक व राजनीतिक दायित्व से वंचित रखते हुए सर्व कल्याण और सम्यक विकास की बात सोची ही नहीं जा सकती।

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन और महिलायें

भारत में महिलाओं का सामाजिक राजनीतिक परिवर्तन के लिये पहला आन्दोलन बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में हुआ, जब महिलायें भी पुरूषों के साथ स्वाधीनता संग्राम में शामिल हुई। 1905-08 तक बंगाल में चले स्वदेशी आन्दोलन को महिलाओं की राष्ट्रवादी गतिविधियों में सहभागिता का प्रारम्भ माना जा सकता है। इन महिलाओं में अधिकांश उन परिवारों से थीं जो राष्ट्रवादी राजनीति में सक्रिय थे। मध्यवर्गीय राष्ट्रवादी महिलाओं ने आन्दोलन में गहने, धन और यहां तक कि अनाज दान कर अपनी उपस्थिति दर्ज कराई । उन्होंने विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार और एक सीमा तक क्रान्तिकारी गतिविधियों में भी भाग लिया। सिस्टर निवेदिता राष्ट्रीय क्रान्तिकारी परिषद की सदस्य थी और इस हैसियत से उन्होंने महिलाओं की राष्ट्रवादी गतिविधियों को संगठित किया। इसके अलावा दिल्ली में अज्ञावती मैडम कामा जिन्हें सरकार संगठित क्रान्तिकारी आन्दोलन के नेता के रूप में जानती थी और कुमुदिनी मित्रा जिन्होंने ''सुप्रभात'' नामक पत्रिका का सम्पादन किया आदि ने नारी की परम्परागत शक्ति को राष्ट्रीय आन्दोलन से जोड़ने और संगठित करने का काम किया। मैडम कामा, जोकि एक पारसी महिला थी, ने ''अन्तराष्ट्रीय समाजवादी कांग्रेस'' को भारत के स्वाधीनता संग्राम का समर्थन करने के लिये प्रेरित किया और इस उद्देश्य से मासिक पत्रिका ''वन्देमातरम्'' का प्रकाशन प्रारम्भ किया।

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के महत्वपूर्ण महिला नेताओं में सरोजनी नायडू, कमलादेवी चटोपाध्याय, अरूणा आसफ अली, और बसन्ती देवी आदि प्रमुख थी। सरोजनी नायडू ने महिलाओं के अधिकारों के लिये कांग्रेस और मुस्लिम लीग के साथ मिलकर काम किया। उन्होने महिला मताधिकार के लिये संघर्ष किया और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की पहली निर्वाचित महिला अध्यक्ष बनी। कमलादेवी चटोपाध्याय ने तीस के दशक में सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लिया। अरूणा आसफ अली की पहली राजनीतिक गतिविधि नमक सत्याग्रह के समय दिखाई दी जिसमें उन्हें गिरफ्तार भी किया गया। उन्होंने भारत छोड़ो आन्दोलन में भी सक्रिय रूप से भाग लिया। कांग्रेस के "इन्कलाब" नामक पत्रिका का सम्पादन किया और भारतीय महिलाओं के राष्ट्रीय संघ की स्थापना की। उन्हें भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन की महान महिला और भारत छोड़ो आन्दोलन की नायिका के रूप में जाना जाता है। बसन्ती देवी ने ब्रिटिश विरोधी गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग लिया और विदेशी समानों की दुकानों के समक्ष धरना देते हुए उन्हें गिरफ्तार किया गया। 1922 में वे बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस की अध्यक्ष बनी।

नमक सत्याग्रह में पहली बार भारतीय महिलाओं ने अपनी व्यापक सहभागिता का प्रदर्शन किया। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में अधिक से अधिक महिलाओं को सक्रिय रूप से भागीदार बनाने के लिये अनेक महिला संगठनों का भी गठन किया गया। इन महिला संगठनों ने जिनमें महिला धरना परिषद, देश सेविका संघ, नारी सत्याग्रह समिति और महिला राष्ट्रीय संघ आदि प्रमुख थे, धरना, प्रदर्शन और चरखा चलाने आदि का काम किया।

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान महिला मताधिकार के सम्बन्ध में भी प्रश्न उठाये गये। भारतीय महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व हेतु चलाये गये अभियान को दो चरणों में बांटा जा सकता है - प्रथम चरण (1917-1928) में स्त्रियों को मताधिकार दिलाना तथा उन्हें विधायिकाओं तक पहुंचाना प्रमुख मुद्दे रहे। द्वितीय चरण (1928-1937) में मताधिकार को उदार बनाना तथा विधायिकाओं में महिलाओं के प्रतिनिधित्व में वृद्धि प्रमुख विषय रहे हैं। 1917 में एनी बेसेन्ट और कुछ अन्य महिलाओं ने माण्टेग्यू से मुलाकात की और भारतीय महिलाओं के लिये मताधिकार की मांग की। इसी दौरान अनेक अखिल भारतीय महिला संगठन अस्तित्व में

आये। 1917 में एनी बेसेन्ट, डोरोथी जिना राजदासा, मलाथी पटवर्धन, अम्मू स्वामीनाथन, श्रीमती दादाभाई और श्रीमती अम्बुजामल ने ''भारतीय महिला संघ'' की स्थापना की। सही मायनों में भारत में महिलाओं के इस प्रथम संगठन ने होमरूल आन्दोलन का जोरदार समर्थन किया। 1926 में ''अखिल भारतीय महिला सम्मेलन'' की स्थापना की गई जो महिला मताधिकार श्रम के मुद्दों, राहत के मुद्दों और राष्ट्रीय कार्यो में पूरी तरह सक्रिय रही।

स्त्री मताधिकार के लिये संघर्ष करने वाली महिलाओं में एनी बेसेन्ट, रानी राजदेव, बेगम हसरत मोहानी एवं सरोजनी नायडू प्रमुख थी। इस महिला उत्थानवादी गुट ने प्रथम गोलमेज सम्मेलन (1930) में भी भाग लिया जिसका कांग्रेस ने बहिष्कार किया था क्योंकि एक और प्रतिनिधिमण्डल जोकि मण्डी की रानी श्रीमती अहमद तथा श्रीमती चिताम्बर के द्वारा संचालित थी, ने स्त्री मताधिकार हेतु पुरूषो के समान योग्यता की नहीं वरन पत्नीत्व की विशेषताओं के आधार पर मताधिकार की मांग की। ब्रिटिश सरकार ने सरकारी पक्ष से सहानुभूति रखने वाली दो उत्थानवादी महिलाओं राजाबाई सबुबारोयान तथा बेगम शहनवाज की नियुक्ति की, जिन्होंने पत्नीत्व विशेषता के विचार एवं आरक्षण का समर्थन किया।[1]

सम्मेलन से वापस आने से पूर्व Women's Indian Association को सुबुबारोयान ने पत्र लिखकर सलाह मांगी कि किन मुद्दों को उठाया जाय।[2] किन्तु इस महिला संगठन ने कांग्रेस के समर्थन का दावा किया। इस प्रकार भारतीय महिला आन्दोलन में एक दरार पड़ गई। राष्ट्रीय आन्दोलन से जुड़ी महिलाओं की स्थिति महिला प्रतिनिधित्व के मुद्दे पर स्पष्ट न हो सकी।

1931 में कांग्रेस के मूल अधिकारों के संकल्प में स्त्री-पुरूष समानता को स्वीकार कर लेने के बाद प्रमुख महिला संगठनों की राष्ट्रवादी नेताओं ने सरोजनी नायडू के नेतृत्व में सम्मेलन किया तथा एक संयुक्त आशय पत्र की रूपरेखा बनाई जिसमें निम्न मुद्दे सम्मिलित थे[3]-

---

[1] Parliament Paper 1930-37, and 37-72 III P5
[2] Indian Social Reformer, Oct. 11, 1930, P. 93
[3] पवन कुमार पाण्डेय व पीयूष कुमार जायसवाल, पंचायती राज और महिला सशक्तिकरण, द.यू.पी.जर्कता ऑफ पोलिटिकल सांइस भाग 1, नं0 18 2006, पृ0 107

1. मतदान, चुनाव लड़ने, सार्वजनिक कार्यालय या रोजगार में लिंग के आधार पर भेदभाव न हो ।

2. वयस्क मताधिकार ।

3. विधान मण्डलों में महिला प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने हेतु विशिष्ट उपायों की अस्वीकृति।

समान अधिकारों की मांग करने वाले गुट ने द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में अल्पसंख्यक समिति को यह आशय पत्र दिया। इस पत्र में तीन महिला प्रतिनिधि - राधा बाई सुब्बारोयान, बेगम शाहनवाज एवं सरोजनी नायडू उपस्थित थी । नायडू एवं शाहनवाज ने अपने पूर्व दृष्टिकोण में परिवर्तन लाते हुए समान अधिकारों की मांगी की जबकि सुब्बारोयान का मत था कि समान आधारों पर पुरूषों से प्रतिस्पर्धा कर महिलायें नहीं चुनी जा सकेंगी । इसलिये उन्होंने प्रथम तीन विधान सभाओं में पांच प्रतिशत सीटें आरक्षित करने का सुझाव दिया। 1935 में भारत शासन अधिनियम पारित किया गया जिसमें महिलाओं के लिये 41 स्थान आरक्षित किये गये।[1]

भारतीय संविधान और महिलायें

भारत का संविधान समानता के सिद्धान्त पर आधारित है और सभी नागरिकों को जाति, धर्म, भाषा क्षेत्र अथवा लिंग पर आधारित बिना किसी भेदभाव के विधि के समक्ष समानता और विधि के समान संरक्षण की गारण्टी प्रदान करता है। यह न केवल मौलिक अधिकारों और स्वतंत्रताओं की गारण्टी प्रदान करता है बल्कि जाति, धर्म, नस्ता, लिंग, जन्म स्थान आदि किसी भी भेदभाव को प्रतिबन्धित करता है। इस आधार पर संविधान का अनुच्छेद 325 और 326 राजनीतिक गतिविधियों में समान सहभागिता और समान रूप से मतदान के अधिकार की व्यवस्था करता है।

[1] वही

शासन संरचना

समान राजनीतिक सहभागिता व मतदान के अधिकार के वस्तुस्थिति का परीक्षण करने से पूर्व भारतीय शासन की आधारभूत संरचना को जान लेना आवश्यक होगा, जिससे कि यह स्पष्ट हो सके कि शासन के कितने और किन-किन स्तरों पर इन दोनों राजनीतिक मूल्यों का प्रयोग होता है।

15 अगस्त 1947 को स्वतंत्र हुए भारत ने 26 जनवरी 1950 को अपने शासन की रूपरेखा भारत का संविधान लागू किया जिसमें भारत को एक सम्प्रभु लोकतांत्रिक गणराज्य[1] घोषित किया गया । भारतीय शासन के लिये संविधान ने संसदीय शासन और संघात्मक स्वरूप को स्वीकार किया। इस व्यवस्था के अन्तर्गत शीर्ष पर केन्द्रीय (संघीय) सरकार है और इसके समानान्तर 28 राज्यों और 7 संघ शासित क्षेत्रों की सरकारें हैं। प्रत्येक राज्य की अपनी स्थानीय स्वशासन की नगरीय व ग्रामीण इकाइयां हैं। शासन के ये तीनों स्तर संयुक्त रूप से प्रशासकीय कार्यों को सम्पादित करते हैं। भारतीय शासन के स्वरूप को निम्न तालिका के माध्यम से समझा जा सकता है -

---

[1] भारतीय संविधान की प्रस्तावना
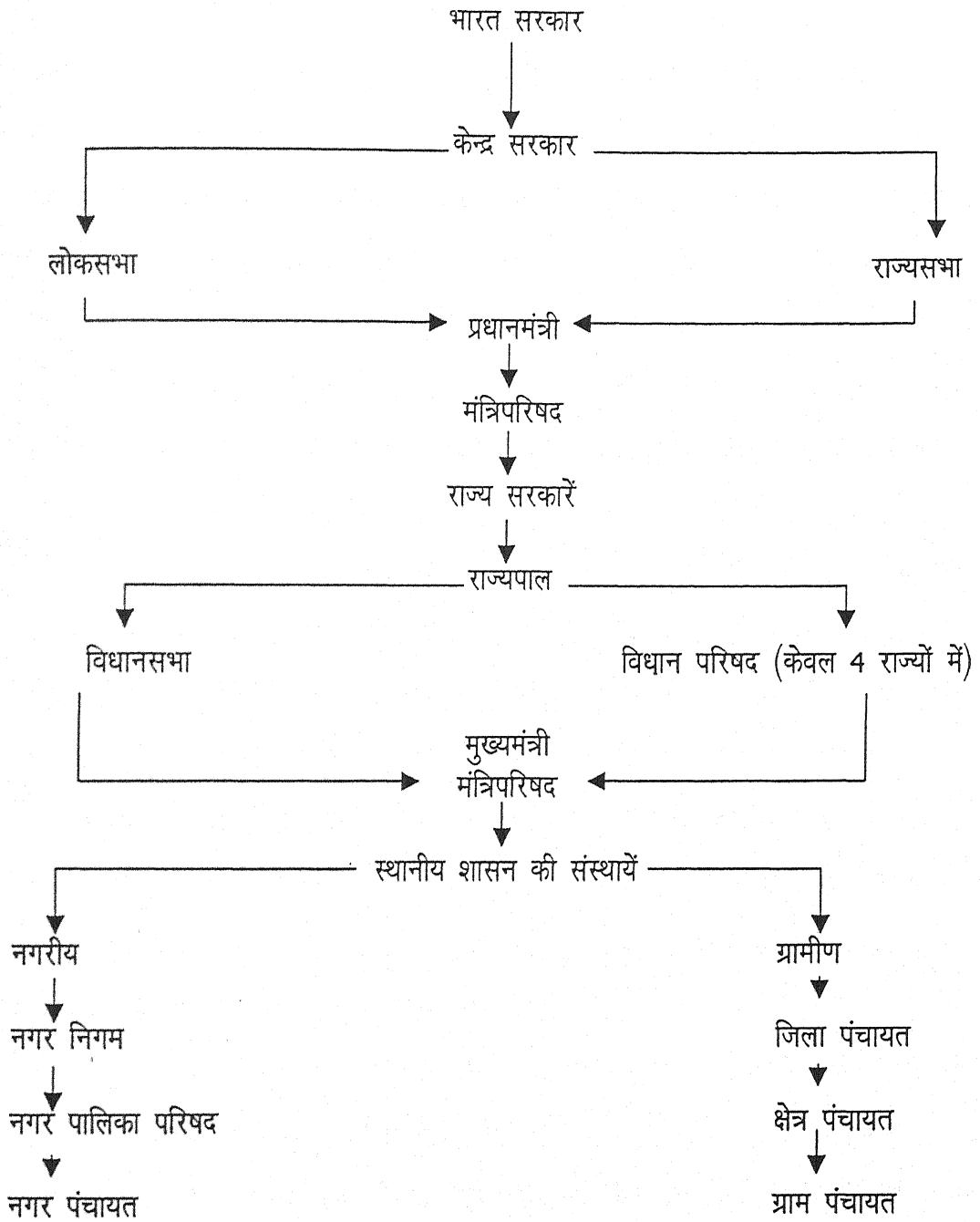
केन्द्रीय सरकार में मुख्य कार्यपालक राष्ट्रपति है, जो संसदीय शासन के व्यवहारों से नाममात्र की कार्यपालिका होता है। वास्तविक कार्यपालिका प्रधानमंत्री सहित मंत्रिपरिषद होती है, जिसके सदस्य संसद के दो सदनों- लोकसभा व राज्यसभा , में से किसी न किसी के सदस्य

अवश्य होते हैं। ऐसा न होने की स्थिति में नियुक्त मंत्री को छः माह के भीतर संसद के किसी सदन की सदस्यता प्राप्त करनी होती है। संसद का निम्न सदन लोकसभा- जनता का प्रतिनिधि सदन है और यह अधिक शक्तिशाली है। राज्यसभा राज्यों का प्रतिनिधित्व करती है। लोकसभा के सदस्यों का चुनाव सार्वभौम वयस्क, मताधिकार के आधार पर होता है जिसमें 18 वर्ष की आयु के प्रत्येक स्त्री-पुरूष को बिना किसी भेदभाव के मतदान का अधिकार है। 25 वर्ष की आयु के प्रत्येक भारतीय नागरिक को लोकसभा चुनाव लड़ने का समान अधिकार है। राज्यसभा का प्रत्याशी होने के लिये भारतीय नागरिक की आयु 30 वर्ष अवश्य होनी चाहिये। राज्यसभा के सदस्यों का चुनाव सम्बन्धित राज्य के विधानसभा सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली के एकल संक्रमणीय मत पद्धति से किया जाता है।

राज्य के शासन में मुख्य कार्यपालक (नाममात्र कार्यपालिका), राज्यपाल होता है। वास्तविक कार्यपालिका मुख्यमंत्री सहित मंत्रिपरिषद होती है जिसके सदस्य अनिवार्य रूप से विधान मण्डल के सदस्य होते हैं। राज्यों में अधिकांश विधान मण्डल एक सदनात्मक है।[1] जिन राज्यों में दो सदन है, वहां निचला सदन विधानसभा व उच्च सदन विधान परिषद कहलाता है। विधान सभा जनता का प्रतिनिधि सदन है और सार्वभौम वयस्क मताधिकार के आधार पर इसका निर्वाचन होता है। विधान परिषद सदस्यों में 5/ 6 सदस्य निम्नांकित निर्वाचन क्षेत्रों से आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली के एकल संक्रमणीय मत प्रणाली से चुने जाते हैं, जबकि शेष 1/ 6 सदस्यों को राज्यपाल द्वारा मनोनीत किया जाता है -

1. 1/ 3 सदस्य नगर पालिका, जिला बोर्ड या संसद द्वारा इंगित स्थानीय संस्थाओं के सदस्यों वाले मण्डल द्वारा चुने जायेंगे।
2. 1/ 12 सदस्य राज्य के उन स्नातकों द्वारा निर्वाचित किये जायेंगे जिन्होंने स्नातक परीक्षा निर्वाचन से तीन वर्ष पूर्व पास कर ली हो।
3. 1/ 12 सदस्य, माध्यमिक या उच्च कक्षाओं के शिक्षक, जिन्हें 3 वर्ष का अनुभव हो, द्वारा निर्वाचित होंगे।

[1] केवल बिहार, उत्तर प्रदेश, और महाराष्ट्र व कर्नाटक में ही विधान परिषदों का अस्तित्व है।

4. 1/ 3 सदस्य विधानसभा के सदस्यों द्वारा निर्वाचित किये जायेंगे।

स्थानीय शासन का स्वरूप एवं व्यवस्था ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र में भिन्न-भिन्न हैं। ग्रामीण क्षेत्र में स्थानीय शासन 'पंचायती राज' के नाम से जाना जाता है। इसमें स्थानीय शासन की त्रिस्तरीय संरचना होती है। सबसे निचले स्तर पर ग्राम पंचायत होती है जिसके प्रमुख - ग्राम प्रधान व सदस्यों का निर्वाचन सीधे जनता द्वारा किया जाता है । दूसरे स्तर पर क्षेत्र पंचायतें होती है, जिसके सदस्यों का निर्वाचन प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा व प्रमुख का निर्वाचन अप्रत्यक्ष रूप से सदस्यों द्वारा किया जाता है । शीर्ष स्तर पर जिला पंचायत होती है जिसके सदस्यों का चुनाव प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा किया जाता है । किन्तु जिला पंचायत अध्यक्ष का चुनाव सदस्यों के द्वारा किया जाता है। 73वें संविधान संशोधन द्वारा पंचायत संस्था के हर स्तर पर सदस्यों एवं अध्यक्षों के पदों पर अनुसूचित जाति व जनजाति के लिये उनकी आबादी के अनुपात में 23 प्रतिशत, पिछड़े वर्ग को उनकी आबादी के अनुपात में 27 प्रतिशत, व महिलाओं को एक तिहाई पदों पर आरक्षण प्रदान किया गया है।[1]

नगरीय क्षेत्र में नगर के आबादी व स्तर के आधार पर तीन प्रकार के स्थानीय शासन इकाइयों की व्यवस्था की गई है, जिन्हें नगर पंचायत, नगर पालिका व नगर निगम के नाम से जाना जाता है । इन संस्थाओं के अध्यक्ष व सदस्यों का निर्वाचन प्रत्यक्ष रूप से जनता के द्वारा किया जाता है। 74वें संविधान संशोधन द्वारा इन संस्थाओं के पदों पर भी अनुसूचित जाति, जनजाति , पिछड़े वर्ग व महिलाओं के लिये क्रमशः 23 प्रतिशत, 27 प्रतिशत व 33 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की गई है।

इस प्रकार भारतीय संविधान के अनुसार शासन के इन विभिन्न स्तरों पर समाज के सभी वर्गो के लोगों को निर्णयकारिता में सहभागी बनाने का प्रयास किया गया है। स्थानीय शासन की इकाइयों में दिया गया आरक्षण अब तक पीछे रहे समूहों के राजनीतिक समाजीकरण और सहभागिता की प्रक्रिया तेज और प्रभावी करेगा, इस बात की अपेक्षा की जाती है ।

[1] आरक्षण के इस व्यवस्था की विस्तृत रूपरेखा अध्याय तीन में दी गयी है।

महिलाओं को समान अधिकार प्रदान करने वाले प्रावधान

महिलाओं को जीवन के हर क्षेत्र में समान अधिकार प्रदान करने वाले प्रावधानों को दो वर्गो में बांटा जा सकता है -

1. राष्ट्रीय कानून
2. अन्तर्राष्ट्रीय कानून

1. राष्ट्रीय कानून

भारत का सर्वोच्च कानून भारत का संविधान है। संविधान के विभिन्न भागों में महिलाओं पुरूषों के समान अधिकारों का उल्लेख किया गया है -

क. प्रस्तावना :- भारतीय संविधान की प्रस्तावना भारत के समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समानता प्रदान करने की स्पष्ट घोषणा करता है।

ख. मौलिक अधिकार :- भारतीय संविधान में वर्णित मौलिक अधिकार सभी नागरिकों को बिना किसी भेदभाव के समान रूप से प्राप्त है। इस संदर्भ में निम्न अधिकारों का उल्लेख महत्वपूर्ण होगा -

1. अनुच्छेद 14 सभी व्यक्तियों को कानून के समक्ष समानता व काननू के समान संरक्षण की गारंटी प्रदान करता है।
2. अनु0 15 लिंग, धर्म, नस्ल, जाति, जन्म स्थान किसी भी आधार पर किसी भी प्रकार के भेदभाव को प्रतिबन्धित करता है। इस अनुच्छेद का खण्ड 3 महिलाओं और बच्चों के लिये विशेष व्यवस्था करता है।
3. अनु0 16 सभी नागरिकों को सार्वजनिक सेवा में समान अवसर की गारण्टी प्रदान करता है। इस सम्बन्ध में इस अनु0 का भाग 2 महत्वपूर्ण हे जिसमें कहा गया है कि ''केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, उद्भव, जन्म स्थान, निवास अथवा इनमें से किसी भी आधार पर किसी नागरिक के लिये राज्याधीन किसी नौकरी या पद के विषय में न अपात्रता

होगी और न भेदभाव किया जायेगा'' किन्तु संविधान में इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में तीन अपवादों की व्यवस्था की गई है -

(i) राज्य के अधीन नौकरियों के सम्बन्ध में संसद निवास स्थान सम्बन्धी शर्त लगा सकती है।

(ii) राज्य की दृष्टि में जिन जातियों का लोक सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व न हो, उनके लिये पदों व नौकरियों का आरक्षण किया जा सकता है।

(iii) किसी धार्मिक या साम्प्रदायिक संस्था के अन्तर्गत किसी पद का अधिकारी उसी सम्प्रदाय व धर्म का सदस्य हो सकता है।

4. अनु0 19(अ) सभी नागरिकों को समान रूप से विचार व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रदान करता है।
5. अनु0 19(ब) शान्तिपूर्ण निरायुध सम्मेलन की स्वतंत्रता प्रदान करता है।
6. अनु0 19(स) संघ एवं संगठन निर्माण की स्वतंत्रता प्रदान करता है।
7. अनु0 19(द) में भारत के क्षेत्र में सबको निर्बाध भ्रमण की स्वतंत्रता प्रदान की गई है।
8. अनु0 19(च) के अनुसार नागरिक भारत के किसी भी क्षेत्र में बसने व रहने का अधिकार रखता है।
9. अनु0 19(छ) कोई वृत्ति, व्यापार या उपजीविका की स्वतंत्रता प्रदान करता है।
10. अनु0 21 में जीवन व व्यक्तिगत स्वतंत्रता की गारंटी प्रदान की गई है।
11. अनु0 23(1) शोषण, बलात श्रम व मानव क्रय विक्रय को प्रतिबन्धित करता है।

ग. नागरिक और राजनीतिक अधिकार :-

किसी भी लोकतांत्रिक समाज में मतदान के अधिकार के महत्व को भारत के संविधान निर्माताओं ने भली प्रकार समझा था। इसी का परिणाम था ''सार्वभौम वयस्क मताधिकार'' प्रणाली को मान्यता प्रदान करना, भारतीय संविधान का अनुच्छेद 326 भारत के सभी नागरिकों के समान राजनीतिक स्तर को स्वीकार करता है और यही कारण है कि भारत के

सभी 18 वर्ष की आयु के नागरिकों को बिना किसी भेदभाव के मतदान का अधिकार प्रदान किया गया है । साथ ही भारतीय जनप्रतिनिधित्व अधिनियम सभी नागरिकों को निर्वाचित होने और राजनीतिक प्रतिक्रियाओं में भाग लेने का समान अधिकार प्रदान करता है। इतना ही नहीं समाज के कमजोर वर्गो को राजनीतिक प्रक्रिया में वास्तविक रूप से सहभागी बनाने के लिये 73वें व 74वे संविधान संसोधन द्वारा अनु0 243 (डी) व 243 (टी) में अनुसूचित जाति, जनजाति, पिछडे वर्ग व महिलाओं के लिये पंचायत संस्थानों और नगर निगम , नगर पालिका व नगर पंचायतों में आरक्षण भी प्रदान किया गया है। महिलाओं के लिये यह आरक्षण 33 प्रतिशत है।

घ. सामाजिक-आर्थिक अधिकार :-

भारतीय संविधान के अन्तर्गत नागरिकों के सामाजिक, आर्थिक अधिकारों का उल्लेख ''राज्य के नीति निर्देशक तत्वों'' के अन्तर्गत किया गया है। यद्यपि ये तत्व अन्यायविष्ट और ''नैतिक आदेश'' मात्र हैं किन्तु जनकल्याण की भावना पर आधारित होने के कारण जनमत की नैतिक शक्ति का समर्थन इन्हें प्राप्त होता है और लोकप्रियता का दावा करने वाली सरकारें इन सिद्धान्तों की उपेक्षा करने का साहस नहीं कर पाती और संसदीय अधिनियमों के माध्यम से इन्हें लागू करने का प्रयास करती हैं। महिलाओं के सामाजिक-आर्थिक उन्नयन व समान भागीदारी से सम्बद्ध प्रमुख निर्देशक तत्व निम्न हैं -

1. सभी नागरिकों- पुरूषों व स्त्रियों को समान रूप से जीवन यापन के साधन उपलब्ध कराना राज्य का दायित्व होगा (अनु0 39(अ)) ।
2. ऐसी औद्योगिक नीति व हालात बनाये जाये, जिनमें शोषण न हो, स्त्रियों व बच्चों की सुकुमारावस्था का दुरूपयोग न हो (अनु0 39(च)) ।
3. पुरूषों व स्त्रियों को समान कार्य के लिये समान वेतन प्रदान करने की व्यवस्था (अनु0 39 (द))
4. राज्य महिलाओं के लिये प्रसूति तथा मजदूरी के लिये काम की उचित परिस्थिति के निर्माण के लिये प्रयत्न करेगा (अनु0 42)

5. मौलिक कर्तव्यों के अन्तर्गत राज्य का यह कर्तव्य निर्धारित किया गया है कि वह भारत के सभी लोगों में एकरसता और समान भ्रातत्व की भावना का विकास करे, जो धर्म, भाषा, प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो और ऐसी प्रथाओं का त्याग करें जो स्त्रियों के सम्मान के विरूद्ध हो (अनु0 51(क)5)

6. अनुच्छेद 41 में कहा गया है कि एक नागरिक के काम पाने, शिक्षा प्राप्त करने, शिक्षा और बेकारी में सरकार द्वारा उचित संरक्षण दिया जाना चाहिये।

7. अनु0 43 में उल्लिखित है कि राज्य कानून द्वारा ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करें जिनसे मजदूरों का शोषण न हो, उनका जीवन स्तर ऊचा उठे तथा सामाजिक अवसर प्राप्त हो ।

8. सम्पत्ति अर्जित करने और रखने का वैधानिक अधिकार स्त्रियों और पुरूषों दोनों को समान रूप से प्राप्त है ।

इनके अतिरिक्त संसद द्वारा समय-समय पर पारित अनेक अधिनियमों द्वारा महिलाओं के अधिकारों की रक्षा व उनके सशक्तीकरण के प्रयास किये गये हैं। संविधान के अन्तर्गत महिलाओं को प्रदत्त समानता के सभी अधिकारों को वास्तव में लागू कराने के लिये उनके सुरक्षात्मक प्रावधान करने के लिये जिन विशेष अधिनियमों की व्यवस्था की गई हे, वे निम्न हैं -

1. वैश्यावृत्ति निवारण अधिनियम 1956 (संशोधित 1986)
2. दहेज निषेध अधिनियम 1961 (संशोधित 1986)
3. विवाह कानून अधिनियम 1976
4. बगान श्रम अधिनियम 1951 जो महिला कर्मचारियों को अपने बच्चों को दूध पिलाने के लिये आवश्यक अवकाश की व्यवस्था करता है।
5. कर्मचारी राज्य बीमा विनियमन अधिनियम 1952
6. खान अधिनियम 1952 (भूमिगत खदानों में महिलाओं के नियोजन पर रोक)
7. प्रसूति सुविधा अधिनियम 1961

8. समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976

9. बाल विवाह निषेध अधिनियम 1976

10. स्त्री-अशिष्ट निरूपण अधिनियम 1986 (महिलाओं के अशलील प्रदर्शन पर रोक)

11. सती निषेध अधिनियम 1987

12. प्रसव पूर्व निदान तकनीकी अधिनियम 1994 (गर्भावस्था में बालिका भ्रूण की पहचान कराने पर रोक लगाने की व्यवस्था)

महिलाओं से सम्बन्धित विकास योजनायें

महिलाओं के लिये शासन द्वारा कई विकास कार्यक्रमों एवं कल्याणकारी योजनाओं का भी संचालन किया जाता रहा है जिससे उनके जीवन स्तर में सुधार लाया जा सके और समाज में उनकी सहभागिता को सशक्त बनाया जा सके। केन्द्र सरकार द्वारा चलायी जाने वाली इस प्रकार की प्रमुख योजनायें निम्न हैं -

1. ड्वाकरा (1982) योजना का उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं को स्वरोजगार के अवसर उपलब्ध कराते हुए उनके स्वास्थ्य, शिक्षा, स्वच्छता, पोषाहार और शिशुओं की देखभाल करने जैसी मूलभूत सेवाएं प्रदान करना हैं 1999-2000 में इसे स्वर्ण जयन्ती स्वरोजगार योजना में मिला दिया गया है।

2. न्यू मॉडल चर्खा योजना (1987) ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने के लिये आर्थिक सहायता, प्रशिक्षण और अनुदान देकर स्वावलम्बी बनाने के उद्देश्य से प्रारम्भ की गई हैं।

3. नारौड प्रशिक्षण योजना (1989) महिलाओं को विभिन्न व्यवसायों, जैसे दरी, कालीन, चिकन व ब्लाक प्रिटिंग आदि का प्रशिक्षण देकर उन्हें आर्थिक गतिविधियों की ओर प्रेरित करती है।

4. महिला साम्राज्य योजना (1989) ग्रामीण महिलाओं को समानता व सजगता के लिये उचित शिक्षा की व्यवस्था करती है।

5. मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य कार्यक्रम (1992) माताओं और शिशुओं को पोषाहार उपलब्ध कराने, सुरक्षित मातृत्व व टीकाकरण आदि के माध्यम से शिशु व मातृ मृत्यु दर में कमी लाने के उद्देश्य से प्रेरित है।

6. किशोरी बालिका योजना (1992) ग्रामीण निर्धन परिवारों की बालिकाओं के उचित स्वास्थ्य, पोषण एवं शिक्षा की व्यवस्था करती है।

7. महिला समृद्धि योजना (1993) ग्रामीण महिलाओं में बचत की आदत डालकर उन्हें, सशक्त बनाने का प्रयास करती है।

8. राष्ट्रीय महिला कोष की योजनायें (1993) जिसमें ऋण योजना, ऋण प्रोत्साहन योजना, स्व-सहाय समूह योजना व विपणन वित्त योजनायें शामिल हैं। ये योजनायें गरीबी की रेखा से नीचे के परिवार को महिलाओं में आर्थिक, सामाजिक परिवर्तन लाने के लिये उत्पादन के लिये ऋण सम्बन्धी सुविधायें उपलब्ध कराकर उनकी आय बढ़ाने का उद्देश्य पूरा करती है।

9. राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना (1994) गरीबी रेखा से नीचे की महिलाओं को प्रसूति के लिये आर्थिक सहायता प्रदान करती है।

10. इन्दिरा महिला योजना (1995) ग्रामीण और शहरी महिलाओं को आर्थिक रूप से स्वावलम्बन प्रदान करना।

11. ग्रामीण महिला विकास परियोजना (1996) ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि करना, उन्हें जागरूक बनाना ।

12. राज्य राजेश्वरी बीमा योजना (1997) गरीबी रेखा के नीचे की बालिकाओं और महिलाओं को बिना किसी प्रीमियम भुगतान पर विकलांगता की स्थिति में आत्म सम्मान के साथ जीवन जीने हेतु एकमुश्त आर्थिक सहायता प्रदान करना।

13. स्वास्थ्य सखी योजना (1997) अनुसूचित जाति, जनजाति की महिलाओं को प्रजजन एवं बाल स्वास्थ्य के विषय में आवश्यक प्रशिक्षण देकर उन्हें आर्थिक लाभ प्रदान करना।

14. बालिका समृद्धि योजना (1997) गरीबी रेखा के नीचे जन्म लेने वाली बालिका की माता को पौष्टिक आहार तथा कक्षा 10 तक बालिका की शिक्षा के लिये शैक्षिक अनुदान प्रदान करना

15. डबाकुआ योजना (1997) शहरी क्षेत्रों में निर्धन महिलाओं को आर्थिक, सामाजिक विकास, के अवसर प्रदान करना

16. महिला सशक्ति योजना (1998) - महिलाओं को स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से आर्थिक व सामाजिक रूप से सशक्त बनाना ।

17. किशोरी शक्ति योजना (2000) - किशोरी बालिकाओं के लिये स्वास्थ्य व पोषण की उचित व्यवस्था करके उन्हें विकास के पर्याप्त अवसर प्रदान करना।

18. स्त्री शक्ति पुरस्कार योजना (2000) - महिलाओं के अधिकारों के लिये संघर्ष करने वाली महिलाओं को राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित कर प्रोत्साहन देना ।

19. महिला स्वधार योजना (2001)- स्वयं सहायता समूह के गठन के माध्यम से महिलाओं को आर्थिक सामाजिक सशक्तीकरण प्रदान करने के उद्देश्य से प्रेरित है।

20. राष्ट्रीय पोषाहार मिशन योजना (2001) का उद्देश्य गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों, गर्भवती महिलाओं, धात्री माताओं, किशोरियों को सस्तें दरों पर अनाज उपलब्ध कराना है।

21. महिला उद्यमियों हेतु ऋण योजना (2001) - प्रधानमंत्री द्वारा घोषित इस योजना का उद्देश्य महिला उद्यमियों को अगले तीन वर्षो तक सार्वजनिक बैंको द्वारा कुल ऋण राशि का 5 प्रतिशत भाग ऋण के रूप में उपलब्ध कराना है।

22. मौलाना आजाद राष्ट्रीय छात्रवृत्ति योजना (2003) - का उद्देश्य अल्पसंख्यक समुदाय की निर्धन प्रतिभाशाली छात्राओं को विशेष छात्रवृत्ति प्रदान कर उच्च्य शिक्षा के लिये प्रोत्साहित करना है।

23. जननी सुरक्षा योजना (2003) - का उद्देश्य गर्भवती महिलाओं को स्वास्थ्य केन्द्र में पंजीकरण के बाद से शिशु जन्म तथा आवश्यक चिकित्सा सुविधायें उपलब्ध कराते हुए बच्चों के जन्म पर नगद सहायता उपलब्ध कराना है।

अन्तर्राष्ट्रीय कानून

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर महिला अधिकारों व उनके सशक्तीकरण के लिये जो प्रयोग किये गये उनमें प्रमुख निम्न हैं :-

1. महिलाओं के विरूद्ध सभी प्रकार के भेदभाव के अन्त से सम्बन्धित सम्मेलन (Convention on the Elimination of all Forms of Discrimiration Against Women – CEDAW)

भारत ने इस अन्तर्राष्ट्रीय अधिवेशन की सिफारिशों की पुष्टि 1993 में की । इस अधिवेशन की प्रस्तावना इस बात का स्पष्ट उल्लेख करती है कि " महिलाओं के साथ भेदभाव अधिकारो के समान और मानव गरिमा के प्रति सम्मान के सिद्धान्त का उल्लघंन करता है। यह पुरूषों के साथ समान स्तर पर देश के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन में महिलाओं की सहभागिता के मार्ग में एक बाधा है। परिवार और समाज के समृद्धि की वृद्धि को बाधित करता है और अपने देश और मानवता के प्रति महिलाओं के सम्भावनाओं के पूर्ण विकास को कठिन बना देता है।"

प्रस्तावना के अतिरिक्त संविदा में महिलाओं के प्रति भेदभाव के अन्त के सम्बन्ध में राज्य के दायित्वों का निर्धारण किया गया है -

1. संविदा के अनु0 1 के अनुसार लिंग के आधार पर किया गया कोई भी भेदभाव, चाहे वह निष्कासन के रूप में हो या प्रतिबन्ध के रूप में, जो मानव क्रियाओं के प्रत्येक क्षेत्र में मानव के समान अधिकारों और स्वतंत्रताओं की अवहेलना करता हो, उसे राज्य द्वारा रोका जाना चाहिये।

2. अनु0 2 उन उपायों का वर्णन करता है जिनसे भेदभाव की प्रवृत्ति को समाप्त किया जा सकता है। ये उपाय निम्न हैं -

(i) राज्य के संविधान और अन्य कानूनों में समानता के सिद्धान्त को मान्यता दी जाय और उनका सार्थक क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाय।

(ii) भेदभाव के विरूद्ध सुरक्षा सुनिश्चित करने के उद्‌देश्य से संस्थाओं की स्थापना की जाय।

(iii) इस बात की व्यवस्था सुनिश्चित की जाय की सार्वजनिक अधिकारी और संस्थायें अपने कार्य और आचरण में भेदभाव न करें।

(iv) ऐसे सभी कानूनों, प्रथाओं और परम्पराओं को समाप्त किया जाय जो महिलाओं के प्रति भेदभाव की भावना से युक्त हो ।

3. अनु0 3 जीवन के सभी क्षेत्रों- सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक में पुरूषों के समान महिलाओं में भी मौलिक मानव अधिकारों की गारन्टी प्रदान करता है।

4. अनु0 4 समानता प्राप्त करने के उद्‌देश्य से कुछ अस्थायी उपायों का सुझाव देता है।

5. अनु0 5 राज्य को ऐसे उपायों को अपनाने का सुझाव देता है जो पुरूषो और स्त्रियों के ऐसे सामाजिक और सांस्कृतिक आचरण के तरीकों में सुधार कर सके जो पूर्वाग्रह और परम्परागत अभ्यास पर आधारित हो ।

6. सम्मेलन का अनु0 7 विशेष रूप से महिलाओं की सहभागिता का उल्लेख करता है।

7. अनु0 8 राज्य का यह दायित्व निर्धारित करता है कि वह पुरूषों के समान महिलाओं की अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर और अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के कार्यो में सरकार में समान सहभागिता सुनिश्चित करें।

8. अनु0 10 और 11 शिक्षा और नौकरियों के अवसरों के सम्बन्ध में पुरूषों और स्त्रियों में भेदभाव, समाप्त कर समान अधिकार सुनिश्चित करते हैं।

9. अनु0 13 विशेष रूप से पारिवारिक लाभों, बैक ऋणों और मनोरंजन की गतिविधियों जैसे सामाजिक व आर्थिक क्षेत्र में स्त्री-पुरूष समानता की स्थापना के लिये पर्याप्त उपाय करने का सुझाव देता है।

10. इसके अतिरिक्त यह सम्मेलन राज्य के सार्वजनिक जीवन में महिलाओं के समान सहभागिता की वकालत करता है।

2. मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा 1948 :-

10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा पारित की गई। इसमें मानव अधिकारों के विभिन्न पहलुओं का व्यापक उल्लेख किया गया है। स्त्री अधिकारों के सम्बन्ध में इस घोषणा के निम्न प्रावधान महत्वपूर्ण है -

1. घोषणा के अनु0 2 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति बिना जाति, रंग, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक अथवा सामाजिक उत्पत्ति जन्म अथवा किसी दूसरे प्रकार के भेदभाव के इस घोषणा में व्यक्त किये गये सभी अधिकारों और स्वतंत्रताओं का पात्र है। इसके अलावा किसी स्थान अथवा देश के साथ जिसका वह व्यक्ति नागरिक है, राजनीतिक परिस्थिति के आधार पर भेदभाव नहीं किया जायेगा चाहे वह स्वतंत्र हो, संरक्षित हो अथवा स्वाशानाधिकार से विहीन हो, अथवा अन्य प्रकार से अल्पप्रभु हो ।

2. अनु0 7 के अनुसार कानून के समक्ष सभी समान हैं और किसी भेदभाव के बिना कानून की सुरक्षा के अधिकारी है। यदि इस घोषणा के विरूद्ध भेदनीति मूलक आचरण किया जाय या किसी को ऐसे आचरण की प्रेरणा दी जाये तो उस अवस्था में सब समान रूप से रक्षा के अधिकारी हैं।

3. नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र संघ प्रसंविदा :-

यह प्रसंविदा संयुक्त राष्ट्र महासभा के निर्देश पर मानवाधिकार आयोग द्वारा 1966 में तैयार किया गया जिसे 15 दिसम्बर 1989 में संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा अनुमोदित किया गया । इस प्रसंविदा के प्रमुख प्रावधान निम्न हैं :-

1. राज्य स्त्रियों और पुरूषों को नागरिक और राजनीतिक अधिकारों के समान उपयोग की गारंटी प्रदान करेगा । (अनु0 3)
2. सभी व्यक्ति विधि के समक्ष समान होंगे और सबको कानून का समान संरक्षण प्राप्त होगा। इस सम्बन्ध में कानून किसी भी प्रकार के भेदभाव का निषेध करेगा । (अनु0 26)
3. प्रत्येक व्यक्ति को कानून के समक्ष एक व्यक्ति के रूप में पहचान प्राप्त करने का अधिकार होगा । (अनु0 16)

4. आर्थिक सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र प्रसंविदा :-

यह प्रसंविदा भी मानवाधिकार आयोग द्वारा 1966 में तैयार की गई थी। यह प्रतिज्ञा पात्र 3 जनवरी 1976 को लागू किया गया। इसके प्रमुख संदर्भित प्रावधान निम्न हैं :-

1. सभी व्यक्तियों को आत्म निर्णय का अधिकार है इस अधिकार के आधार पर वे स्वतंत्रता पूर्वक अपने राजनीतिक स्तर का निर्धारण कर सकते हैं और अपने सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास को स्वतंत्रतापूर्वक आगे बढा सकते हैं। (अनु0 1)
2. अनु0 9 के अनुसार राज्य सभी व्यक्तियों के सामाजिक सुरक्षा, जिसमें समाजिक बीमा अन्तर्निहित है, के अधिकार को मान्यता प्रदान करेगा।
3. अनु0 11 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपने परिवार में पर्याप्त जीवन स्तर प्राप्त करने का अधिकार होगा।
4. अनु0 3 के अनुसार राज्य का यह दायित्व होगा कि वह प्रत्येक स्त्री पुरूष को बिना किसी भेदभाव के समान रूप से इस प्रसंविदा में वर्णित सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक अधिकारों की प्राप्ति सुनिश्चित करेगा।

5. संयुक्त राष्ट्र संघ चार्टर :- संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर में भी ऐसे प्रावधान हैं जो स्त्री-पुरूष समानता का समर्थन करते हैं -

1. चार्टर की प्रस्तावना में, ''मानव के मौलिक अधिकारों मानव के व्यक्तित्व के गौरव तथा महत्व में तथा पुरूष एवं स्त्रियों के समान अधिकारों'' में विश्वास व्यक्त किया गया है।

2. चार्टर के अनु0 2 में प्रावधान है "मानव अधिकारों के प्रति सम्मान को बढ़ावा देना तथा जाति लिंग, भाषा या धर्म के बिना किसी भेदभाव के मूलभूत अधिकारों को बढ़ावा देना तथा प्रोत्साहित करना "।

3. अनु0 13 में महासभा द्वारा "जाति, लिंग, भाषा या धर्म के भेदभाव के बिना सभी को मानवाधिकार तथा मौलिक स्वतंत्रताओं की प्राप्ति में सहायता देने" की व्यवस्था है।

4. अनु0 55 में प्रावधान है कि संयुक्त राष्ट्र संघ जाति, लिंग, भाषा अथवा धर्म के भेदभाव बिना सभी के लिये मानव अधिकारों तथा मौलिक स्वतंत्रताओं को" बढ़ावा देगा।

इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय कानून व अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों द्वारा भी स्त्रियों के लिये समान अधिकारों की बात कही गई है ।

सिद्धान्त रूप में स्त्रियों और पुरूषों को समान मानते हुए संयुक्त राष्ट्र के चार्टर, मानव अधिकारों की सर्वभौम घोषणा, भारती संविधान में दिये गये अधिकार संसदीय अधिनियमों द्वारा प्राप्त विविध सुरक्षा, कल्याणकारी योजनायें व कार्यक्रम अवश्य ही स्त्रियों को समान रूप से सम्मिलित आर्थिक और राजनीतिक गतिविधियों में संलिप्त करते हैं किन्तु यह मात्र सैद्धान्तिक पक्ष है। स्त्रियों के अधिकारों और सामाजिक जीवन का व्यावहारिक पक्ष कुछ अलग है। भारतीय संविधान को लागू हुए पांच दशक से ऊपर हो चुके हैं किन्तु सामाजिक राजनीतिक जीवन में स्त्रियों की अपेक्षित सहभागिता नहीं प्राप्त की जा सकी है। परिदृश्य में परिवर्तन आया है, किन्तु इसकी गति व परिणाम अपेक्षा से कम है। यद्यपि राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान राजनीति में महिलाओं के सहभागिता की नींव पड़ चुकी थी किन्तु स्वतंत्रता के बाद राजनीतिक प्रक्रिया में इनके सहभागिता बढाने के लिये व्यापक प्रयास नहीं किये गये।

वास्तव में संविधान निर्माताओं को यह विश्वास था कि पर्याप्त कानून सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को गति प्रदान करेगा और स्त्री-पुरूष के बीच समानता की स्थापना कर सकेगा। वस्तुस्थिति यह है कि असमानता और भेदभाव आज भी है । जीवन के हर क्षेत्र में जारी है । यह इस तथ्य से सिद्ध हो जाता है कि स्वतंत्रता के बाद आज भी राजनीतिक और निर्णय निर्माण करने वाली संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी अति न्यून है। आज राजनीति में

भागीदार अधिकांश महिलायें राजनीति के प्रति लगाव या निष्ठा के कारण नहीं बल्कि पारिवारिक संबंधो के कारण अधिक सक्रिय है। इन महिलाओं को राजनीति में तब उतारा गया, जब परिवार में कोई पुरूष परिवार की राजनीतिक परम्परा को आगे ढोने के लिये उपलब्ध नहीं था। इस तथ्य की पुष्टि शासन के विभिन्न स्तरों पर महिलाओं की भागीदारी के मूल्यांकन से स्पष्ट हो जायेगी।

राष्ट्रीय राजनीति और महिला सहभागिता

भारतीय राजनीति में यदि महिलाओं की भागीदारी की अब तक की स्थिति का मूल्यांकन करे तो कुल मिलाकर उनकी सहभागिता और सत्ता में उनकी भागीदारी बढाने के लिये किये गये प्रयासो को किसी भी स्थिति में सन्तोषजनक नहीं कहा जा सकता। हम इस तथ्य से इंकार नहीं कर सकते कि किसी भी अविकसित अथवा पिछड़े वर्ग को विकास की मुख्यधारा से जोड़ने तथा उसे आर्थिक , शैक्षिक, सामाजिक तथा प्रशासनिक क्षेत्रों में विकसित वर्गो के समकक्ष लाने में राजनीति की अहम भूमिका होती है। यदि ऐसे वर्गो की राजनीति में समान व सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित कर दी जाय तो निश्चित रूप से अन्य क्षेत्रों में भी उन्हें अपने उन्नयन के अच्छे अवसर प्राप्त हो सकेगें। किन्तु देश के राजनीतिक परिदृश्य में महिलाओं की भागीदारी का विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि स्वतंत्रता के पश्चात कराये गये आम चुनावों में लोकसभा के लिये चुनी गई महिलाओं की संख्या आजादी के 61 वर्षो के बाद भी दस प्रतिशत का आंकडा प्राप्त नहीं कर सकी है। कमोवेश यही स्थिति राज्य सभा की भी है जहॉ मात्र एक बार (1991) में यह 15 प्रतिशत, 1977 में 10 प्रतिशत व 1985 में 11 प्रतिशत से थोड़ा ऊपर पहुॅचा । निम्न तालिका इस सम्बन्ध में राष्ट्रीय परिदृश्य पर महिला प्रतिनिधित्व की स्थिति पूरी तरह स्पष्ट कर देती है।

तालिका 4.1[1]

भारतीय संसद में महिलाओं का प्रतिनिधित्व

वर्ष	लोकसभा			राज्यसभा		
	कुल सीटें	महिला सांसदों की संख्या	महिला सांसदों का प्रतिशत	कुल सीटें	महिला सांसदों की संख्या	महिला सांसदों का प्रतिशत
1952-57	499	22	4.4	219	16	7.3
1957-62	500	27	5.4	237	18	7.6
1962-67	503	34	6.7	238	18	7.6
1967-71	523	31	5.9	240	20	8.3
1971-76	521	22	4.2	243	17	7.0
1977-80	544	19	3.4	244	25	10.2
1980-84	544	28	5.1	244	24	9.8
1985-89	544	44	8.1	245	28	11.4
1989-91	529	29	5.4	245	24	9.7
1991-96	544	39	7.18	245	38	15.5
1996-98	543	40	7.18	245	20	9.00
1998-99	545	44	8.1	245	19	7.8
1999-04	545	48	8.8	245	20	8.2
2004-con	542	44	8.1	245	22	8.9
औसत	530	34	6.4	241	22	9.12

इसी प्रकार केन्द्र सरकार में यदि महिला मंत्रियों का प्रतिशत देखा जाय तो वह भी कम ही है। भारत सरकार में प्रतिनिधित्व करने वाली महिला मंत्रियों की संख्या प्रत्येक लोकसभावार निम्नवत है :-

[1] स्रोत - निर्वाचन आयोग भारत सरकार ।

तालिका संख्या 4.2

संघीय सरकार में महिला मंत्रियों की संख्या

वर्ष	महिला मंत्रियों की संख्या
1952-57	2
1597-62	3
1962-67	8
1967-70	5
1971-77	4
1977-79	4
1980-84	6
1984-89	10
1989-91	2
01996-96	9
1996-98	4
1998-99	3
1999-2004	10
2004-2008	8

उपर्युक्त दोनो तालिकाओं से स्पष्ट है कि प्रथम लोकसभा (1952-57) में 499 सीटों में से केवल 22 महिलायें निर्वाचित हुई, जो सम्पूर्ण सदस्य संख्या का 4.4 प्रतिशत होता है। इसी समयान्तराल में राज्यसभा के 219 स्थानों में 16 महिला सदस्य थी जिनका प्रतिशत 7.3 था। इस प्रकार दोनो सदनों के महिला सांसदों की कुल संख्या 38 थी किन्तु इन 38 सदस्यों में से केवल दो को मत्रिपरिषद में सम्मिलित किया गया। मंत्रिपरिषद में शामिल की जाने वाली महिलायें थी - राजकुमारी अमृत कौर (कैबिनेट मंत्री) स्वास्थ्य मंत्रालय व मार्गाथम चन्द्रशेखर (उपमंत्री स्वास्थ्य मंत्रालय) । इस लोकसभा के कार्यकाल के दौरान जी. दुर्गा बाई झम्मू

के रूप में नियुक्त की गई थी जबकि नन्दनी सत्पथी, सूचना व प्रसारण उपमंत्री, जहांनारा जयपाल सिंह पर्यटन और नागरिक उडड्यन उपमंत्री व सरोजिनी महिषी संसदीय सचिव के बाद उपमंत्री के रूप में नियुक्त की गई थी। इनके अतिरिक्त टी लक्ष्मी कण्ठम्मा, तारकेश्वरी सिन्हा, सुशीला रोहतगी और जीवन शाह अध्यक्ष के पैनल में सम्मिलित थी।

पांचवी लोकसभा (1971-77) में महिला लोकसभा सदस्यों की संख्या चौथी लोकसभा की तुलना में घटकर 22 रह गई जो सम्पूर्ण सदस्य संख्या का मात्र 4.2 प्रतिशत था। राज्यसभा में भी महिला सदस्यों की संख्या 20 से घटकर 17 रह गई। प्रधानमंत्री इंदिरागांधी सहित केवल चार महिलायें ही मंत्री पद प्राप्त कर सकी। इन्दिरा गांधी के अलावा जो महिलायें मंत्री बनी वे उपमंत्री स्तर की ही थी। सुशीला रोहतगी वित्त विभाग में उपमंत्री, सरोजनी महिषी पर्यटन एवं नागरिक उड्डयन उपमंत्री और मनोरमा पाण्डेय को सूचना प्रसारण और गृह उपमंत्री के रूप में नियुक्त किया गया था। इनके अलावा शीला कौल अध्यक्ष पैनल के लिये नामित की गई थी।

छठी लोकसभा (1977-79) में महिला सांसदों की संख्या घटकर 19 रह गई जो सम्पूर्ण सदन का मात्र 3.4 प्रतिशत थी। छठी लोकसभा के दौरान एकमात्र महिला कैबिनेट मंत्री थी सत्यवनी मुथू जिनको समाज कल्याण विभाग सौंपा गया था। मंत्रिपरिषद में शामिल अन्य महिला मंत्री थी रेनुका देवी बाराटाकी, राज्यमंत्री शिक्षा, समाज कल्याण और संस्कृति , आभामती, उद्योग राज्यमंत्री और रशीदा हक चौधरी, राज्यमंत्री समाज कल्याण और संस्कृति । सुशीला नायर और पार्वती कृष्णन अध्यक्ष के पैनल में शामिल थी।

सातवी लोकसभा (1980-84) में महिला सांसदों की संख्या बढकर पुनः 28 तक पहुच गई जो कुल सदस्य संख्या का 5.1 प्रतिशत था। राज्यसभा में इस समय कुल 24 महिला सांसद थी। इंदिरा गांधी एक बार पुनः प्रधानमंत्री बनी जिनके पास परमाणु ऊर्जा, रक्षा, विदेश मामले, उद्योग, इलेक्ट्रानिक, अन्तरिक्ष और विज्ञान तथा तकनीक विभाग थे। उनके अलावा पांच अन्य महिलाओं को मंत्री पद मिला । मोहिसिना किदवई, शीला कौल और रामदुलारी सिन्हा को

राज्यमंत्री तथा कुमुद बेन जोशी और कमला कुमारी को उपमंत्री के रूप में नियुक्त किया गया। राजेन्द्र कुमारी बाजपेयी सातवीं लोकसभा में अध्यक्ष पैनल की सदस्या थी ।

आठवीं लोकसभा (1985-89) के लिये 8.1 प्रतिशत अर्थात कुल 44 महिलायें लोकसभा के लिये निर्वाचित हुई । राज्यसभा में इस समय कुल 28 महिला सांसद थी। इस प्रकार संसद में इस काल में कुल 52 महिला सांसद थी जिनमें से कुल 10 महिलाओं को मंत्रिपरिषद में स्थान मिला जोकि महिलाओं के संबंध में अब तक की सर्वोच्च संख्या थी । मोहिसिना किदवई को कैबिनेट मंत्री का पद मिला। प्रारम्भ में इन्हें स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग मिला बाद में परिवहन एवं शहरी विकास विभाग दिया गया। इनके अलावा मार्गेथम चन्द्रशेखर को महिला एवं समाज कल्याण विभाग के स्वतंत्र प्रभार के साथ राज्यमंत्री का दर्जा दिया गया। इसी प्रकार राजेन्द्र कुमारी बाजपेयी को कल्याण विभाग का स्वतंत्र प्रभार दिया गया। माग्रेट अल्वा संसदीय मामलों की राज्यमंत्री बनाई गई जिन्हें बाद में मानव संसाधन विकास विभाग (खेल एवं युवा) प्रदान किया गया । अन्य महिला मंत्री थी, शीला दीक्षित, राज्यमंत्री संसदीय मामलें, सरोज खापरेड राज्यमंत्री स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण , सुमति ओरन, राज्यमंत्री गृह, पर्यावरण एवं वन।[1] सुशीला रोहतगी और कृष्णा शाही को मानव संसाधन विकास मंत्रालय में राज्यमंत्री के रूप में शिक्षा एवं संस्कृति विभाग के दो भिन्न पहलुओं से सम्बद्ध किया गया था। रामदुलारी सिन्हा को गृह राज्यमंत्री के रूप में मंत्रिपरिषद में स्थान मिला। बासवा राजेश्वरी अध्यक्ष के पैनल में शामिल की गई थी।

नौवीं लोकसभा (1989-91) में महिला प्रतिनिधियों की संख्या घटकर मात्र 29 रह गई जो निर्वाचित 529 स्थानों का मात्र 5.4 प्रतिशत था। राज्यभा में भी महिला सांसदों की संख्या घटकर 24 रह गई। इस दौरान केवल दो महिलायें ही मंत्री पद प्राप्त कर सकी जिनमें मेनका गांधी को राज्यमंत्री व ऊषा सिंह को उपमंत्री का दर्जा मिला। मेनका गांधी पर्यावरण एवं वन विभाग व ऊषा सिंह कल्याण मंत्रालय से सम्बद्ध थी । विजयाराजे सिंधिया और गीता मुखर्जी को अध्यक्ष के पैनल में सम्मिलित किया गया था।

---

[1] पहले इन्हें कल्याण विभाग में उपमंत्री के रूप में सम्मिलित किया गया था।

दसवीं लोकसभा (1991-96) में महिला सहभागिता में पुनः वृद्धि हुई। पिछली लोकसभा की 29 की संख्या से बढकर यह 39 तक पहुँच गई। इस दौरान राज्यसभा में भी महिला सदस्यों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। यह सम्पूर्ण सदन की सदस्य संख्या के 15.5 प्रतिशत अर्थात 38 तक पहुंच गई। यह आज तक (2008) की स्थिति में महिलाओं का राज्यसभा में सर्वोत्तम प्रदर्शन रहा है। इस प्रकार दोनों सदनों में शामिल महिला सांसदों की कुल संख्या 77 हो गई। संसद में महिला संदस्यों का यह अब तक (2008) का सर्वश्रेष्ठ प्रतिनिधित्व रहा है। किन्तु इन 77 महिला सांसदों में से केवल 5 को ही मंत्री बनने का गौरव प्राप्त हो सका। शीला कौल को नगर विकास विभाग के साथ कैबिनेट मंत्री का पद मिला। इनके अलावा कृष्णा शाही, राज्यमंत्री औद्योगिक विकास, सुखवंश कौर राज्यमंत्री पर्यटन एवं नागरिक उड्डयन, बासवा राजेश्वरी राज्यमंत्री मानव संसाधन विकास मंत्रालय में महिला और बाल कल्याण विभाग और शैलजा उपमंत्री मानव संसाधन मंत्रालय अन्य महिला मंत्री थी।

ग्यारहवीं लोकसभा (1996-1998) में 543 स्थानों में कुल 40 महिलायें चुनी गई जो समस्त सदस्य संख्या का 7.18 प्रतिशत था। इस लोकसभा के दौरान कुल तीन सरकारें बनी। अटल बिहारी बाजपेयी के नेतृत्व में भाजपा की तेरह दिन की सरकार जिसमें सुषमा स्वराज अकेली महिला मंत्री थी जिन्हें कैबिनेट मंत्री का दर्जा प्राप्त था और इनके पास सूचना और प्रसारण विभाग था। यह सरकार लोकसभा में बहुमत न सिध्द कर पाने के कारण गिर गई और कांग्रेस तथा माकपा के समर्थन से एच.डी.देवगौडा के नेतृत्व में संयुक्त मोर्चा की गठबन्धन सरकार बनी । 11 माह बाद कांग्रेस के समर्थन वापसी के कारण यह सरकार भी गिर गई किन्तु नेतृत्व परिवर्तन की शर्त पर कांग्रेस ने पुनः मोर्चा सरकार को समर्थन प्रदान किया और इन्द्रकुमार गुजराल के नेतृत्व में नई सरकार का गठन हुआ। दोनो ही सरकारों में केवल नेतृत्व का अन्तर था शेष मंत्रिपरिषद के सदस्य यथावत बने रहे। इन दोनों सरकारों में कुल 4 महिला मंत्री थी- रेनुका चौधरी, राज्य मंत्री स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण, कान्ती सिंह, राज्यमंत्री (स्वतंत्र प्रभार) कोयला, कमला सिंह, राज्यमंत्री विदेश मामले, रत्नमाला साबानूर राज्यमंत्री योजना और कार्यक्रम क्रियान्वयन ।

बारहवीं लोकसभा (1998-99) में 545 स्थानों में कुल 44 महिलायें निर्वाचित हुई। इस दौरान राज्य सभा में कुल 19 महिला सांसद थी। 12वीं लोकसभा में कुल 3 महिलायें ही मंत्री पद प्राप्त कर सकी। सुषमा स्वराज, सूचना और प्रसारण मंत्री बनी। वसुन्धरा राजे सिन्धिया को मानव संसाधन मंत्रालय का स्वतंत्र प्रभार (राज्यमंत्री) दिया गया। इसी प्रकार मेनका गांधी को राज्यमंत्री के रूप में कल्याण मंत्रालय का स्वतंत्र प्रभार मिला।

तेरहवीं लोकसभा (1999-2004) में कुल 48 महिलायें लोकसभा के लिये चुनी गई जो समस्त सदन का 8.8 प्रतिशत था। यह लोकसभा में महिलाओं की अब तक की सर्वोच्च भागीदारी है। इस समय राज्य सभा में महिला सांसदों की संख्या 20 थी। इस काल में कुल 10 महिलाओं को मंत्री बनाया गया। अब तक केवल आठवीं लोकसभा के दौरान इतनी महिलाओं को मंत्रिपरिषद में स्थान मिल सका था। इन 10 महिलाओं में ममता बनर्जी और सुषमा स्वराज कैबिनेट स्तर की मंत्री थी जिनके पास क्रमशः रेल और सूचना प्रसारण मंत्रालय था (सुषमा स्वराज को बाद में संसदीय मामले का विभाग भी दे दिया गया था) मेनका गांधी को स्वतंत्र प्रभार के साथ राज्यमंत्री बनाया गया और समाज कल्याण एवं सशक्तिकरण, संस्कृति और वन विभाग का प्रभार सौंपा गया। वसुन्धरा राजे सिन्धिया कार्मिक जन शिकायतें और पेंशन मंत्रालय में राज्यमंत्री बनाई गई। इन्हें बाद में लघु उद्योग मंत्रालय का स्वतंत्र प्रभार दे दिया गया। इनके अलावा अन्य महिला मंत्री जिन्हें राज्यमंत्री का दर्जा प्राप्त था, थी- उमा भारती, कोयला एवं खान, बिजोय चक्रवर्ती जल संसाधन, जयन्ती बेन मेहता, ऊर्जा, रीता वर्मा, खनिज ,स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण और ग्रामीण विकास, सुमित्रा महाजन मानव संसाधन, संचार, आई.टी., पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस और भावना बेन चिकिलिया, संसदीय मामले, पर्यटन और संस्कृति मंत्रालय।

चौदहवीं लोकसभा का चुनाव 2004 में सम्पन्न हुआ जिसमें 542 स्थानों में से 44 महिलायें निर्वाचित हुई, जो समस्त स्थान का 8.1 प्रतिशत है। इनमें आठ महिलाओं को मंत्रीपद प्राप्त हुआ- मीरा कुमार, समाज कल्याण एवं सशक्तिकरण मंत्री, अम्बिका सोनी पर्यटन एवं प्रकृति, पनाबाका लक्ष्मी राज्यमंत्री स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण, सुर्यकान्ता पाटिल, राज्यमंत्री ग्रामीण विकास एवं संसदीय मामले सुब्बुलक्ष्मी जगदीशन राज्यमंत्री सामाजिक न्याय और

सशक्तिकरण , कान्ती सिंह राज्यमंत्री मानव संसाधन विकास, रेनुका चौधरी राज्यमंत्री (स्वतंत्र प्रभार) पर्यटन और शैलजा राज्यमंत्री (स्वतंत्र प्रभार) नगर नियोजन एवं गरीबी उन्मूलन।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि यद्यपि राजनीति में महिलाओं की सहभागिता दर बढी है किन्तु निर्णय निर्माण प्रक्रिया में उनका उलझाव अभी भी सीमित है। 1952 में पहले लोकसभा चुनाव से अब तक केवल एक प्रधानमंत्री, आठ कैबिनेट मंत्री, 52 राज्य मंत्री और 20 उपमंत्री के रूप में शपथ ले सकी है। लोकसभा में महिला सांसदों का प्रतिनिधित्व कभी भी दहाई का आंकडा नहीं छू सका है। राज्यसभा में अवश्य यह एक बार 15.5 प्रतिशत (1991-96), एक बार 11.4 प्रतिशत (1985-89) व एक बार 10.2 प्रतिशत (1977-80) तक पहुंचा ।

विश्व के विभिन्न देशों की व्यवस्थापिका के निचले सदन में महिलाओं के प्रतिनिधित्व से अगर भारत की तुलना करें तो हम पायेगें कि भारत की स्थिति जापान से थोडी बेहतर है। जापान में जहां महिलाओं का 4.6 प्रतिशत प्रतिनिधित्व है वहीं भारतीय लोकसभा में 6.4 प्रतिशत प्रतिनिधित्व प्राप्त रहा है जो फ्रान्स के बराबर है। विश्व में स्वीडन में सर्वाधिक 40.4 प्रतिशत महिलाओं को व्यवस्थापिका में प्रतिनिधित्व प्राप्त है।

तालिका 4.3

चुने हुए कुछ देशों की व्यवस्थापिका में महिलाओं का प्रतिनिधित्व[1]

क्र.सं.	देश	कुल सीट	महिला सांसद	प्रतिशत
1	स्वीडन	349	141	40.4
2	नार्वे	165	65	39.4
3	फिनलैण्ड	200	67	33.5
4	डेनमार्क	179	59	33.0
5	हालैण्ड	150	47	31.3
6	न्यूजीलैण्ड	120	35	29.2

[1] योजना, दिसम्बर 2000 पृ0 19

7	जर्मनी	672	176	26.2
8	स्पेन	350	86	24.6
9	चीन	2978	626	21.0
10	स्विटजरलैण्ड	200	42	21.0
11	वियतनाम	395	73	18.5
12	ब्रिटेन	651	120	18.0
13	आस्ट्रेलिया	148	23	15.5
14	जिम्बाबवे	150	22	14.7
15	अमेरिका	435	51	11.7
16	फिलीपीन्स	203	22	10.8
17	जम्बिया	155	15	9.7
18	फ्रान्स	577	37	6.4
19	जापान	500	23	4.6

अन्तर्राष्ट्रीय संसदीय संघ के एक रिपोर्ट के अनुसार विश्व में महिला सांसदों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है। यह 2005 में 16.3 प्रतिशत थी जो 1 जनवरी 2008 तक 17.7 तक पहुँच चुकी है।[1] संघ के महासचिव एडा0 जानसन ने आशा व्यक्त की है कि सन् 2050 तक व्यवस्थापिकाओं में स्त्री-पुरूष समानता का लक्ष्य प्राप्त कर लिया जायेगा।[2] भारत में यह लक्ष्य कब तक प्राप्त किया जा सकेगा इस सम्बन्ध में कोई अनुमान नहीं व्यक्त किया जा सकता। हां महिलाओं को राजनीति में समान सहभागिता प्रदान करने के लिये संसद व विधान मण्डलो में 33 प्रतिशत आरक्षण की मांग अवश्य उठती रही है, किन्तु यह मुद्दा राजनीतिक अखाड़े के दांव-पेंच में उलझ कर रह गया है।

[1] दैनिक जागरण, (कानपुर), 2 मार्च 2008, पृ0 1
[2] वही

भारत में सांसद और मंत्री के रूप में महिलाओं के सहभागिता की अगर लोकसभा चुनावों में महिलाओं के मतदाता के रूप में भागीदारी का मूल्यांकन किया जाय तो स्थिति भिन्न दिखाई देगी। मतदाता के रूप में भी यद्यपि महिलाओं की भागीदारी पुरूषों से कम है किन्तु दोनों में अन्तर बहुत अधिक नहीं है, किन्तु यहां यह ध्यान देने वाली बात है कि महिला मतदाता आमतौर पर निर्देशित मतदाता रही हैं जो परिवार आदि किसी न किसी प्रभाव के अधीन मतदान करती रही है।

तालिका 4.4

लोकसभा चुनाव में पुरूष-महिला मतदान प्रतिशत

वर्ष	मतदाताओं की कुल संख्या मिलियन में			मतदान प्रतिशत		
	महिला	पुरूष	कुल	महिला	पुरूष	कुल
1952	उ0न0	उ0न0	172.2	उ.न.	उ.न.	61.2
1957	उ0न0	उ0न0	193.7	उ0न0	उ0न0	62.2
1962	102.4	113.9	216.3	46.6	62.0	55.0
1967	119.4	129.6	249.0	55.5	66.7	61.3
1971	उ0न0	उ0न0	274.1	उ0न0	उ0न0	55.3
1977	154.2	167.0	321.2	54.9	65.6	60.5
1980	170.3	185.2	355.5	51.2	62.2	56.9
1984	192.3	208.0	400.3	59.2	68.4	64.0
1989	236.9	262.0	498.9	57.3	66.1	61.9
1991	234.5	261.8	498.3	51.4	61.6	56.7
1996	282.8	309.8	592.6	53.4	62.1	57.9
1998	289.2	316.7	605.9	57.9	65.7	61.9
1999	295.7	323.8	619.9	55.6	63.9	59.9
2004	321.9	349.5	671.4	53.3	61.7	57.6

स्रोत : निर्वाचन आयोग भारत सरकार ।   उ0न0 :- उपलब्ध नहीं

लोकसभा चुनावों में प्रत्याशी के रूप में महिलाओं की सहभागिता अब तक बहुत ही कम रही हे। यद्यपि 1952 में पहले आम चुनावों के बाद से इस संख्या में वृद्धि हुई है किन्तु यह वृद्धि राष्ट्रीय राजनीति में महिलाओं के सहभागिता की दृष्टि से पर्याप्त नहीं है। निम्न तालिका से विभिन्न लोकसभा चुनावों में उम्मीदवारों व निर्वाचित व्यक्तियों के बीच लैंगिक अन्तर को स्पष्ट देखा जा सकता है।

तालिका 4.5[1]

विभिन्न चुनावों में उम्मीदवारों व निर्वाचित व्यक्तियों का लौगिंक विभाजन

चुनाव वर्ष	उम्मीदवारों की कुल संख्या	महिला			पुरूष		
		कुल उम्मीदवार	निर्वाचित	निर्वाचित उम्मीदवारों का प्रतिशत	कुल उम्मीदवार	निर्वाचित	निर्वाचित उम्मीदवारों का प्रतिशत
1952	1874	उ0न0	22	उ0न0	उ0न0	477	उ0न0
1957	1518	45	27	60.0	1473	473	32.1
1962	1985	70	34	48.5	1915	469	24.0
1967	2369	67	31	46.2	2302	492	21.3
1971	2484	86	22	25.5	2398	499	20.8
1977	2439	70	19	27.1	2369	523	22.1
1980	4620	142	28	19.7	4478	514	11.5
1984	5574	164	42	25.6	5416	500	9.2
1989	6160	198	29	14.6	5962	500	8.3
1991	8699	325	39	12.0	8374	504	6.0
1996	13952	599	40	6.7	13353	503	3.8
1998	4750	274	43	15.7	4476	500	11.2
1999	4648	284	48	16.9	4364	494	11.3
2004	5435	355	44	12.3	5080	498	9.8

उपर्युक्त अध्ययन यह सिद्ध करता है कि भारतीय राजनीति में महिलाओं की सहभागिता सामान्य तौर पर दर्शक गतिविधियों तक ही सीमित रही है। सक्रिय सहभागिता दर्ज कराने वाली महिलाओं की संख्या नगण्य रही है। जो महिलायें शीर्ष पदों तक पहुंची भी है, तो

[1] स्रोत - निर्वाचन आयोग, भारत सरकार, उ0न0 - उपलब्ध नहीं

इसमें उनकी पारिवारिक विरासत की भूमिका अधिक रही है, उनके स्वयं का परिश्रम और राजनीतिक उलझाव कम ही रहा है।

राज्यों की राजनीति और महिला सहभागिता

राज्यों की राजनीति में महिलाओं की सहभागिता का मूल्यांकन किया जाय तो राष्ट्रीय परिदृश्य से अलग कोई तस्वीर नजर नहीं आती। यद्यपि अब तक कुल 15 महिलाओं ने विभिन्न राज्यों में राज्यपाल व 13 महिलाओं ने मुख्यमंत्री के रूप में शीर्ष पदों को धारण किया है। किन्तु एक उदाहरण के रूप में 1952 से 1999 तक विभिन्न राज्यों के विधानमण्डलों में महिला विधायकों के प्रतिनिधित्व का औसत प्रतिशत देखा जाय तो वह राष्ट्रीय औसत से 2.2 प्रतिशत कम है। कुछ राज्यों में तो यह औसत 2 प्रतिशत के नीचे और मणिपुर तथा नागालैण्ड में 1 प्रतिशत के नीचे है -

तालिका 4.6[1]

राज्य विधानमण्डलों में महिला विधायकों का प्रतिशत

क्र.सं.	राज्य	1952 से 1999 तक महिला विधायकों का औसत (प्रतिशत में)
1	आन्ध्र प्रदेश	4.0
2	अरूणाचल प्रदेश	3.3
3	आसाम	3.2
4	बिहार	4.3
5	गोवा	4.3
6	गुजरात	4.2
7	हरियाणा	6.2
8	हिमांचल प्रदेश	3.6

[1] योजना, दिसम्बर 2000, पृ0 8

9	कर्नाटक	4.5
10	केरल	3.6
11	मध्य प्रदेश	5.1
12	महाराष्ट्र	4.7
13	मणिपुर	0.3
14	मेघालय	1.7
15	मिजोरम	1.4
16	नागालैण्ड	0.5
17	उड़ीसा	4.0
18	पंजाब	4.0
19	राजस्थान	4.8
20	सिक्किम	2.3
21	तमिलनाडू	3.6
22	त्रिपुरा	3.0
23	उत्तर प्रदेश	4.1
24	पश्चिम बंगाल	3.4
25	दिल्ली	5.9
26	पाण्डिचेरी	2.6
	औसत	**4.0**

इस तालिका से स्पष्ट है कि हरियाणा के विधानसभा में महिलाओं का सर्वाधिक प्रतिनिधित्व रहा है। इसके बाद दिल्ली और मध्य प्रदेश का स्थान है। उत्तर पश्चिम के राज्यों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व सर्वाधिक कम रहा है।

पंचायत और महिला सहभागिता :-

भारत में स्थानीय शासन की इकाइयों को ग्रामीण और नगरीय दो वर्गो में रखा जाता है। पंचायत व्यवस्था ग्रामीण प्रशासन से ही ग्राम्य प्रशासन एवं पंचायत प्रणाली का अस्तित्व रहा है जो ब्रिटिश शासनकाल में एक हद तक उपेक्षित ही रहा। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इस व्यवस्था को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया गया। इस दिशा में पहला महत्वपूर्ण प्रयास था बलवन्त राय मेहता समिति के प्रतिवेदन (1957) के आधार पर त्रिस्तरीय पंचायत व्यवस्था की स्थापना। पंचायत के ये तीन स्तर थे - ग्राम पंचायत, खण्ड विकास और जिला परिषद । इस योजना में ग्राम पंचायतें भारतीय शासन की सबसे निचले पायदान की इकाई थी। इस व्यवस्था के लागू होने के बाद से पंचायत संस्थाओं के प्रत्येक स्तर पर अगड़े और दबंग लोगों का ही वर्चस्व रहा। महिलाओं की उपस्थिति नगण्य ही रही।

किन्तु 73वें संविधन संशोधन द्वारा इस व्यवस्था में क्रान्तिकारी परिवर्तन किये गये। पंचायत के तीन स्तर- ग्राम पंचायत क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत ही रहे, किन्तु इन संस्थाओं के अधिकारों, कार्यो और संसाधनों में आशातीत वृद्धि की गई। इस नई पंचायत व्यवस्था में सबसे महत्वपूर्ण तथ्य रहा समाज के उन वर्गो को पंचायत संस्थाओं के हर स्तर पर आरक्षण प्रदान करना जिन्हें अब तक स्वतः इन संस्थाओं में प्रतिनिधित्व नहीं मिल पाता था। इस प्रकार इस स्थानीय सत्ता को समाज के प्रत्येक वर्ग तक विसरित कर सत्ता के वास्तविक विकेन्द्रीकरण का प्रयास किया गया। पिछड़े वर्ग के लिये 27 प्रतिशत, अनुसूचित जाति और जनजाति को क्रमशः 21 व 2 प्रतिशत आरक्षण के साथ-साथ महिलाओं के लिये 1/ 3 स्थानों के आरक्षण की व्यवस्था की गईं । उत्तर प्रदेश में 1995 में एक अधिनियम के द्वारा यह नयी व्यवस्था लागू की गई । तब से अब तक 1995, 2000 और 2005 में तीन बार पंचायत संस्थाओं के चुनाव हो चुके हैं और महिलायें प्रत्येक स्तर पर अपने लिये आरक्षित एक तिहाई स्थानों पर आसीन राजनीतिक सत्ता का उपयोग कर राज्य और समाज कल्याण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर रही है। यह सत्य है कि पहले चुनाव (1995) में महिलायें इस मैदान में कुछ

शील-संकोच के साथ उतरी थी किन्तु 2005 के चुनाव तक स्थिति में बदलाव आया है और अब वे अनारक्षित सीटों पर भी काबिज होने लगी है। यह सत्य है कि यह प्रगति अभी मन्द है किन्तु परिवर्तन साफ दृष्टिगोचर है। निश्चय ही आने वाले वर्षो में विकेन्द्रीकरण का यह प्रयास रंग दिखायेगा और महिलायें शासन के इस निचले स्तर से प्रादेशिक और राष्ट्रीय स्तर तक की राजनीति में अपनी सक्रिय, सशक्त और सुशासित उपस्थिति दर्ज करायेंगी और लोकतंत्र में अपेक्षित परिवर्तन का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकेगा।

73वें संविधान संशोधन के बाद से अब पूरे देश में महिलायें स्वयं के लिये आरक्षित पदों पर ग्राम पंचायत स्तर पर दस लाख सदस्यों एवं 80 हजार ग्राम प्रधान पदों पर आसीन हैं। क्षेत्र पंचायत स्तर पर 2 लाख सदस्य एवं 18 हजार अध्यक्ष पदों पर और जिला पंचायत स्तर पर कुल 1500 सदस्य और 160 अध्यक्ष पद संभाल रही है। पुरूष प्रधान समाज में लम्बे समय से उपेक्षा की शिकार रही और उन्हीं के निर्देशों पर चलने वाली महिलाओं के लिये निश्चय ही यह सुखद स्थिति है। किन्तु क्या वे स्वयं को मिले इस गुरूतर दायित्व का निर्वाह, स्वविवेक से कर पा रही है ? प्रस्तुत शोध में ग्राम प्रधान के रूप में महिलाओं की इसी भूमिका व राजनीतिक गतिविधियों में उनकी सक्रियता का मूल्यांकन उत्तर प्रदेश के अत्यन्त पिछड़े क्षेत्र बुन्देलखण्ड के हमीरपुर जनपद के विशेष संदर्भ में किया गया है।

अध्याय–5

पंचायत राजनीति में महिला सहभागिता का यथार्थ

पंचायत राजनीति में महिला सहभागिता का यथार्थ

भारत के सामाजिक और आर्थिक ढांचे में शताब्दियों से कुछ वर्ग दबे कुचले तथा शोषित रहे है, जिनका सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक हर स्तर पर शक्तिशाली वर्गो द्वारा शोषण किया जाता रहा हें अनुसूचित जाति, पिछडी जाति कही जाने वाली जातियों के साथ-साथ भारत में महिलाओं को भी शोषित वर्ग में रखना तर्कसंगत होगा। सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक दृष्टि से सशक्त लोगों ने यदि अनुसूचित जातियों/ जनजातियों तथा पिछडी जाति के लोगों का शोषण किया है तो पुरूष प्रधान समाज ने जारी को भोग्या समझते हुए एक सोची समझी राणनीति के तहत उन्हें उनके प्राकृतिक अधिकारों से वंचित रखा और उनके व्यक्तित्व के विकास के तमाम मार्ग अवरूद्ध कर उन्हें घर की चारदीवारी तक कैद कर दिया। यह सत्य है कि भारतीय संस्कृति में नारी को पूज्य स्थान दिया गया है किन्तु नारी को समानता और गौरव व अधिकार मात्र वैदिक काल तक ही प्राप्त रहा। कालान्तर में नारी पुरूष प्रधान समाज के लिये मात्र "उपयोग की एक वस्तु" बनकर रह गई।

किन्तु बाद में प्रायः हर देश व समाज ने महिला शक्ति की उपयोगिता का अनुभव किया । चाहे इसके पीछ राष्ट्रीय अथवा सामाजिक आवश्यकता का कारण रहा हो या नारीवादी आन्दोलनों का प्रभाव , वस्तुस्थिति यह है कि अब यह स्वीकार किया जाने लगा है कि समाज की आधी आबादी को पर्दे के पीछे कैद करके समग्र विकास संभव नहीं है। जब तक समाज के सभी वर्गो को समान रूप से व्यक्तित्व के विकास का अवसर नहीं मिलता राष्ट्र का विकास अधूरा है। इसके लिये यह आवश्यक है कि हर वर्ग के लोगों को चाहे स्त्री हों या पुरूष या किसी जाति अथवा धर्म के व्यक्ति हो, सबको अपनी शक्ति व क्षमता से सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक गतिविधियों में सहभागिता व उपलब्धि के अवसर प्राप्त होने चाहिये। इससे राष्ट्र के मानव संसाधन का अधिक से अधिक उपयोग संभव हो सकेगा। किन्तु जीवन के हर क्षेत्र में प्रत्येक वर्ग के लोगों की विशेष रूप से महिलाओं की समान सहभागिता तब तक संभव नहीं है जब तक उन्हें निर्णय प्रक्रिया (राजनीतिक गतिविधियों) में समान भागीदारी न प्राप्त हो।

यही कारण है कि देर सबेर प्रायः सभी राज्यों ने नारी शक्ति के महत्व व उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए किसी न किसी रूप में उन्हें राज्य के राजनीतिक क्रिया कलापों में सक्रिय करने का प्रयास किया। उन्हें न केवल पुरूषों के समान मताधिकार प्रदान किया गया बल्कि कुछ राज्यों में तो निर्धारित कोटे की भी व्यवस्था की गई। इस सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण राज्यों के उदाहरण निम्न हैं[1] -

1. अफ्रीकन, नेशनल कांग्रेस ने दक्षिण अफ्रीका में महिलाओं के लिये 30 प्रतिशत कोटा निर्धारित किया है परिणामस्वरूप वहां 2004 में संसद के निचले सदन में 32.8 प्रतिशत महिलायें निर्वाचित हुई । इसके साथ ही द0 अफ्रीका विश्व में किसी भी देश में विधायी पदों पर महिलाओं की उपस्थिति के प्रतिशत में सम्बन्ध में 1994 में 141वें स्थान से बढकर 2004 में 13वें स्थान पर पहुँच गया।
2. फिनलैण्ड के कानून के अनुसार विभिन्न निर्णय निर्माणी संस्थाओं में प्रत्येक लिंग का कम से कम 40 प्रतिशत प्रतिनिधित्व अवश्य होना चाहिये । इससे फिनलैण्ड में 1996 में महिलाओं का प्रतिनिधित्व 1980 के 25 प्रतिशत से बढ़कर 48 प्रतिशत हो गया।
3. अर्जेन्टाइना में महिलाओं के लिये 30 प्रतिशत स्थान आरक्षित हैं। 2003 में निचले सदन में महिलाओं का प्रतिनिधित्व 34.1 प्रतिशत था।
4. 1999 में फ्रान्सीसी संविधान में संशोधन करते हुए चुनावों में ''स्त्री-पुरूषों के समान प्रतिनिधित्व'' की बात कही गई। 2000 में फ्रान्सीसी कानून में संशोधन करते हुए राजनीतिक दलों को निर्देशित किया गया कि अधिकांश चुनावों में स्त्रियों एवं पुरूषों को समान रूप से प्रस्तुत करें।
5. भारतीय पंचायत राज अधिनियम पंचायत के तीनों स्तरों के प्रत्येक पदों पर महिलाओं के लिये 33 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था करता है।

---

[1] स्रोत - इन्टर पार्लियामेन्टरी यूनियन, वूमेन्स एनवायरमेन्ट एण्ड डेवलपमेंट आर्गनाइजेनशन, यू.एन. डिविजन फॉर द एडवांसमेन्ट ऑफ वूमेन, सेन्टर फॉर लेजिस्टलेटिव डेवलपमेंट, ग्लोबल डिबेट्स ऑफ कोटाज फॉर वूमेन।

भारत में महिलाओं के लिये स्थानीय स्वशासन में आरक्षण की व्यवस्था पर्याप्त विचार विमर्श के बाद उठाया गया कदम है। ग्रामीण समाज में महिलायें काफी पिछड़ी हुई हैं और पुरूष वर्ग उन पर प्रभावी है। भारतीय लोकतंत्र की सबसे निचली पायदान ग्राम पंचायत है, जिसकी स्थानीय स्वशासन में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता शीर्ष पर बढाने के शायद उतने प्रभावी परिणाम प्राप्त नहीं होते जितने कि सतह से प्रारम्भ किये गये प्रयास से संभव है। एक सुदृढ बुनियाद दृढ इमारत का आधार होती है। अपेक्षा यह है कि पहले महिलाओं को तृणमूल स्तर पर राजनीतिक भागीदारी के लिये तैयार किया जाय, फिर शीर्ष संस्थाओं में इस प्रयोग को दोहराया जा सकता है। यही कारण है कि अप्रैल 1993 में 73वां व 74वां संविधान संशोधन विधेयक पारित करके महिलाओं को पंचायतों तथा नगर निकायों में एक तिहाई स्थान आरक्षित करके मूल स्तर पर राजनीतिक सत्ता में उनकी भागीदारी सुनिश्चित की गई है।

नई पंचायत व्यवस्था के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश में अब तक पंचायत संस्थाओं के तीन चुनाव क्रमशः 1995, 2000 और 2005 में हो चुके हैं। महिलाओं को पंचायत संस्थाओं में विशेष रूप से ग्राम प्रधान पद पर जो आरक्षण मिला है उसके परिणाम दृष्टिगोचर होने लगे हैं। यद्यपि ये परिणाम अपेक्षा के अनुरूप नहीं है, फिर भी बदलाव के संकेत स्पष्ट हैं । प्रस्तुत शोध में पंचायत संस्थाओं में महिलाओं को प्राप्त आरक्षण के आधार पर उनकी राजनीतिक सहभागिता की वस्तुस्थिति का मूल्यांकन किया गया है। इस उद्देश्य से तीनों चुनावों में ग्राम प्रधान पद पर निर्वाचित 432 महिला प्रधानों का साक्षात्कार अनुसूची विधि से अध्ययन करते हुए विभिन्न निष्कर्ष प्राप्त करने का प्रयास किया गया है। इस सम्बन्ध में व्यक्तिगत पर्यवेक्षण के आधार पर प्राप्त सूचनाओं का भी विश्लेषण किया गया है।

1. चुनाव लड़ने की प्रेरणा

राजनीतिक सहभागिता का प्रथम महत्वपूर्ण चरण निर्वाचन में सहभागी होना होता है। इसमें व्यक्ति मतदाता और प्रत्याशी के रूप में सहभागी होता है। 73वें संविधान संशोधन के बाद से उत्तर प्रदेश में ग्राम पंचायतों के तीन चुनाव हुए जिनमें प्रथम दो चुनावों (1995 व

2000) में लगभग एक तिहाई ग्राम प्रधान के पद महिलाओं के लिये आरक्षित थे जबकि 2005 के पंचायत चुनावों में लगभग तीन चौथाई ग्राम प्रधान पद महिलाओं के लिये आरक्षित थे । इस प्रकार 1995 से 2005 तक कुल 432 महिलायें ग्राम प्रधान पद पर निर्वाचित हुई। ध्यातव्य है कि 1995 से पूर्व हमीरपुर जनपद के किसी भी ग्राम में कोई भी महिला ग्राम प्रधान नहीं रही है। ऐसे में एक तिहाई आरक्षण की व्यवस्था के बाद से इतनी बड़ी संख्या में महिलाओं का ग्राम प्रमुख के रूप में चुना जाना क्रान्तिकारी परिवर्तन माना जा सकता है। किन्तु यह परिवर्तन कितना वास्तविक व कितना प्रक्षेपित है, शोध के निष्कर्षो से स्पष्ट हो जाता है। इसके लिये तीनों चुनावों में विजयी महिला ग्राम प्रधानों से पहला प्रश्न यह पूछा गया कि ग्राम प्रधान का चुनाव लडने का निर्णय अथवा प्रेरणा किसकी थी। स्वयं उन्होंने चुनाव लड़ने का निर्णय लिया, पति/ पिता या परिवार के किसी अन्य सदस्य ने इसके लिये प्रेरित किया अथवा मात्र आरक्षण की व्यवस्था का लाभ लेने के लिये वे चुनाव लड़ी । निम्न सारणी से तीन अलग-अलग चुनावों में निर्वाचित महिला ग्राम प्रधानों की इस प्रश्न के सम्बन्ध, स्थिति का अनुमान होता है ।

सारणी 5.1

चुनाव लड़ने की प्रेरणा[1]

क्रं.	चुनाव लड़ने की प्रेरणा	1995		2000		2005	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	स्वयं	04	3.44	23	19.49	45	22.72
2	पति/ पिता अथवा परिवार के अन्य सदस्य	101	87.06	76	65.51	123	62.12
3	आरक्षण की व्यवस्था	11	9.48	19	16.10	30	15.15
	योग -	**116**	**100**	**118**	**100**	**198**	**100**

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट है कि 1995 के चुनाव में स्वयं अपने विवेक से चुनाव लड़ने वाली महिलाओं का प्रतिशत काफी कम 3.44 था। महिलाओं के लिये पंचायत चुनावों में आरक्षण की व्यवस्था लागू होने के बाद यह पहला चुनाव था इसीलिये उहापोह की स्थिति में

[1] साक्षात्कार अनुसूची विधि से किये गये सर्वेक्षण के आधार पर

महिलाओं ने अन्य प्रेरणाओं, पिता, पति या परिवार के अन्य सदस्य अथवा आरक्षण की व्यवस्था के कारण चुनाव लड़ने का निर्णय लिया। 87.06 प्रतिशत महिलाओं ने परिवार के किसी सदस्य से प्रेरित होकर चुनाव लड़ा व 9.48 प्रतिशत महिलायें आरक्षण की व्यवस्था के कारण चुनाव लड सकी । किन्तु धीरे-धीरे अगले दो चुनावों में इस स्थिति में बदलाव के संकेत मिलते हैं। स्वयं अपने विवेक से चुनाव लड़ने वाली महिलाओं का प्रतिशत 1995 के 3.44 से बढ़कर 2000 में 19.49 व 2005 में 22.72 हो जाता हैं किन्तु अन्य प्रेरक तत्वों के कारण चुनाव लड़ने वाली महिलाओं की संख्या अब भी बहुत अधिक है। इसका परिणाम यह होता है कि उनकी कार्यविधि पर चुनाव के लिये प्रेरित करने वाले कारको का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है । विशेष रूप से चूंकि पिता/ पति या परिवार के किसी सदस्य के प्रभाव के कारण चुनाव लड़ने वाली महिला प्रधानों की संख्या अधिक हे, इसलिये अधिकतर महिला प्रधान पिता/ पति व परिवार के प्रभावी सदस्य के निर्देशन में कार्य करने के लिये विवश होती है। यह बात इस तथ्य से भी सिद्ध होती है कि लगभग 83 प्रतिशत महिला प्रधानों से शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत साक्षात्कार अनुसूची के उत्तर किसी न किसी परिवारिक सदस्य की उपस्थिति में या उनके सहयोग से दिया।[1]

2. आरक्षण न होने पर ग्राम प्रधान पद पर चुनाव लड़ने की स्थिति

महिलाओं के लिये आरक्षण न होने की स्थिति में पंचायत चुनाव लड़ती या नहीं यह पूछे जाने पर तीनों ही चुनावों में चुनी गई प्रधानों के उत्तर से भिन्न-भिन्न तस्वीर उभरती है। 1995 के चुनाव में चुनी गई महिला प्रधानों में से मात्र 15.51 प्रतिशत ने यह स्वीकार किया कि वे आरक्षण न होने की स्थिति में भी चुनाव लड़ती । उनकी यह स्वीकारोक्ति कितनी सत्य है इसका शुद्ध अनुमान नहीं किया जा सकता क्योंकि उत्तर अन्य तत्वों से प्रभावित थे। हो सकता है उनका यह उत्तर 1995 से अब तक पंचायतों में आये बदलाव से भी प्रेरित हो। 2000 में चुनी गई प्रधानों में से 22.88 प्रतिशत ने आरक्षण न होने पर भी चुनाव लड़ने की बात कही। यह 1995 से थोड़ा अधिक है, किन्तु निश्चय ही नई व्यवस्था के अन्तर्गत दो चुनाव बीत जाने के बाद यह महिला नेतृत्व के उभार का भी संकेत हो सकता है क्योंकि 2005 में चुनी गइ प्रधानों में

[1] व्यक्तिगत पर्यवेक्षण के आधार पर

यह उत्तर 36.86 तक पहुँच जाता है। 1995 में निर्वाचित 71.55 प्रधानों ने आरक्षण न होने की स्थिति में चुनाव न लड़ने की बात कही और 12.3 प्रतिशत ने अनिश्चय की स्थिति व्यक्त की। 2000 में निर्वाचित 67.79 प्रतिशत ने और 2005 में विजयी 54.54 प्रधानों ने आरक्षण न होने , चुनाव न लड़ने की बात कही और क्रमशः 9.32 प्रतिशत तथा 6.58 प्रतिशत ने अनिश्चय की स्थिति बताई। यह तथ्य यह सिद्ध करता है कि आरक्षण न होने की स्थिति में भी ग्राम प्रधान पद पर महिलाओं का निर्वाचन में सहभागी होने का साहस बढा है और क्रमशः अनिश्चय की स्थिति भी कम हुई है। यह बात इस तथ्य से भी सिद्ध होता है कि 1995 में जहां केवल 02 महिलायें अनारक्षित पदों पर चुनी गई थी, वहीं 2000 में 04 और 2005 के निर्वाचन में 05 अनारक्षित प्रधान पदों पर कब्जा किया।

सारणी 5.2[1]

आरक्षण न होने पर पंचायत चुनाव लड़ने की स्थिति

क्रं.	आरक्षण न होने पर चुनाव लड़ती या नही ?	1995		2000		2005	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	18	15.51	27	22.88	73	36.86
2	नहीं	83	71.55	80	67.79	108	54.54
3	अनिश्चित	15	12.93	11	9.32	17	8.58
	योग -	**116**	**100**	**118**	**10**	**195**	**100**

3. बैठकों में उपस्थिति

क्या आप ग्राम पंचायत, ग्राम सभा अथवा पंचायत से सम्बन्धित बैठकों में स्वयं भाग लेती है/ लेती थी ? यह पूछे जाने पर 1995 में निर्वाचित 33.33 प्रतिशत प्रधानों ने हां और 67.67 ने ना में उत्तर दिया, 2000 में से 77.37 प्रतिशत ने हां में और शेष ने ना में उत्तर दिया जबकि 2005 में निर्वाचित प्रधानों में शत-प्रतिशत महिला प्रधानों ने स्वयं बैठकों में

[1] साक्षात्कार अनुसूची के आधार पर किये गये सर्वेक्षण के आधार पर

उपस्थित रहने की बात स्वीकार की ।[1] पंचायत संस्थाओं की बैठकों में महिला पदाधिकारियों की स्वयं उपस्थिति व सहभागिता बढ़ी है। इसके लिये महिलाओं में बढ़ती जागरूकता के साथ-साथ प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा की जाने वाली सख्ती भी उत्तरदायी है, जिसके चलते तथाकथित प्रधान पतियों व प्रधान पुत्रों की औपचारिक बैठकों से अब बाहर ही रहना पड़ता है।

4. पद से सम्बन्धित दायित्वों का सम्पादन

भारत में स्थानीय शासन की इकाइयों में ग्राम पंचायतें सबसे निचले स्तर पर स्थित है। स्थानीय समस्याओं के समाधान में इन इकाइयों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसीलिये स्थानीय शासन की संस्थाओं में समाज के हर वर्ग को आरक्षण प्रदान कर सबकी समान सहभागिता सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया है। लक्ष्य न केवल सबको निर्णय प्रक्रिया में समान रूप से भागीदार बनाना है, बल्कि उनके द्वारा लिये गये निर्णयों से सर्व कल्याण की व्यवस्था करना भी है। महिलाओं को दिया गया आरक्षण इस दृष्टि से अधिक उपयोगी है कि उनके द्वारा विशेष रूप से महिलाओं की समस्याओं पर ध्यान दिया जायेगा और उनके सम्यक समाधान का प्रयास भी किया जायेगा। यह तभी संभव है जब महिलायें ग्राम प्रधान के रूप में उन्हें सौपे गये दायित्वों का निर्वाह स्वयं बेबाक तरीके से करे। यदि महिला प्रधान केवल छाया मात्र बनी रहे और उनके कार्यो का सम्पादन कोई और करें तो पंचायतों में उनको दिये गये आरक्षण का मन्तब्य पूरा नहीं हो सकता। यह पूछे जाने पर कि ग्राम प्रधान के रूप में पद से सम्बन्धित कार्यो का सम्पादन आप स्वयं करती हैं या आपके पति, पिता अथवा परिवार के अन्य सदस्य । बड़ी संख्या में महिला प्रधानों ने स्वयं कार्य करने की बात दोहरायी । किन्तु उनका यह उत्तर स्पष्ट कम प्रच्छन्न अभिव्यक्ति अधिक था क्योंकि गवेषक के समक्ष ही कई महिला प्रधानों के पति/ पिता/ पुत्र अथवा अन्य किसी पारिवारिक सदस्य ने साक्षात्कार अनुसूची पूरित करने में उनकी सहायता की थी । 1995 में चुनी गई महिला प्रधानों में से 75.42 प्रतिशत ने, 2000 में चुनी गई प्रधानों में से 75.42 प्रतिशत ने और 2005 में चुनी गई प्रधानो में से 88.88 ने स्वयं

[1] वही

सभी कार्यो को करने की बात स्वीकार की । निश्चय ही 1995 से 2005 तक यह संख्या बढ़ी है।

सारणी 5.3

पद से सम्बन्धित कार्यो का सम्पादन

क्रं.	पद से सम्बन्धित कार्यो का सम्पादन	1995		2000		2005	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	स्वयं	67	57.75	89	57.75	176	88-88
2	पति/ पिता अथवा परिवार के अन्य सदस्य	49	42.24	29	42.24	22	11.11
	योग -	**116**	**100**	**118**	**100**	**198**	**100**

यदि उपर्युक्त सारणी के निष्कर्षो में से वास्तविक निष्कर्ष खोजने का प्रयास किया जाय तो इसके लिये एक ही आधार बनता है - स्वयं बिना किसी की सहायता से उत्तर देने वालों की संख्या । शोधार्थी द्वारा स्वयं बिना किसी की सहायता के साक्षात्कार देने वाली महिला प्रधानों के अनुसूची प्रपत्रों को विशेष रूप से चिन्हित कर लिया गया था। इस प्रकार अलग किये गये प्रपत्रों से ज्ञात हुआ कि 1995 के 32 अर्थात 27.58 प्रतिशत, 2000 के 47 अर्थात 39.83 प्रतिशत व 2005 के 94 अर्थात 48.70 प्रतिशत महिला प्रधानों ने स्वयं स्वतंत्र रूप से उत्तर दिया था। अतः यह संख्या स्वयं पद से सम्बन्धित कार्य करने वाली महिला प्रधानों की वास्तविक संख्या हो सकती है। इस दृष्टि से भी यदि देखा जाय तो महिला प्रधानों में चुनाव दर चुनाव क्रमिक रूप से जागरूकता आयी हैं।

5. निर्णयकारिता की स्थिति

शासन के निर्णय निर्माण प्रक्रिया में महिलाओं को अधिक से अधिक सहभागी बनाने के लिये महिलाओं को एक तिहाई आरक्षण पंचायत संस्थाओं व नगर निकायों में दिया गया। इस आरक्षण के आधार पर बड़ी संख्या में महिलायें उन पदों पर चुन कर आई, जहां उनकी संख्या नगण्य अथवा शून्य थी । 1995 से पूर्व हमीरपुर जनपद के किसी भी गांव में कोई

भी महिला ग्राम प्रधान नहीं रही । दबंग और दबदबे वाले लोगों के इस खेल में महिलाओं का भाग लेना भी कल्पना से परे था। किन्तु 73वें संविधान संशोधन के बाद से स्थिति में अचानक बदलाव आया। 73वें संविधान संशोधन के आलोक में संशोधित ''उत्तर प्रदेश पंचायत राज (सदस्यों, प्रधानों और उप प्रधानों का निर्वाचन) नियमावली 1994 के आधार पर हुए पंचायत चुनावों में 1995 में हमीरपुर जनपद में 116 महिलायें, 2000 में 118 महिलायें और 2005 में 198 महिलायें ग्राम प्रधान पद पर निर्वाचित हुई। इस महत्वपूर्ण पद पर इतनी बड़ी संख्या में महिलाओं का पदासीन होना आश्चर्यजनक एवं चुनौतीपूर्ण अनुभव था। पुरूष प्रधान इस व्यवस्था में पुरूषों द्वारा महिलाओं को सहजता से इन पदों पर स्वीकार नहीं किया गया, परिणामस्वरूप उनके प्रत्येक कार्य पर उनके स्वयं के विवेक के स्थान पर दूसरे व्यक्ति (किसी न किसी पुरूष) की प्रतिछाया स्पष्ट दिखाई दी। यद्यपि ''पंचायत के निर्णय आप स्वयं लेती है अथवा किसी के प्रभाव में ? '' पूछे जाने पर 1995 के 9.48 प्रतिशत महिला प्रधानों ने स्वयं, 2000 के 12.71 प्रतिशत ने स्वयं 2005 के प्रधानों में से 44.44 ने स्वयं निर्णय लेने की बात ईमानदारी से स्वीकार की।

सारणी 5.4[1]

निर्णय कारिता की स्थिति

क्रं.	निर्णयकारिता की स्थिति	1995		2000		2005	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	स्वयं	11	9.48	15	12.71	88	44.44
2	पिता/ पति द्वारा	96	82.75	103	87.28	105	53.03
3	अन्य प्रभावशाली व्यक्ति द्वारा	9	7.75	00	00.00	05	2.52
	योग –	**116**	**100**	**118**	**100**	**198**	**100**

[1] वही

इस प्रकार यह देखा गया कि 1995 के महिला प्रधानों में से 82.75 प्रतिशत अपने पति/ पिता अथवा परिवार के अन्य सदस्य से प्रभावित निर्णय लेती रही हैं। 7.75 प्रतिशत किसी अन्य प्रभावशाली व्यक्ति के प्रभाव में निर्णय करती रही हैं। 2000 के चुनावों में चुनी गई महिला प्रधानों में स्वयं निर्णय लेने वाली महिलाओं की संख्या 12.71 तक बढ़ी किन्तु परिवार के सदस्यों द्वारा निर्णय लेने का प्रतिशत भी 1995 की तुलना में बढ़ा , किन्तु 2005 के चुनाव के बाद से स्थिति में परिवर्तन दिखाई देता है। वर्तमान में 44.44 प्रतिशत महिलायें स्वयं निर्णय करती हैं, फिर भी 53.03 प्रतिशत ने निर्णय उनके परिवार प्रमुख ही करते हैं। यह निराशाजनक है किन्तु यह तय है कि पहले कि तुलना में महिलाओं में चेतना व निर्णयकारिता बढ़ी हैं।

6. आरक्षण के विषय में जानकारी

पंचायत चुनावों में आरक्षण व्यवस्था की जानकारी के सम्बन्ध में तीनो ही पंचायत चुनावों में विजश्री ग्राम प्रधानों में अधिकांश को जानकारी है। इस विषय में बहुत कम जानने वालों का प्रतिशत न्यून है।

सारणी 5.5[1]

आरक्षण के विषय में जानकारी की स्थिति

क्रं.	आरक्षण के विषय में जानकारी की स्थिति	1995		2000		2005		औसत
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	प्रतिशत
1	अच्छी	37	31.89	59	50.00	92	46.46	43.51
2	औसत	63	54.31	51	43.22	83	41.91	45.60
3	बहुत कम	16	13.79	8	6.77	23	11.61	10.87
	योग –	**116**	**100**	**118**	**100**	**198**	**100**	**100**

[1] वहीं

यदि तीनों चुनावों में निर्वाचित महिला प्रधानों को आरक्षण के सम्बन्ध में ज्ञान का औसत समवेत मूल्यांकन किया जाय तो हम पायेंगे कि 43.51 प्रतिशत महिलाओं को इसकी अच्छी जानकारी है। 45.60 प्रतिशत महिलाओं को औसत और 10.87 प्रतिशत को बहुत कम जानकारी है। आरक्षण के विषय में अच्छी जानकारी रखने वाली महिला प्रधानों की संख्या क्रमिक रूप से बढ़ी है।

7. पंचायत के नियमों व कार्यो की जानकारी

किसी पद को प्राप्त कर लेना जितना महत्वपूर्ण होता है उतना ही उस पद से सम्बन्धित दायित्वों का निर्वाह करना और यह कार्य व्यक्ति तभी भलीभांति कर सकता है जब उसे पद से सम्बन्धित कार्यो व नियमों की अच्छी जानकारी हो । जब ग्राम प्रधान पद के कार्यो व ग्राम पंचायत के नियमों की जानकारी के संबंध में महिला प्रधानों से पूछा गया तो जो स्थिति उभर कर सामने आई उसे निम्न सारणी में स्पष्ट देखा जा सकता है -

सारणी 5.6[1]

पंचायत के नियमों व कार्यो की जानकारी

क्रं.	पंचायत के नियमों व कार्यो की जानकारी	1995		2000		2005	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	अच्छी	14	12.06	18	15.25	77	38.88
2	औसत	53	45.68	67	56.77	103	52.02
3	बहुत कम	49	42.24	33	27.96	18	9.04
	योग -	**116**	**100**	**118**	**10**	**195**	**100**

इस प्रश्न के विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि 1995 के महिला प्रधानों में से मात्र 12.06 प्रतिशत को, 2000 के महिला प्रधानों में 15.25 प्रतिशत को और 2005 में निर्वाचित महिला प्रधानों में 38.88 प्रतिशत को ग्राम पंचायत के कार्यो व नियमों की विधिवत जानकारी है। क्रमशः 45.68 प्रतिशत, 56.77 प्रतिशत व 52.02 प्रतिशत को औसत किस्म की जानकारी है।

---

[1] वही

इसी प्रकार क्रमशः 42.24 प्रतिशत, 27.96 प्रतिशत व 9.09 प्रतिशत को इस विषय में बहुत कम जानकारी है। अच्छी जानकारी रखने वाली महिला पदाधिकारियों की संख्या क्रमशः बढ़ी है जो एक शुभ संकेत है।

8. महिलाओं के लिये पंचायत संस्थाओं में आरक्षण सही या गलत ?

73वें संविधान संशोधन द्वारा पंचायत संस्थाओं में महिलाओं को एक तिहाई आरक्षण देने का सरकार का फैसला सही है या गलत ? यह पूछे जाने पर अधिकांश उत्तरदाताओं ने इस नवीन व्यवस्था का स्वागत किया और खुले मन से यह स्वीकार किया कि आरक्षण न होता तो पंचायत संस्थाओं में महिलाओं की इतनी बढ़ी संख्या में भागीदारी संभव नहीं होती । 1995 में चुनी गई प्रधानों में से 85.34 प्रतिशत ने 2000 में निर्वाचित 95.76 प्रतिशत ने और 2005 में विजयी 93.95 प्रतिशत महिला प्रधानों ने महिलाओं के लिये आरक्षण को सही बताया । इस सम्बन्ध में 1995 की प्रधानों में 5.17 प्रतिशत में जहां अनिश्चय की स्थिति थी वहीं 2005 में विजयी प्रधानों में यह प्रतिशत 2.54 नहीं था। 2000 के प्रधानों में से जहां मात्र 4.23 ने नकारात्मक उत्तर दिया वहीं 2005 की महिला प्रधानों से 2.54 के ही नकरात्मक जवाब आये जबकि 1995 में आरक्षण को गलत बताने वाली महिला प्रधानों का प्रतिशत 9.48 था। निश्चय ही महिला आरक्षण की स्वीकार्यता व उपयोगिता दिन प्रतिदिन बढ़ी है।

सारणी 5.7[1]

महिलाओं के लिये पंचायत संस्थाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण सही है ?

क्रं.	महिलाओं के लिये पंचायत में 33 प्रतिशत आरक्षण सही है ?	1195		2000		2005		औसत	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	99	85.34	113	95.76	190	95.95	402	93.05
2	नहीं	11	9.48	5	4.23	3	1.51	19	4.39
3	अनिश्चित	6	5.17	-	-	5	2.52	11	2.54
	योग -	**116**	**100**	**118**	**100**	**198**	**100**	**432**	**100**

9. राजनीतिक गतिविधियों में सहभागिता

लोकतंत्र में राजनीतिक सहभागिता का अत्यन्त महत्व होता हैं सहभागिता की स्थिति और प्रकृति पर लोकतंत्र की सफलता/ असफलता का मूल्यांकन किया जाता है। यही कारण है कि प्रायः सभी लोकतांत्रिक देशों में किसी न किसी प्रकार जन सामान्य को राजनीतिक गतिविधियों में सक्रिय करने का प्रयास किया जाता है। इस सम्बन्ध में ध्यान रहे कि सत्ता का विकेन्द्रीकरण करते हुए इसी उद्देश्य से अधिक से अधिक लोगों को निर्णय प्रक्रिया में भागीदार बनाया जाता है जिससे लोगों को राजनीतिक गतिविधियों और समस्याओं के प्रति अधिक से अधिक जागरूक बनाया जा सके। इसीलिये स्थानीय शासन की इकाइयों को लोकतंत्र की ''नर्सरी'' के रूप में जाना जाता है। भारत में स्थानीय शासन की इकाइयां नगरीय और ग्रामीण क्षेत्रों के लिये अलग-अलग रूपों में है। नगरीय क्षेत्र में नगर निगम, नगर पालिकायें व टाउन एरिया आबादी के अनुसार निर्धारित होते थे । ग्रामीण क्षेत्र में बलवन्त राय मेहता समिति की सिफारिश के आधार पर त्रिस्तरीय पंचायत व्यवस्था, की स्थापना की गई थी जिसमें सबसे निचले स्तर पर ग्राम पंचायत, द्वितीय स्तर पर खण्ड विकास और जनपद स्तर पर जिला परिषद होती थी। नगरीय और ग्रामीण दोनो ही स्तर की इकाइयों में प्रभुत्वशाली लोगों का दबदबा रहता था।

[1] वही

कमजोर वर्गो, विशेष रूप से महिलाओं के लिये इन संस्थाओं के माध्यम से राजनीति का ककहरा सीख पाना कल्याणकारी था।

भारत की लगभग 75 प्रतिशत आबादी गांवों में बसती है और ग्रामीण परिवेश अभी भी बहुत पिछड़ा हुआ है। पिछड़ी जाति, अनुसूचित जाति व विशेष रूप से महिलायें राजनीतिक चेतना के संदर्भ में पीछे हैं। यही कारण है कि स्थानीय शासन की सबसे निचली इकाई ग्राम पंचायत से लेकर ऊपर तक इनकी उपस्थिति नहीं के बराबर रही है। यह एक कटु सत्य है कि जब तक समाज का हर वर्ग समान रूप से देश प्रदेश की राजनीति में भागीदार नहीं होता तब तक सच्चे लोकतंत्र की कल्पना नहीं की जा सकती।

इसी उद्देश्य से 73वां व 74वां संविधान संशोधन समाज के दबे पिछडे वर्गो, अनुसूचित जाति/ जनजाति, पिछड़ी जातियों को उनके आबादी के अनुपात में क्रमशः 23 प्रतिशत व 27 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था व महिलाओं के लिये प्रत्येक स्तर पर 1/ 3 स्थानों पर आरक्षण की व्यवस्था करता है। इस आरक्षण के अनुक्रम में 1995, 2000 व 2005 में हुए पंचायत चुनावों में बडी संख्या में महिलाये चुनकर आई और स्थानीय शासन की राजनीति में अपने उपस्थिति की दस्तक दी। पंचायत संस्थाओं में महिलाओं का आरक्षण उन्हें राजनीति में उलझाते हुए कितना सक्रिय और सहभागी बनायेगा, यह भविष्य का विषय है। वर्तमान शोध से जो निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं (हमीरपुर जनपद के विशेष संदर्भ में) वे यह सिद्ध करते हैं कि ग्रामीण महिलायें जो ग्राम पंचायतों के सबसे महत्वपूर्ण पद ग्राम प्रधान के रूप में कार्य कर चुकी हैं अथवा कर रही हैं, उनकी राजनीतिक सहभागिता प्रायः बहुत ही न्यून है और जो है भी वह निर्देशित व दर्शक गतिविधियों तक ही सीमित है। इस संदर्भ में 1995 में निर्वाचित 116, 2000 में निर्वाचित 118 व 2005 में विजयी 198 महिला प्रधानों से उनकी राजनीतिक रूचि के सम्बन्ध में कुछ प्रश्नों के माध्यम से उनकी राजनीतिक सहभागिता के मूल्यांकन का प्रयास किया गया है।

साक्षात्कार अनुसूची पद्धति से सबसे पहले यह जानने का प्रयास किया गया कि इन 432 पूर्व और वर्तमान ग्राम प्रधानों में से कितने किसी राजनीतिक दल की सदस्य है केवल

14.58 प्रतिशत महिलाओं ने किसी न किसी राजनीतिक दल का सदस्य होने की बात स्वीकार की। शेष 85.41 प्रतिशत किसी भी राजनीतिक दल की सदस्य नहीं हैं।

सारणी 5.8

राजनीतिक दल की सदस्यता

क्र.सं.	राजनितिक दल की सदस्य हैं ?	1995		2000		2005		औसत	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	8	6.89	22	18.64	33	16.66	63	14.58
2	नहीं	108	93.10	96	81.35	165	83.33	369	85.41
	योग	116	100	118	100	198	100	432	100

यह पूछे जाने पर कि उनके परिवार का कोई सदस्य राजनीतिक दल का सदस्य है अथवा नहीं स्थिति थोड़ी भिन्न दिखायी दी । 432 पूर्व व वर्तमान महिला प्रधानों के कई परिवारो के पुरूष सदस्य राजनीतिक दलों से सम्बद्धत्ता रखते हैं। इस प्रकार के महिला प्रधानों की संख्या 36.06 प्रतिशत है जिनके परिवार का कोई सदस्य किसी राजनीतिक दल का सदस्य है। 63.93 प्रतिशत प्रधानों में से न तो वे और न ही उनके परिवार का कोई व्यक्ति किसी राजनीतिक दल का सदस्य है।

यह पूछे जाने पर कि क्या आपको किसी राजनीतिक दल से लगाव है या किसी राजनीतिक दल का समर्थन करती हैं, लगभग 50 प्रतिशत महिला प्रधानो ने किसी न किसी राजनीतिक दल के प्रति अपनी पसन्दगी व्यक्त की ।

लोकसभा/ विधानसभा/ पंचायत चुनावों में किसी के पक्ष में मतदान का निर्णय स्वविवेक से करती हैं, पारिवारिक दबाब पर करती हैं या किसी अन्य प्रभाव के कारण करती हैं, के जवाब में 25.23 प्रतिशत महिला प्रधानों ने अपने विवेक से मतदान का निर्णय करने की बात स्वीकार की । 52.77 प्रतिशत ने पारिवारिक दबाव के आधार पर और 21.99 प्रतिशत ने अन्य दबावों जैसे जातीय दबाव, रिश्तेदारी, नातेदारी, आदि का दबावों की बात स्वीकार की ।

सारणी 5.9

मतदान के निर्णय का आधार

क्र.	मतदान के निर्णय का आधार	संख्या	प्रतिशत
1	स्वविवेक	109	25.23
2	पारिवारिक दबाब	228	52.77
3	अन्य दबाब	95	21.99
	योग -	432	100

लोकसभा/ विधानसभा/ पंचायत चुनावों में मतदान हेतु उपयुक्त प्रत्याशी का चयन किस आधार पर करती है ? यह जानने के लिये सभी उत्तरदाताओं को चार विकल्प दिये गये थे - दल, विचारधारा, प्रत्याशी की योग्यता और प्रत्याशी की जाति अथवा स्वयं के निकट संम्बन्धी । इस प्रश्न के उत्तर में बहुमत ने दलीय प्रतिबद्धता के आधार पर मतदान करने की बात कही । यह प्रतिशत 49.53 प्रतिशत था। विचारधारा से उच्च शिक्षित महिला प्रधान ही परिचित थी अतः केवल 1.38 प्रतिशत ने विचारधारा के आधार पर मतदान करने की बात स्वीकार की। इसी प्रकार 30.78 प्रतिशत ने प्रत्याशी की योग्यता व 18.28 प्रतिशत ने जाति अथवा प्रत्याशी के निकट संबंध को अपने मतदान का आधार माना ।

सारणी 5.10

मतदान हेतु प्रत्याशी के चयन का आधार

क्र.	प्रत्याशी चयन का आधार	संख्या	प्रतिशत
1	दल	214	49.53
2	विचारधारा	6	1.38
3	प्रत्याशी की योग्यता	133	30.78
4	प्रत्याशी की जाति अथवा निकट संबंध	79	18.28
	योग	432	100

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट है कि राजनीतिक दलों के विषय में ग्रामीण स्तर पर महिलाओं को जानकारी है और वे किसी न किसी राजनीतिक दल के प्रति प्रतिबद्धता की बात स्वीकार करती है। इसके बाद मतदान का दूसरा बडा आधार प्रत्याशी की योग्यता है और अन्ततः जाति व निकट संबंध भी इनके मतदान व्यवहार को एक सीमा तक प्रभावित करते हैं।

पंचायत राजनीति और ग्राम पंचायत के कार्यो के अतिरिक्त राजनीतिक कार्यो में वे किस प्रकार से सहभागिता करती है ? यह पूछे जाने पर जो निष्कर्ष दिये गये विकल्पों के आधार पर उभर कर सामने आये वे निम्न तालिका से स्पष्ट हो जाते हैं -

सारणी 5.11

राजनीतिक कार्यो में सहभागिता का प्रकार

क्र.	राजनीतिक गतिविधियों में सहभागिता का प्रकार	संख्या	प्रतिशत
1	दलों का चन्दा देना	34	7.87
2	रैली,बैठकों में भाग लेना	43	9.95
3	दल का झण्डा अथवा बिल्ला लगाना	303	70.13
4	प्रदर्शन/ घेराव	52	12.03
	योग	**432**	**100**

सारणी से स्पष्ट है कि केवल 7.87 प्रतिशत महिला प्रधान राजनीतिक दलों को चन्दा देती हैं। 9.95 प्रतिशत ने रैलियों व दलों की बैठकों में भाग लेने की बात स्वीकार की। सर्वाधिक संख्या राजनीतिक दलों के प्रतीकात्मक समर्थन को स्वीकार करने वालों की है अर्थात 70.13 प्रतिशत महिलायें बेझिझक किसी दल का झण्डा अथवा बिल्ला लगाकर अपने पसन्दीदा राजनीतिक दल के प्रति समर्थन व्यक्त करती हैं। 12.03 प्रतिशत महिला प्रधान प्रदर्शन /घेराव आदि गतिविधियों में सहभागी होती है। यह स्थिति स्पष्ट करती है कि आरक्षित पदों पर पूर्व और वर्तमान में पदासीन रही महिला ग्राम प्रधानों की राष्ट्रीय अथवा प्रादेशिक राजनीति में सहभागिता दर्शक गतिविधियों के आसपास है और यह भी परिवार के प्रभाव से निर्देशित है।

इस प्रकार किये गये अध्ययन से निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए -

1. पिछले तीन पंचायत चुनावों में महिलायें अधिकांशतः ग्राम प्रधान पद व अन्य पदों पर आरक्षित स्थानों से ही चुनकर आई। अनारक्षित सीटों को स्वतः उन्होंने पुरूषों के लिये आरक्षित मान लिया । यद्यपि 1995 में 2, 2000 में 4 और 2005 में 5 महिलायें अनारक्षित सीटों से चुनकर आई किन्तु यह संख्या महिला जागरूकता के संदर्भ में पर्याप्त नहीं है।

2. तीनों ही चुनावों में विजयी महिला प्रधानों में से औसतन 16.66 प्रतिशत ने ही स्वयं पंचायत प्रधान का चुनाव लड़ने का निर्णय लिया था। शेष ने या तो पारिवारिक प्रेरणा अथवा आरक्षण की व्यवस्था के कारण ही चुनाव लड़ने का निर्णय लिया। स्वयं चुनावी समर में कूदने वाली महिलाओं का यह प्रतिशत बहुत ही कम है। जब तक अधिक से अधिक महिलायें स्वयं चुनावी जंग में उतरने व उससे जूझने का साहस नहीं करती उनकी राजनीतिक सहभागिता समृद्ध नहीं होगी ।

3. 432 पूर्व व वर्तमान प्रधानों में से 62.73 ने आरक्षण न होने पर चुनाव न लड़ने की बात कही । यह तथ्य भी उनकी राजनीतिक सक्रियता के विरूद्ध जाती है।

4. महिला प्रधान बैठकों में प्रायः कम सहभागिता करती है। यद्यपि 1995 की तुलना में 2005 तक स्थिति में पर्याप्त बदलाव आया है किन्तु यह स्थिति अभी भी सन्तोषजनक नहीं है।

5. यह बात भी निर्मूल सिद्ध हुई है कि महिलायें स्वतः ही निर्णय प्रक्रिया में भाग लेने लगेंगी । इस सम्बन्ध में औसतन 26.38 महिला प्रधान ही स्वयं निर्णय करने की स्थिति में रही है। शेष पारिवारिक सहयोग व अन्य प्रभावशाली व्यक्तियों के सहयोग से ही निर्णय लेने में सक्षम रही है। जब तक महिलायें स्वतः निर्णय नहीं लेने लगती तब तक महिला नेतृत्व विकसित नहीं किया जा सकता और न ही पंचायत संस्थाओं में उनके आरक्षण का वास्तविक प्रतिफल ही प्राप्त होगा ।

6. इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि 432 में से केवल 25.23 प्रतिशत महिला प्रधानों को पंचायत नियमों व कार्यो से अच्छी जानकारी है। शेष 51.62 प्रतिशत को

औसत व 23.14 प्रतिशत को इस विषय में बहुत कम जानकारी है। महिलाओं को जब तक पंचायत प्रावधानों व कार्यो के विषय में सम्यक जानकारी नहीं होगी वे अपने दायित्वों के निर्वाह के संदर्भ में किसी के सहारे पर निर्भर रहेगी ।

7. पंचायत संस्थाओं में महिलाओं के लिये आरक्षण को 93.05 प्रतिशत महिलाओं ने उचित माना जो यह सिद्ध करता है कि महिलायें निर्णय प्रक्रिया में भागीदारी तो चाहती है किन्तु कतिपय कारणों से बिना आरक्षण के इन पदों तक पहुंच पाने में कठिनाई का अनुभव करती है।

8. पंचायत गतिविधियों के अतिरिक्त राष्ट्रीय व प्रान्तीय राजनीति में ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी दर्शक गतिविधियों के आसपास है। नमूने के तौर पर केवल महिला ग्राम प्रधानों का इस सम्बन्ध में सर्वेक्षण किया गया । केवल 14.58 महिलायें ही किसी राजनीतिक दल की सदस्य हैं। राजनीतिक दलों के विषय में जानकारी व किसी न किसी राजनीतिक दल से 50 प्रतिशत महिलाओं का लगाव है। इनमें से 36.06 प्रतिशत के परिवार का कोई न कोई सदस्य किसी राजनीतिक दल का सदस्य है। केवल 25.23 प्रतिशत ही अपने विवेक से मतदान करती है, शेष पारिवारिक अथवा अन्य दबाबों के आधार पर मतदान करती है, शेष प्रत्याशी की योग्यता, विचारधारा अथवा जातीय आधार पर ।

9. राजनीतिक गतिविधियों में सहभागिता दलों के प्रतीकात्मक समर्थन तक सीमित है। क्योंकि 70.13 प्रतिशत महिला प्रधान केवल दल का झण्डा अथवा बिल्ला लगाकर उसका समर्थन करती है। 7.87 प्रतिशत चन्दा देती है। 9.95 प्रतिशत रैलियों व बैठकों में भाग लेती है व 12.03 प्रतिशत प्रदर्शन आदि में भाग लेती है। जब तक महिलाओं की यह सहभागिता लडाकू गतिविधियों तक विस्तृत नहीं हो पाती तब तक उनके आरक्षण का सही लाभ नहीं मिल पायेगा।

10. पंचायत अथवा अन्य संस्थाओं में महिलाओं की उपस्थिति आरक्षण के कारण ही बढी है। क्रमशः महिलाओं ने अनारक्षित पदों की ओर कदम बढाने का भी साहस प्रदर्शित किया है।

11. महिला आरक्षण का सर्वाधिक लाभ पिछडी जाति की महिलाओं को मिला है क्योंकि वे अपने आरक्षित वर्ग से जीत कर तो आती ही है शेष सामान्य वर्ग की सीटों पर भी कब्जा कर लेती है। यह तथ्य निम्न तालिका से स्पष्ट हो जाता है -

तालिका 5.12

आरक्षित महिला सीटों पर निर्वाचित पिछडे वर्ग के महिला प्रधानों की संख्या

चुनाव वर्ष	सामान्य		पिछडा वर्ग	
	आरक्षित	निर्वाचित	आरक्षित	निर्वाचित
1995	41	32	41	52
2000	41	31	41	53
2005	107	37	49	124
योग -	**189**	**100**	**131**	**229**

स्पष्ट है कि पिछड़े वर्ग की महिलाओं ने क्रमिक रूप से अपना प्रतिनिधित्व बढ़ाया है। अनुसूचित जाति की महिलायें अपने वर्ग के लिये आरक्षित सीटों पर ही चुनी गई हैं।

❋❋❋❋❋

अध्याय–6

पंचायत संस्थाओं में महिला सहभागिता को प्रभावित करने वाले कारक

- साक्षरता
- व्यक्तिगत, पारिवारिक व सामाजिक कारक
- राजनीतिक कारक
- आर्थिक कारक
- सांस्कृतिक कारक

पंचायत संस्थाओं में महिला सहभागिता को प्रभावित करने वाले कारक

73वें संविधान संशोधन के बाद निर्धारित नवीन पंचायत राज व्यवस्था में महिलायें पंचायत संस्थाओं के हर स्तर पर उन पदों पर बड़ी संख्या में आसीन हुई जिन पर अब तक उनकी उपस्थिति नगण्य थी, जिन पर पुरूषों विशेष रूप से दबंग लोगों का दबदबा था। नई पंचायत व्यवस्था लागू होने के बाद 1995 से 2005 तक उत्तर प्रदेश में तीन पंचायत चुनाव हो चुके हैं । इन तीन चुनावों में उत्तर प्रदेश के हमीरपुर जनपद में कुल 432 महिलाओं ने ग्राम प्रधान की महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। क्या इन महिला प्रधानों ने 73वें संविधान संशोधन की अपेक्षाओं के अनुरूप कार्य किया ? क्या इन्होंने विकेन्द्रीकरण की महती आवश्यकता को पूर्ण किया ? क्या शासन में महिला सहभागिता के विसरण का उददेश्य पूर्ण हुआ ? क्या जिन कारणों से महिलाओं को शासन के इस निचले स्तर पर आरक्षण देकर सहभागी बनाया गया था वे उददेश्य पूर्ण हो रहे हैं ? आदि अनेक प्रश्न हैं जिनके उत्तर का विश्लेषण किया जाना है।

वास्तव में इस शोध प्रबन्ध के पांचवे अध्याय के विश्लेषण से इन प्रश्नों के बहुत उत्साहजनक परिणाम प्राप्त नहीं हुए । निश्चय ही महिलाओं को एक तिहाई पदों पर आरक्षण दिये जाने का उददेश्य शुभ है और जब महिलायें स्वयं अपने विवेक व अपनी क्षमता के अनुरूप अपने को सौंपे गये दायित्वों का निर्वाह करेंगी तो वांछित लाभ राष्ट्र व समाज को अवश्य प्राप्त होगा किन्तु अभी प्रारम्भ है। सदियों से पर्दे के पीछे सामाजिक रूढ़ियों के बोझ तले दबी महिलाओं से अचानक उठकर दौड़ पड़ने की अपेक्षा भी नहीं की जा सकती। 1995 , 2000 व 2005 में चुनी गई प्रधानों की स्थिति, कार्यक्षमता व कार्यशैली में क्रमिक बदलाव इस बात का संकेतक है कि विभिन्न विध्न, बाधाओं व अड़चनों के दूर होने पर महिलायें ग्राम प्रधान या पंचायत संस्था के अन्य महत्वपूर्ण पदों पर अपेक्षा के अनुरूप कार्य कर सकेंगी।

वर्तमान में जो महत्वपूर्ण कारक और बाधायें महिलाओं के कार्य निष्पादन को प्रभावित कर रही है वे निम्न हैं :-

साक्षरता :- निरक्षरता और अशिक्षा इन महिला पदाधिकारियों की एक आधारभूत समस्या रही है। स्वतंत्रता के बाद से स्त्री साक्षरता दर में क्रमिक वृद्धि हुई है किन्तु 2001 की जनगणना के अनुसार आज भी लगभग 46 प्रतिशत महिलायें निरक्षर हैं जबकि इनकी तुलना में पुरूषों में निरक्षरता दर लगभग 24 प्रतिशत है, स्वतंत्रता के पश्चात विभिन्न जनगणना वर्षो से स्त्री साक्षरता दर में वृद्धि व पुरूष-स्त्री, साक्षरता दर में अन्तर को निम्न तालिका में स्पष्ट देखा जा सकता है।

सारणी 6.1

स्वतंत्रता के पश्चात स्त्री साक्षरता दर में वृद्धि व साक्षरता दर में पुरूष-स्त्री अन्तर[1]

जनगणना वर्ष	कुल साक्षरता दर	स्त्री साक्षरता	पुरूष साक्षरता	साक्षरता दर में पुरूष स्त्री अन्तर
1951	18.33	8.86	27.16	18.30
1961	28.30	15.35	40.40	25.05
1971	34.45	21.97	45.96	23.99
1981	43.57	29.76	56.38	26.62
1991	52.21	39.29	64.13	24.84
2001	65.38	54.16	75.85	21.69

हमीरपुर जनपद में पिछले तीन दशकों में साक्षरता वृद्धि का मूल्यांकन किया जाय तो लगभग इसी प्रकार की स्थिति उभरकर सामने आती है -

[1] स्रोत , भारत 2003 पृ0 13

सारणी 6.2

हमीरपुर जन पद में पिछले तीन दशकों में साक्षरता दर में वृद्धि व स्त्री-पुरूष साक्षरता दर में अन्तर[1]

जनगणना वर्ष	कुल साक्षरता दर	स्त्री साक्षरता	पुरूष साक्षरता	साक्षरता दर में पुरूष स्त्री अन्तर
1981	27.60	12.1	40.8	28.7
1991	41.71	22.07	54.86	35.79
2001	57.66	40.39	72.17	31.78

हमीरपुर जनपद में 1995 से 2005 तक के तीन पंचायत चुनावों में चुनी गई महिला ग्राम प्रधानों की शैक्षिक स्थिति का मूल्यांकन किया जाय तो हम पायेगें कि यद्यपि निरक्षर महिला प्रधानों की संख्या कम है किन्तु ऐसे महिला प्रधानों की संख्या बहुत अधिक है जो मात्र साक्षर है अथवा जो प्राथमिक या पूर्व माध्यमिक शिक्षा प्राप्त हैं। स्नातक /परास्नातक स्तर तक शिक्षित महिला प्रधानों की प्रतिशत बहुत ही कम है -

सारणी 6.3

हमीरपुर जनपद के निर्वाचित महिला ग्राम प्रधानों का शैक्षिक स्तर[2]

क्र. सं.	शैक्षिक स्तर	1995		2000		2005		कुल	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	निरक्षर	10	8.62	09	7.62	10	5.05	29	6.71
2	प्राथमिक/ पूर्व माध्यकि	89	76.72	97	82.20	165	83.33	351	81.25
3	हाईस्कूल	08	6.89	03	2.54	08	4.04	19	4.39
4	इन्टर	05	4.31	04	3.38	07	3.53	16	3.70
5	स्नातक / परास्नातक	04	3.44	05	4.23	08	4.04	17	3.93
	योग -	**116**	**100**	**118**	**100**	**198**	**100**	**432**	**100**

सारणी 6.3 के अवलोकन से स्पष्ट है कि 1995 से 2005 तक के तीन पंचायत चुनावों में हमीरपुर जनपद में चुनी गई कुल 432 महिला प्रधानों में से 6.71 प्रतिशत निरक्षर हैं

[1] सांख्यिकी पत्रिका, जिला हमीरपुर वर्ष 2006, कार्यालय अर्थ एवं संख्याधिकारी, पृ0 25
[2] साक्षात्कार अनुसूची से प्राप्त सूचना के आधार पर

जबकि 81.25 प्रतिशत केवल साक्षर प्राथमिक अथवा पूर्ण माध्यमिक तक शिक्षित हैं। इस प्रकार लगभग 88 प्रतिशत ऐसी महिलायें ग्राम प्रधान के रूप में चुनी गई जो पद के दायित्वों के निर्वाह के अनुरूप शिक्षा प्राप्त नहीं है। 4.39 प्रतिशत मैट्रिक पास हैं तो 3.70 प्रतिशत इन्टर पास हैं जिसे कामकाज के सम्बन्ध में शिक्षा की कामचलाऊ योग्यता माना जा सकता है। स्नातक या परास्नातक तक शिक्षा प्राप्त महिला प्रधानों का प्रतिशत मात्र 3.93 है। इस प्रकार ऐसी उच्च शिक्षित महिलाओं की संख्या बहुत ही कम है जो अपने पद के दायित्व से जुडे विषयों, प्रपत्रों, नियमों, कार्यो आदि को अच्छी तरह से समझ सकती हैं व तदनुसार कार्य कर सकती हैं।

बड़ी संख्या में अशिक्षित या कम शिक्षित प्रधानों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पडता है जिनके चलते वे सम्यक रूप से अपने दायित्वों का पूर्णता के साथ निर्वाह नहीं कर पाती । अशिक्षित महिला प्रधानों को मुख्य रूप से निम्न कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है -

1. दायित्व के प्रति अनभिज्ञता

किसी कार्य के निर्वाह में प्रेरणा एक महत्वपूर्ण कुंजी होती है। चुनी गई महिला प्रधान 1995 में इस कार्य के लिए बिल्कुल नई थी। बाद में हुए चुनावों में भी चुनी गई महिलाओं के लिये भी यह कार्य नया था और यह भी निश्चित है कि इनमें से अधिकांश ने यह दायित्व अपनी इच्छा से धारण नहीं किया है। किसी भी कार्य को प्रारम्भ करने से पूर्व व्यक्ति को अपने द्वारा निभाये जाने वाली भूमिका, कार्य एवं दायित्व तथा उसके विषयों, नियमों व कार्यविधियों के बारे में विधिवत ज्ञान होना चाहिये और इस प्रकार का ज्ञान व्यक्ति को तभी होगा जब वह मानसिक व शैक्षिक स्तर पर परिपक्व हो क्योंकि इस प्रकार व्यक्ति नये से नये दायित्व व कार्य के विषय में अपने प्रयासों से जानकारी प्राप्त कर लेता है। किन्तु चुनी गई महिला प्रधानों में बडी संख्या ऐसी महिलाओं की है जिन्होंने बिना यह जाने कि उन्हें क्या करना है, निर्वाचन हेतु नामांकन दाखिल किया। चुने जाने के बाद भी उनकी निरक्षरता या शैक्षिक स्तर उनके कार्य निर्वाह के मार्ग में आड़े आ जाता है। यही कारण है कि चुनी गई महिला प्रधानों में से अधिकांश

ग्राम प्रधान के रूप में अपनी भूमिका व कार्य से परिचित नहीं हैं। यह पूछे जाने पर कि क्या आप ग्राम प्रधान के अधिकारों एवं कर्तव्यों के विषय में जानती हैं ? केवल 19 प्रतिशत महिला प्रधानों ने हां में उत्तर दिया, 54 प्रतिशत ग्राम प्रधान के अधिकारों और कार्यो के विषय में नहीं जानती है और 27 प्रतिशत ने इस सम्बन्ध में अनिश्चय की स्थिति व्यक्त की ।[1] इसी प्रकर यह पूछे जाने पर कि क्या आप ग्राम पंचायत को सौपे गये सभी विषयों/ कार्यो के विषय में जानती हैं ? 25.23 प्रतिशत महिला प्रधानों ने हां , 74.77 प्रतिशत ने नहीं और शेष ने अनिश्चय की स्थिति बताई ।[2]

अपने अधिकारों और कार्यो के प्रति अनभिज्ञता के चलते ये महिला प्रधान निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित नहीं कर पाती और ग्राम प्रधान के कार्यो का संचालन अधिकांशतः परिवार का पुरूष सदस्य (पति / पुत्र या अन्य) द्वारा किया जाता है और चुनी गई प्रधान की स्थिति मात्र हस्ताक्षर करने वाली अधिकारी की रह जाती है।

2. निर्वाचन प्रक्रिया के प्रति अनभिज्ञता :-

किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था में निर्वाचन प्रक्रिया की अहम भूमिका होती है। स्वतंत्र व निष्पक्ष चुनाव लोकतंत्र को दृढ़ करते हैं अन्यथा यह मजाक बन कर रह जाता है। किसी भी लोकतांत्रिक निर्वाचित संस्था के लिये चुने जाने वाले अथवा चुनाव लड़ने वाले प्रत्याशियों को निर्वाचन प्रक्रिया के विषय में पर्याप्त जानकारी और इसके प्रति जागरूक होना चाहिये। नई पंचायत व्यवस्था में दिये गये आरक्षण के कारण बड़ी संख्या में महिलायें पंचायत संस्थाओं में चुनकर आई, किन्तु प्रस्तुत अध्ययन से यह पाया गया कि हमीरपुर जनपद में हुए तीन पंचायत चुनावों में चुनी गई महिला ग्राम प्रधानों में चुनाव प्रक्रिया के सम्बन्ध में पर्याप्त जानकारी व जागरूकता का अभाव है। इस अनभिज्ञता का कारण भी अशिक्षा है। निम्न तालिका में कुछ विशेष प्रश्नों के उत्तर के विश्लेषण से यह स्थिति स्पष्ट हो जाती है।

---

[1] साक्षात्कार अनुसूची से किये गये साक्षात्कार से प्राप्त निष्कर्ष
[2] वही

सारणी 6.4

निर्वाचन प्रक्रिया के विषय में भिज्ञता

प्रश्न	1995	2000	2005
नामांकन पत्र कैसे भरा जाता है जानती हैं ?	9.90	11.32	15.00
महिला आरक्षण के विषय में जानती हैं ?	31.89	50.00	46.46
आपने चुनाव प्रचार में भाग लिया ?	52.22	66.32	87.2
कितने मत मिले जानती हैं ?	45.6	51.3	88.0
अपने विजय के अन्तर को जानती हैं ?	46.0	53.0	90.3

तालिका से स्पष्ट है कि 1995 के लिये चुनी गई महिला प्रधानों में से केवल 9.90 प्रतिशत ही नामांकन प्रपत्र भरना जानती थी । 2000 में चुनी गई महिला प्रधानों में 11.32 व 2005 में चुनी गई महिला प्रधानों में से 15.00 प्रतिशत नामांकन पत्र भरना जानती हैं। 1995 में 31.89 को महिला आरक्षण के विषय में ज्ञान था जो 2000 व 2005 में क्रमशः 50.00 व 46.46 प्रतिशत हो जाता है। निश्चय ही यह इस बात का संकेतक है कि पंचायत राजनीति में धीरे-धीरे महिलाओं की जागरूकता में वृद्धि हो रही है।

यही स्थिति स्वंय चुनाव अभियान में भाग लेने की है। प्रत्याशी को स्वयं चुनाव अभियान का नेतृत्व करते हुए चुनाव प्रचार में हिस्सा लेना चाहिय किन्तु 1995 के चुनाव में विजयी केवल 52.22 प्रतिशत महिलाओं ने अपने चुनाव अभियान का संचालन किया जबकि 2000 व 2005 में विजयी महिला प्रधानों में से क्रमशः 66.32 व 87.2 प्रतिशत ने अपने चुनाव अभियान में हिस्सा लिया। इस प्रकार स्वयं चुनाव प्रचार करने वाली महिला प्रत्याशियों की संख्या चुनाव दर चुनाव बढी अवश्य है किन्तु यह अनिवार्य शत प्रतिशत से अभी दूर है। विजयी प्रधान को कितने मत मिले यह पूछे जाने पर 1995 के 45.6 प्रतिशत, 2000 के 51.3 व 2005 के 88 प्रतिशत प्रधानों ने इस विषय की जानकारी होना स्वीकार किया। इसी प्रकार उनके निकटतम प्रतिद्वन्दी से उनकी जीत का अन्तर कितना था ? यह 1995 के 46 प्रतिशत , 2000 के 53 प्रतिशत व 2005 के 90.3 प्रतिशत प्रधानों को ही ज्ञात है। अध्ययन से स्पष्ट है कि निर्वाचित महिला प्रधानों की बड़ी संख्या को निर्वाचन प्रक्रिया का सम्यक ज्ञान नहीं है।

3. सूचना एवं जानकारी का अभाव :-

सूचना और ज्ञान किसी भी पदाधिकारी के कार्यो को पूर्ण क्षमता से सम्पादित करने के लिये एक आवश्यक कारक है। ग्राम प्रधान को नई पंचायत व्यवस्था के अन्तर्गत व्यापक अधिकार और कार्य सम्पादन का दायित्व प्रदान किया गया है। इसके लिये आवश्यक है कि उसे अपने दायित्व से सम्बन्धित विषयों, नियमों व कार्यो की पूरी-पूरी जानकारी हो। जानकारी के अभाव में वे अपने कार्य सम्पादन में विफल रहेंगी अथवा अन्य व्यक्तियों पर निर्भर होंगी। पंचायत व्यवस्था के विषय में सरकार द्वारा पर्याप्त सूचना पुस्तिकाओं के माध्यम से प्रकाशित है जो इस संरंचना के हर पहलू पर व्यापक प्रकाश डालते हैं, किन्तु ये सूचनायें बड़ी संख्या में अशिक्षित अथवा कम शिक्षित महिला प्रधानों की समझ से परे हैं। अतः जानकारी सूचना व ज्ञान का अभाव जिसका प्रमुख कारण अशिक्षा है, महिला प्रधानों के कार्य व्यवहार में एक महत्वपूर्ण बाधा है। यह स्थिति उन्हें अपने कार्य निर्वाह के सम्बन्ध में पर निर्भर बना देती है। यही कारण है कि 95 प्रतिशत महिला प्रधानों ने उनके लिये पंचायत व्यवस्था के सम्बन्ध में प्रशिक्षण की आवश्यकता पर बल दिया है।

4. सम्प्रेषण क्षमता का अभाव :-

बेहतर सम्प्रेषण कुशल नेतृत्व की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता होती है। सम्प्रेषण सूचना व ज्ञान आधारित होता है। जैसा कि पहले स्पष्ट किया जा चुका है, अशिक्षा या कम शिक्षा के कारण निर्वाचित महिला प्रधानों को पंचायत प्रावधानों के विषय में बहुत कम ज्ञान होता है। अशिक्षित होने के कारण वे अपनी बात बहुधा दूसरों को समझा नहीं पाती। यह स्थिति भी उनकी कार्यक्षमता को प्रभावित करती है। महिला प्रधानों को न केवल अपने ग्राम पंचायत व ग्राम सभा की बैठकों में अपनी बात रखनी होती है बल्कि अधिकारियों को भी विभिन्न कार्यो के सम्बन्ध में अपनी बात समझानी होती है। किन्तु अशिक्षा, संकोच, लज्जा व पारिवारिक नियंत्रण उनके इस कार्य में बाधक बनता है।

व्यक्तिगत, पारिवारिक व सामाजिक कारक :-

वैदिक काल को छोड़ भारत के सामाजिक इतिहास में नारी सदियों से दासता का दंश झेलती आई है। कुछ एक अपवादों को छोड़ सामान्य रूप से स्त्री को भोग्या मानते हुए घर की चारदीवारी के भीतर घरेलू कामकाज तक सीमित रखा गया । 20वीं सदी में समय के साथ पूरे विश्व के राजनीतिक सामाजिक ताने बाने में उथल-पुथल दिखाई दी। पश्चिम के प्रभाव से सम्पूर्ण भारत में भी नारीवादी आन्दोलन प्रारम्भ हुए । स्वतंत्रता के बाद महिलाओं को भारतीय संविधान ने पुरूषों के समान संवैधानिक अधिकार प्रदान किया। अनेक विधि विधानों द्वारा महिलाओं के प्रति भेदजनक स्थितियों को दूर करने का प्रयास किया गया। इसके सुखद परिणाम भी प्राप्त हुए। स्त्रियों की दशा में क्रमिक परिवर्तन प्रारम्भ हुआ। किन्तु यह परिवर्तन जितना प्रभावी शहरी क्षेत्रों में दिखा उतना ग्रामीण क्षेत्रों में नहीं। ऐसे में 73वें संविधान संशोधन के आधार पर मिले एक तिहाई आरक्षण के द्वारा अचानक जब इन ग्रामीण महिलाओं को पंचायत संस्थाओं के सदस्य के प्रमुख के रूप में कार्य करने का दायित्व मिला तो इनके समक्ष विभिन्न प्रकार की चुनौतियों व कठिनाइयों का उभरना स्वाभाविक ही था। विशेष रूप से ग्राम प्रधान के रूप में जहां दबंग पुरूषों का दबदबा रहा वहां एक स्त्री का आसीन होना अपने आप में एक युगान्तारी घटना थी और इस स्थिति के सम्बन्ध में समाज आज भी सहज नहीं है जबकि इस व्यवस्था को लागू हुए अब लगभग 18 वर्ष बीत चुके हैं। इस संदर्भ में महिलायें जिन चुनौतियों का सामना कर रही है उनमें से कुछ नितान्त व्यक्तिगत हैं कुछ सामान्य रूप से पारिवारिक है और कुछ सामाजिक रूढ़ियों पर आधारित है। इस प्रकार की प्रमुख कठिनाइयां जो महिलाओं के ग्राम प्रधान के रूप में कार्य व्यवहार को प्रभावित कर रही है निम्न हैं :-

1. पुरूष प्रधान मानसिकता - लिंग भेद :-

प्रस्तुत अध्ययन में अध्येता के पर्यवेक्षण एवं निर्वाचित महिला प्रधानों के अनुभव से यह पूर्णतया स्पष्ट है कि गांव व यहां तक कि उनके परिवार के पुरूष सदस्यों द्वारा उनकी

क्षमता को कभी भी स्वीकार नहीं किया गया। निर्वाचित होने के बाद ग्राम प्रधान के रूप में उन्हें विविध कार्य करने होते हैं । बैठकों में भाग लेना होता है, प्रशिक्षण कार्यक्रमों में सम्मिलित होना होता है, अधिकारियों के साथ बैठकें करनी होती हैं, ग्रामवासियों की समस्याओं को सुनना व उनका निस्तारण करना होता है। किन्तु अब तक के अनुभव यह स्पष्ट संकेत करते हैं कि निर्वाचित महिला प्रधान के परिवार के पुरूष चाहे वे पति, पिता या पुत्र हो, उनके पद की आड़ में स्वयं वह कार्य करते नजर आते हैं। महिलायें यह बात स्वीकार करती है कि पर्याप्त प्रशिक्षण के बाद वे अपने दायित्व का पूर्ण निर्वाह कर सकती हैं, किन्तु परिवार के पुरूष सदस्यों का मानना है कि वे ऐसा नहीं कर सकती।[1] इस प्रकार निर्वाचित महिला प्रधानों के समक्ष, तब और समस्या उत्पन्न हो जाती है जब पंचायत की बैठकों में उनके परिवार के सदस्य हस्तक्षेप करते हैं।

इतना ही नहीं चुनाव में नामांकन प्रपत्र भरने से लेकर शपथ ग्रहण तक परिवार के पुरूषों का हस्तक्षेप रहता है। पुरूष यह मानकर चलते हैं कि उनके परिवार की निर्वाचित महिला प्रधान अपनी योग्यता अथवा अपने बलबूते पर चुनाव नहीं जीती हैं बल्कि उनके नाम सम्मान व योग्यता के कारण उसे मत प्राप्त हुए हैं। यह मानसिकता निश्चय ही निर्वाचित महिला प्रधानों को दबा कर रखती है । जब तक पुरूष की यह सोच रहेगी तब तक उनका दृष्टिकोण नहीं बदलेगा और महिलायें अपनी क्षमता से स्वयं कार्य नहीं कर पायेगी।

वास्तव में स्त्रियों के अधीनता का प्रारम्भिक क्षेत्र परिवार है जहां पुरूष प्रधान मूल्य, थोपे जाते हैं और महिलाओं पर पुरूष के नियंत्रण को शायद ही कभी चुनौती दी गई हो। महिला को परिवार में एक जिम्मेदारी के रूप में देखा जाता है जिसके कारण महिला के जीवन के हर क्षेत्र में लिंग आधारित भेद प्रभावी रहता है। यह तथ्य परिवार में महिलाओं के प्रति होने वाली हिंसा के अनुपात से भी पुष्ट होता है। कन्या भ्रूण हत्या, नवजात कन्या हत्या, बच्चियों का कुपोषण, लड़कियों का स्कूल छोड़ना, दहेज उत्पीड़न आदि इसके प्रमुख उदाहरण हैं।

वस्तुतः सार्वजनिक क्षेत्र में प्रभावी भूमिका निभाने के लिये परिवार से मिलने वाला समर्थन तभी मिल पाता है जब महिला पदाधिकारी पर परिवार के पुरूष का पूर्ण नियंत्रण

---

[1] स्वयं के पर्यवेक्षण पर आधारित

हो। यह समर्थन निर्वाचित होने तक अलग प्रकार का होता है और निर्वाचित हो जाने के बाद पुरूषों का प्रयास यह होता है कि वे महिला पदाधिकारी के दिन-प्रतिदिन के कार्यो के सम्बन्ध में उन पर निर्भर रहे और उनके नियंत्रण में कार्य करें । दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि निर्वाचित प्रधान मात्र नाम की प्रधान रह जाती है और परिवार का प्रमुख उसकी सहायता के नाम पर उसके कार्यो को स्वयं सम्पादित करने का प्रयास करता है। इस प्रकार आधे से अधिक, 52 प्रतिशत महिला प्रधानों का यह मानना है कि उन्हें उनके दायित्व निर्वाह के सन्दर्भ में परिवार से विशेष रूप से पुरूषों से जो समर्थन मिलता है वह समर्थन कम नियंत्रण अधिक होता है। प्रस्तुत अध्ययन से ज्ञात हुआ कि केवल 32 प्रतिशत महिला प्रधानों को परिवार से उनके कार्य के सम्बन्ध में पूर्ण समर्थन मिलता है। 16 प्रतिशत को पारिवारिक प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है।[1]

महिलाओं को इस पुरूष मानसिकता का सामना परिवार के बाहर के पुरूषों से भी करना पड़ता है। गांव के परम्परागत सोच के लोग महिला प्रधान को सहज ढंग से स्वीकार नहीं करते। कम या अधिक महिला प्रधानों के प्रति यही दृष्टिकोंण सरकारी अधिकारियों का भी होता है। निर्वाचित महिला प्रधानों के साथ अन्तःक्रिया के संदर्भ में नौकरशाहों और सरकारी कर्मचारियों में संवेदनशीलता का अभाव पाया जाता है। महिला प्रधानों को अनेकोबार उनके प्रतिरोध और भेदजनक व्यवहार का सामना करना पड़ता है। यह उनके राजनीतिक प्रतिनिधि के रूप में कार्य करने के मार्ग में एक बहुत बडी बाधा है।

2. तिहरी भूमिका - कार्यवृद्धि :-

जिस क्षण कोई महिला ग्राम प्रधान अथवा अन्य किसी पद के लिये नामांकन दाखिल करती है और निर्वाचित हो जाती है, उसके कार्यभार में वृद्धि हो जाती है । किसी भी महिला प्रधान ने यह नहीं कहा कि सार्वजनिक क्षेत्र में उनके कार्य के कारण घरेलू कामकाज का

---

[1] साक्षात्कार अनुसूची से किये गये साक्षात्कार के आधार पर प्राप्त

बोझ घटा है। ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकतर ग्राम प्रधान संयुक्त परिवारों से हैं और उनके दैनिक घरेलू कार्य कम नहीं हो पाते। अधिकांश महिला प्रधानों ने यह स्वीकार किया कि घर की समस्याओं को सावधानीपूर्वक न सुलझा पाने पर उनके लिये बड़ी कठिनाइयां उत्पन्न हो जाती हैं। ग्राम प्रधान निर्वाचित हो जाने के बाद महिलाओं को प्रधान के राजनीतिक और प्रशासनिक दायित्व का भी निर्वाह करना होता है। अधिकांश अनुसूचित जाति और पिछड़े वर्ग तथा कुछ सामान्य वर्ग की महिलायें आर्थिक उपार्जन के लिये मजदूरी के कार्य करती हैं। इस प्रकार धन कमाना, घर चलाना व गांव के पंचायत की देखरेख करना तीन प्रकार के कार्यो का बोझ महिलाओं पर आ जाता है। इससे निश्चय ही उनकी राजनीतिक प्रशासनिक कार्यक्षमता प्रभावित होती है। प्रस्तुत अध्ययन में साक्षात्कार अनुसूची से किये गये । सर्वेक्षण में 78.8 प्रतिशत महिलाओं ने यह स्वीकार किया कि उनके पारिवारिक दायित्व का प्रभाव ग्राम प्रधान के रूप में उनकी कार्यक्षमता पर पड़ता है। 13.3 प्रतिशत ने इस सम्बन्ध में नहीं में उत्तर दिया और शेष 7.9 प्रतिशत अनिश्चय की स्थिति में थी।

3. पुरूषों के साथ परस्पर कार्य (Interaction) में कठिनाई

पर्दा, घूंघट और घर की चारदीवारी महिलाओं विशेष रूप से ग्रामीण महिलाओं के साथ अभिन्न रूप से जुड़े रहे हैं जिस कारण खुले तौर पर पुरूषों से वार्ता व उनके साथ काम का अनुभव इन्हें नहीं रहा है। ग्राम प्रधान के रूप में चुन लिये जाने पर महिलाओं को पुरूष अधिकारियों व गाँव के पुरूष पंचायत सदस्यों तथा अन्य व्यक्तियों के साथ कार्य करना होता है। अब तक इस स्थिति से दूर रही महिलायें पुरूषों के साथ परस्पर कार्य में संकोच व झिझक का अनुभव करती हैं। 72.2 प्रतिशत महिलाओं ने इस प्रकार की सुविधा की बात स्वीकार की । 27.8 प्रतिशत महिला प्रधानों को पुरूषों के साथ परस्पर कार्य करने में किसी प्रकार की असुविध नहीं होती ।[1]

---

[1] वही

वास्तव में ग्रामीण महिलाओं को परिवार के बाहर पुरूषों के साथ, मुद्दों और समस्याओं पर विचार विमर्श का अनुभव नहीं होता है। किन्तु जब नेतृत्व उनके हाथ में आ जाता है तब उन्हें पूरे समुदाय के स्त्री और पुरूष सबके साथ काम करना पड़ता है। ग्रामीण परिवेश में सामाजिक रिश्ते चाचा, ताऊ, श्वसुर, ज्येष्ठ, परिवार और परिवार के बाहर भी प्रभावी रहते हैं। ऐसे में एक महिला प्रधान के लिये घूंघट से बाहर निकल सभी व्यक्तियों के साथ स्वतंत्र सम्पर्क सम्भव नहीं हो पाता । यही कारण है, रूढ़िगत अभ्यास उन्हें सार्वजनिक कार्यो में पुरूषों के साथ स्वतंत्र परस्पर क्रिया से रोकता है।

4. जातिवाद :-

ऐतिहासिक रूप से उच्च जातियां ग्राम पंचायत की राजनीति में प्रभावी रही है। यदि यह कहा जाय कि ग्रामीण शक्ति संरचना में उच्च जातियों (ब्राह्मण और क्षत्रिय) के पास ही ग्राम के शक्ति संसाधनों का केन्द्रीकरण रहा है तो अतिश्योक्ति न होगी। स्वतंत्रता के बाद बलवन्त राय मेहता समिति की सिफारिशों के आधार पर लागू पंचायत व्यवस्था में पंचायत संस्था के प्रत्येक स्तर पर इन जातियों का दबदबा रहा। किन्तु 1993 में पारित 73वें संविधान संशोधन के बाद से लागू नई पंचायत व्यवस्था में यह वर्चस्व प्राथमिक रूप से टूटा। इसमें न केवल अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति व पिछडे वर्ग के लोगों को उनके आबादी के अनुपात में क्रमशः 21, 2 व 27 प्रतिशत आरक्षण किया गया बल्कि महिलाओं को भी एक तिहाई आरक्षण प्रदान किया गया। यह एक तिहाई आरक्षण प्रत्येक वर्ग की महिलाओं के लिए था - सामान्य, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति तथा पिछड़ा वर्ग। ऐसे में परम्परागत रूप से पंचायत संस्थाओं पर वर्चस्व रखने वाले उच्च वर्ग के लिये पहले किसी महिला को ग्राम प्रधान के रूप में स्वीकार करना भारी पड़ा, उस पर अगर वह महिला पिछड़े वर्ग अथवा अनुसूचित जाति की है तो यह उनके परम्परागत जातीय वर्चस्व व अहं के लिये एक बड़ी चुनौती थी। परिणामस्वरूप आरक्षण के बावजूद यह जाति संरचना महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता एवं ग्राम प्रधान के रूप में कार्यकरण के समक्ष सबसे बड़ी बाधा है।

यही बाधा सर्वाधिक रूप से अनुसूचित जाति के महिला प्रधानों के लिये परेशानी का कारण बनती है। निर्धनता, दैनिक मजदूरी पर निर्भरता व उच्च जातियों के साथ-साथ पिछड़ी जातियों में भी सामान्य स्वीकार्यता न होने के कारण इन्हें अपने राजनीतिक कार्यो के लिये पर्याप्त समय व समाज से पर्याप्त समर्थन नहीं मिल पाता है। यही कारण है कि 1995 से 2005 तक हुए तीन पंचायत चुनावों में हमीरपुर जनपद में अनुसूचित जाति की कोई महिला अनारक्षित सीट से ग्राम प्रधान नहीं बन सकी है। 2000 व 2005 के चुनावों में कुछ महिलाओं ने अपने वर्ग के पुरूषों के लिये आरक्षित सीट पर अवश्य कब्जा किया है किन्तु अनारक्षित सीटों पर वे नहीं चुनी जा सकी है।

इसके विपरीत पिछड़ी जाति की महिलाओं की स्थिति बेहतर है, वे अपने लिये आरक्षित स्थानों के साथ-साथ सामान्य वर्ग के लिये अनारक्षित स्थानों पर भी ग्राम प्रधान बनने में सफल रही हैं। हमीरपुर में 1995 में 41 के स्थान पर 52, 2000 में 41 के स्थान पर 53 व 2005 में 49 के स्थान पर 124 पिछड़ी जाति की महिलायें ग्राम प्रधान बनने में सफल रही हैं। उनकी इस सफलता के पीछे अलग-अलग गांवों की जाति संरचना और जाति विशेष का संख्या बल प्रभावी रहा है। स्पष्ट रूप से पिछड़े वर्ग की राजनीतिक गतिशीलता में वृद्धि हुई है और जाति आधारित शक्ति संरचना में उन्होंने अन्य वर्गो को स्पष्ट रूप से शिकस्त दी है।

इस प्रकार पंचायत प्रधान के रूप में जातीय आधार पर दलित महिलाओं को सर्वाधिक परेशानी का सामना करना पड़ता है। 83.7 प्रतिशत दलित महिला प्रधानों ने इस तथ्य को स्वीकार किया कि उच्च जाति के दबंग नेताओं के कारण प्रायः उनके कार्य व्यवहार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।[1] कई स्थानों पर यह भी देखा गया कि जहां अनुसूचित जाति की महिला ग्राम प्रधान है वहां सुनियोजित रूप से उप प्रधान सवर्ण या पिछड़ी जाति के पुरूष को चुन लिया जाता है और यथार्थ में पंचायत प्रधान के कार्यो का संचालन उप प्रधान के द्वारा किया जाने लगता है।

---

[1] वही

इस प्रकार अनुसूचित जाति के महिला प्रधानों को तिहरे भेदभाव का सामना करना पड़ता है - जाति, वर्ग और लिंग जो न केवल उनके कार्य व्यवहार को प्रभावित करता है बल्कि उनके नेतृत्व क्षमता की संभावनाओं को भी दमित करने का कार्य करता है। इस प्रकार व्यक्तिगत स्तर पर महिला को भेद और अधीनता की स्थिति का सामना करना पड़ता है। संयुक्त रूप से ये कारक विभिन्न वर्गों की महिलाओं के नेतृत्व और राजनीतिक सहभागिता की संभावनाओं पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। जाति और वर्ग की यह अवधारणा सरकार के उन उददे्श्यों और प्रयासों को निष्प्रभावी बना देती है जो 33 प्रतिशत आरक्षण के माध्यम से प्राप्त किया जाना है।

5. जातीय पंचायत :-

हमीरपुर जनपद उत्तर प्रदेश के पिछड़े हुए क्षेत्र बुन्देलखण्ड में स्थित है, जहां ग्रामीण स्तर पर परम्परागत रूप से विभिन्न जातियों की जाति पंचायतें दशकों पूर्व से अस्तित्व में है। जाति पंचायतें निर्वाचित पंचायत व्यवस्था के पूर्व से चली आ रही हैं । जाति पंचायत का नेतृत्व प्रायः जाति विशेष के प्रभावशाली पुरूषों के हाथ में होता है। ये पुरूष प्रधान, सामन्ती और पैतृक होते हैं। यद्यपि इन पंचायतों को वैधानिक मान्यता प्राप्त नहीं है फिर भी ये निरन्तर बनी हुई हैं और गांवों में जाति विशेष के लोगों के ऊपर शक्ति और प्रभाव का उपयोग करती है। इस प्रकार की जाति पंचायतें महिला प्रधानों के कार्य में सीधा हस्तक्षेप करती हैं और महिला राजनीतिक सहभागिता को अवरोधित करती हैं। जातीय पंचायत के नेताओं की अपेक्षा रहती है कि उनके जाति के निर्वाचित महिला प्रधान उनके परामर्शानुसार कार्य करें। ऐसे में निर्वाचित महिला प्रधान जब जाति संरचना को नजरअन्दाज करते हुए निष्पक्ष रूप से कार्य करना चाहती है तो इस प्रकार के जाति आधारित मठाधीश उसके कार्य को प्रभावित करने का प्रयास करते हैं और उसे पुनः जातीय आधार पर सोचने को विवश करते हैं।

6. चरित्र हनन :-

परम्परागत सामाजिक मूल्य महिलाओं को घर तक सीमित रखते हैं। यही मूल्य स्त्रियों के पर पुरूषों के साथ परस्पर कार्य करने, वार्ता करने आदि पर भी प्रतिबन्ध आरोपित करते हैं। यह स्थिति ग्रामीण समाज में आज भी प्रभावी है। ऐसे में 33 प्रतिशत आरक्षण के बाद बडी संख्या में निर्वाचित महिला प्रधानों के लिये समाज से उभरने वाले चारित्रिक लांक्षनो से बचाव करते हुए अपना कार्य निष्पादित करना एक बड़ी समस्या है। इससे बचने के लिये प्रायः महिलायें ग्राम प्रधान के दायित्वों का निर्वाह करते समय जहां कही भी पर पुरूषों से सम्पर्क में आती है, अपने परिवार के पुरूष, पति/ पुत्र अथवा पिता को साथ रखती है बल्कि यह कहा जाय तो अधिक उचित होगा कि परिवार के पुरूष उनके सुरक्षा और सहायता की आड़ में स्वतः उनके साथ हो लेते हैं। किन्तु इस स्थिति के विपरीत कोई महिला अगर साहसपूर्वक स्वयं अपने दायित्वों का निर्वाह करती है और खुले तौर पर लोगों से परस्पर सम्पर्क करते हुए अपने कर्तव्य का पालन करती है तो उसे संदेहास्पद दृष्टि से देखा जाने लगता है। स्वतंत्रतापूर्वक कार्य करना, लोगों से मिलना जुलना अपने में एक अयोग्यता बन जाती है। पुरूष तो पुरूष महिलायें भी कभी-कभी उन्हें लांक्षित करने लगती है। इतना ही नहीं यदि वे स्वतंत्रतापूर्वक बिना किसी की मदद के अपना कार्य निष्पादित करती है तो उन्हें यौन व्यंगों छेडछाड़ और यहां तक कि बलात्कार का भी सामना करना पड़ सकता है। यह स्थिति तब और जटिल हो जाती है जब ये प्रधान युवा हों। हमीरपुर जनपद में हुए तीनों पंचायत चुनावों में 21 से 40 वर्ष के बीच की महिलायें अधिक संख्या में ग्राम प्रधान चुनी गई है जिन्हें प्रायः इन स्थितियों का सामना करना पड़ता है।

सारणी 6.5

हमीरपुर में महिला ग्राम प्रधानों की आयु[1]

आयु वर्ग	1995		2000		2005		औसत	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
21 से 30 वर्ष	28	24.13	32	27.11	57	28.78	117	27.08
31 से 40 वर्ष	63	54.31	59	50.00	107	54.04	229	53.00
41 से 50 वर्ष	12	10.34	14	11.86	19	9.59	45	10.41
51 से ऊपर	13	11.20	13	11.01	15	7.57	41	9.49
योग	**116**	**100**	**118**	**100**	**198**	**100**	**432**	**100**

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 27.08 प्रतिशत महिला प्रधान 21 से 30 वर्ष के आयु वर्ग है । 53.00 प्रतिशत 31 से 40 वर्ष के आयु वर्ग की है जिनके चारित्रिक हनन व यौन उत्पीडन की संम्भावनायें सर्वाधिक है। 41 से 50 वर्ष के आयु वर्ग की महिलाओं को भी कम या अधिक इस प्रकार की कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इस प्रकार 21 से 50 वर्ष तक की महिला प्रधानों की पूरी संख्या ली जाय तो यह 391 तक पहुंच जाती है जिसका अर्थ यह है कि 90.50 प्रतिशत महिला प्रधानों को चारित्रिक लांछनों व यौन व्यंगों के बीच काम करना पड़ सकता है। अगर वे स्वतंत्र रूप से काम करती है।

7. गतिशीलता का अभाव :-

सांस्कृतिक मानक महिलाओं की गतिशीलता पर प्रतिबन्ध के साथ-साथ सार्वजनिक क्षेत्र में उनकी सहभागिता के मार्ग में भी बाधा उत्पन्न करते हैं । ये सांस्कृतिक मूल्य सशक्त पारिवारिक जातीय व धार्मिक संस्थाओं द्वारा आरोपित एवं लागू किये जाते हैं। बैठकों व विविधक प्रकार के कार्यो के सम्बन्ध में बिना किसी सुरक्षा के असुविधाजनक समय पर निकालना

---

[1] वही

और कार्य करना महिला प्रधानों के लिये कठिन कार्य होता है। विशेष रूप से ग्रामीण जन अपनी समस्याओं के साथ किसी भी समय उनके समक्ष उपस्थित हो सकते हैं। ऐसे में उनके काम के लिये देर रात अथवा प्रातः जल्दी निकल पाने की स्वीकृति परिवार प्रमुख से नहीं मिलती और स्वीकृति मिल भी जाय तो विभिन्न कारणों से इन स्थितियों में उनका घर से बाहर निकल पाना असुविधाजनक होता है। यह स्थिति उनके कार्य व्यवहार व राजनीतिक सहभागिता की स्थिति को प्रभावित करती है। यातायात व्यवस्था का अभाव, भौतिक व सामाजिक सुरक्षा का अभाव तथा महिलाओं के आने जाने पर प्रतिबन्ध की स्थिति के कारण उनकी राजनीतिक सहभागिता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

मूलतः स्त्रियों को भी दमित दलित श्रेणी में रखा जाता है, चाहे वे किसी भी जाति अथवा धर्म की क्यों न हो, क्योंकि पुरूष प्रधान समाज ने सदियों से उन्हें दबा कर रखा है और उनकी स्वतंत्र इच्छाओं तथा क्षमता को अपने स्वार्थ के वशीभूत हो दमन किया है। पुरातन रूढिग्रस्त सामाजिक मूल्य स्त्री को घर के बाहर सार्वजनिक दायित्व से परे रखते हैं। ऐसे में आरक्षण के बाद बड़ी संख्या में महिलाओं के ग्राम प्रधान बनने पर उनके कार्य निर्वाह के मार्ग में सामाजिक मूल्यों व व्यवस्थाओं द्वारा बाधा उत्पन्न किया जाना स्वाभाविक ही था। जब तक ये बाधयें तिरोहित नहीं हो जाती महिला पदाधिकारी अपेक्षाओं के अनुरूप कार्य नहीं कर सकेंगी। निश्चय ही ये सामाजिक बाधायें एक दिन में दूर नहीं होने वाली। इसके लिये क्रमिक रूप से समाज की मानसिकता में बदलाव लाना होगा तभी महिला सहभागिता के अपेक्षित लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकेगा।

राजनीतिक कारक :-

व्यक्तिगत, पारिवारिक व सामाजिक समस्याओं के साथ-साथ राजनीतिक स्तर पर भी अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, जोकि उनकी कार्यक्षमता व सहभागिता को प्रभावित करता है। इस सम्बन्ध में निम्न कारक उल्लेखनीय हैं :-

1. महिला ग्राम प्रधान अपने ग्राम पंचायत की सर्वेसर्वा होती है किन्तु इन निर्वाचित महिला पदाधिकारियों को प्रायः क्षेत्र के विधायक व सांसद के दबाब व हस्तक्षेप का सामना करना पड़ता है क्योंकि विधायक व सांसद पंचायतों को अपने नियंत्रण क्षेत्र की संस्था समझते हैं। सामान्य रूप से स्थानीय संस्थाओं के प्रशासन में उनके हस्तक्षेप की अपेक्षा नहीं की जाती किन्तु उनकी सोच यह रहती है कि वे जो भी कहेंगे स्थानीय नेतृत्व उसे स्वीकार करेगा ही।

2. यद्यपि अधिकांश महिला प्रधानों की दलीय प्रतिबद्धता उनके प्रति मतदान करने तक सीमित है व केवल 14.58 प्रतिशत महिला प्रधान ही किसी राजनीतिक दल की सदस्य हैं फिर भी विभिन्न राजनीतिक दलों के स्थानीय नेता दलीय आधार पर इन निर्वाचित प्रधानों के कार्य को प्रभावित करने का प्रयास करते हैं जिससे वे स्वतंत्रतापूर्वक अपना कार्य नहीं कर पाती।

3. इन महिला प्रधानों को अपने कार्य के सन्दर्भ में विभिन्न क्षेत्रों में आने वाली समस्याओं से निपटने के लिये महिला नेतृत्व का आधारभूत समर्थन नहीं प्राप्त होता है। इस प्रकार के समर्थन के अभाव में निचले स्तर के महिला नेतृत्व से किसी विस्मयकारी परिवर्तन की अपेक्षा नहीं की जा सकती।

4. राजनीतिक रूप से भीड़ के प्रबन्धन में भी महिलाओं को कठिनाई का सामना करना पड़ता है। वर्ष में कम से कम दो बार ग्रामसभा की बैठकों का आयोजन करना होता है जिसकी अध्यक्षता ग्राम प्रधान करती हैं। सैकड़ों की भीड़ की अध्यक्षता और सम्बोधन के दौरान असमाजिक तत्वों द्वारा न केवल व्यवधान उत्पन्न किया जाता है बल्कि ग्राम प्रधान के प्रति असंसदीय शब्दों का भी प्रयोग करने से ये तत्व नहीं चूकते । इस प्रकार की स्थितियों का सामना महिलायें अपने परिवार के सदस्यों के सहयोग से ही कर पाती हैं। ऐसी स्थिति आने पर अन्य लोगों के विरोध के कारण कभी-कभी टकराव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है जो निश्चय ही अशोभनीय है।

5. निर्वाचित महिला प्रधानों को सरकारी अधिकारियों के नकारात्मक दृष्टिकोण का भी सामना करना पड़ता है।
6. अधिकांश महिला प्रधानों को किसी संगठनात्मक ढॉचे में कार्य का अनुभव नहीं होता। छोटे-छोटे संगठन नेतृत्व के प्रशिक्षक समूह का काम करते हैं। किन्तु अनुभव यह सिद्ध करते हैं कि इस प्रकार के संगठनों से महिलाओं का सम्पर्क प्रायः नहीं होता है। इसके चलते नये पद पर आसीन होने के बाद बिना किसी अनुभव के उन्हें नेतृत्व संचालन करना होता है।
7. यद्यपि स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से महिलायें संगठित होने और नेतृत्व करने के गुण सीख रही हैं, किन्तु यह पुरूष प्रधान औपचारिक राजनीतिक शक्ति संरचना के अन्तर्गत, सहभागिता हेतु पर्याप्त नहीं है।
8. राजनीतिक क्षेत्र में सक्रियता प्रदर्शित करने पर महिला प्रधानों को व्यापक प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है। कभी-कभी उन्हें हिंसा, धमकी अथवा उत्पीड़न का भी शिकार होना पड़ता है।
9. राजनीति में धनबल और बाहुबल के बढ़ते प्रभाव के चलते इस क्षेत्र में महिलाओं की विशेष रूप से ग्रामीण महिलाओं की सहभागिता की संभावनायें क्षीण दिखायी देती है।

आर्थिक कारक :-

आर्थिक रूप से स्वावलम्बी न होना भी महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता की स्थिति और प्रधान के रूप में उनकी कार्यक्षमता को प्रभावित करता है। अधिकांश महिला प्रधानों ने अपना व्यवसाय कृषि, कुछ ने मजदूरी व शेष अन्य व्यवसायों में बताया है। मजदूरी व अन्य व्यवसायों में लगी महिला प्रधान येन केन प्रकारेण अपने परिवार का व्यय वहन करती हैं और उनका अधिकांश समय अपने व्यावसायिक कार्य में ही व्यतीत हो जाता है जिसके चलते प्रधान पद के कार्यो के लिये उनके पास पर्याप्त समय ही नहीं बचता। कृषि को अपना व्यवसाय बताने वाली

महिलाओं को वास्तव में बेरोजगार माना जाना चाहिये क्योंकि कृषि व कृषि उपज पर परिवार के पुरूषों का नियंत्रण होता है। महिलायें मात्र कृषि उपज को साफ व संशोधित करने के कार्य तक ही सीमित हैं। उत्पादन के लाभ पर उनका नियंत्रण नहीं है। निम्न सारणी से महिला प्रधानों की व्यावसायिक स्थिति का मूल्यांकन किया जा सकता है -

सारणी 6.6

हमीरपुर में महिला प्रधानों का व्यवसाय[1]

आयु वर्ग	1995		2000		2005		औसत	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
मजदूरी	04	3.44	03	2.54	13	6.56	20	4.62
कृषि	107	92.24	115	97.45	169	85.35	391	90.50
अन्य	05	4.31	-	-	16	8.08	21	4.86
योग	**116**	**100**	**118**	**100**	**198**	**100**	**432**	**100**

सारणी से स्पष्ट है कि 90.50 प्रतिशत महिला प्रधानों ने अपना व्यवसाय कृषि बताया है। ध्यातव्य है कि इसमें उन महिलाओं की संख्या भी शामिल है जो कृषि मजदूर के रूप में कार्य करती है। जिन 4.62 प्रतिशत महिलाओं ने अपना व्यवसाय मजदूरी बताया है, वे कृषि से इतर मजदूरी की ओर संकेत करती है। 4.86 प्रतिशत अन्य व्यवसाय की ओर संकेत करने वाली महिलायें सिलाई, कढ़ाई, दरी बनाने, साबुन बनाने, अगरबत्ती, मोमबत्ती बनाने, भैस पालन, बकरी पालन आदि का कार्य करती है। कृषि को अपना व्यवसाय बताने वाली अधिकांश महिलायें विशुद्ध रूप से गृहणी है और कृषि आय का हिस्सा उन्हें प्रायः नहीं मिलता ।

इस प्रकार आर्थिक परनिर्भरता महिलाओं के राजनीतिक स्वावलम्बन व सहभागिता के मार्ग में एक बड़ी बाधा है। परिवार के पुरूष सदस्यों पर आर्थिक निर्भरता उनके सहभागिता को सीमित करता है।

---

[1] वही

सांस्कृतिक कारक :-

सदियों पुराने परम्परागत सांस्कृतिक मूल्य समाज में पुरूषों को प्राथमिकता प्रदान करते हैं और सभी आयु वर्ग जाति और धर्म की महिलाओं के प्रतिभेदभाव की नीति पर आधारित हैं। परिणामस्वरूप पुरूष विशेष सुविधाओं का उपभोग करते हैं और उनकी यह विशेष स्थिति आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षिक प्रत्येक क्षेत्र में दिखाई देती है। पुरूष प्रधान समाज के मानक महिलाओं को निजी सम्पत्ति के रूप में सीमित कर देते हैं जहां लड़की को आर्थिक दायित्व के रूप में देखा जाता है और उसकी स्वतंत्र विकास तथा गतिशीलता को प्रतिबन्धित कर दिया जाता है। परम्परागत सामाजिक मूल्य सार्वजनिक कार्य पुरूषों के लिये और घरेलू कार्य महिलाओं के लिये निर्धारित करते हैं।

सामान्य रूप से महिलाओं से खामोश रहने की अपेक्षा की जाती है। अपनी आवाज बुलन्द करने वाली महिलाओं की आवाज या तो दबा दी जाती है या वह सामाजिक हिंसा अथवा उत्पीड़न का शिकार होती है। ऐसे सामाजिक सांस्कृतिक मूल्यों के बीच महिलाओं से स्वतः अचानक सार्वजनिक पदों के अनुरूप क्रियाशील होने की अपेक्षा नहीं की जा सकती। समय के साथ जब सांस्कृतिक मूल्यों में महिलायें स्वयं बदलाव का कारण बनेगी तब वे जिस किसी भी पद पर निर्वाचित होंगी उसके अनुरूप क्रियाशील भी होंगी।

अध्याय–7

पंचायतों में महिला सहभागिता के सकारात्मक पक्ष

- ➔ सामाजिक क्षेत्र
- ➔ राजनीतिक क्षेत्र
- ➔ आर्थिक क्षेत्र
- ➔ सांस्कृतिक क्षेत्र

पंचायतों में महिला सहभागिता के सकारात्मक पक्ष

स्वतंत्रता के पश्चात देश की राजनीतिक प्रक्रिया में महिलाओं के सहभागिता की गति मन्द रही है। यद्यपि क्रमिक रूप से इसमें वृद्धि हो रही है किन्तु अपेक्षित लक्ष्य के अनुरूप नहीं है। राजनीतिक प्रक्रिया पर आज भी उनका प्रभाव बहुत अधिक नहीं है। महिलाओं की स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने के लिये आज आवश्यकता इस बात की है कि उन्हें प्रदत्त संवैधानिक अधिकारों को एक सशक्त साधन के रूप में प्रयुक्त किया जाय। महिलाओं से संबंधित राष्ट्रीय समिति की रिपोर्ट में कहा गया है कि "संख्या की दृष्टि से महिलायें अल्पसंख्यक नहीं मानी जा सकती, परन्तु स्थिति व राजनीतिक शक्ति में असमानता के कारण उनमें अल्पसंख्यकों के लक्षण बढ़ते जा रहे हैं। जहां तक स्त्रियों के अधिकारों का प्रश्न है, संविधान द्वारा घोषित नई सामाजिक व्यवस्था के मूल्यों और समकालीन भारतीय समाज की वास्तविकताओं के मध्य जो खाई है, वह आज भी उतनी ही गहरी और चौड़ी है जितनी की स्वतंत्रता प्राप्ति के समय थी।"[1] गांधी जी का मत था कि "राजनीतिक अधिकारों को साध्य नहीं बल्कि एक बड़े लक्ष्य की पूर्ति का साधन माना जाना चाहिये किन्तु गांधी जी के इस संदेश को भूलते हुए राजनेता व राजनीतिक दल राजनीतिक शक्ति व अधिकारों को ही साध्य मान बैठे हैं। यही कारण है कि प्रायः राजनेता इस साध्य का बटवारा महिलाओं के साथ नहीं करना चाहते हैं और इसी कारण राजनीतिक शक्ति संरचना में महिलाओं को समान दर्जा देने की चर्चा होती है, तो प्रायः तत्काल ही इस विचार का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष विरोध शुरू हो जाता है।"[2] यही कारण है कि आज तक महिलायें राजनीतिक प्रक्रिया में एक समान सहयोगी की भूमिका निभाने में विफल रही हैं।

वास्तव में विकेन्द्रीकरण जनसहभागिता और लोकतंत्र एक दूसरे के पूरक राजनीतिक मूल्य हैं। लोकतंत्र आज का सर्वाधिक सशक्त और वांछित राजनीतिक मूल्य है जो अपनी सफलता के लिये अधिक से अधिक जन सहभागिता की मांग करती है और इसके लिये

---

[1] पाठक, इन्दू, राजनीतिक सहभागिता एवं महिला सशक्तिकरण , कुरूक्षेत्र, मार्च 2007 प्र0 28

[2] वही पृ0 29

सत्ता, शक्ति और निर्णय अधिकारों का विकेन्द्रीकरण करना अनिवार्य हो जाता है। किसी भी देशकाल में स्थानीय शासन की इकाइयां इन अपरिहार्य अनिवार्यताओं को पूर्ण करती हैं। भारत में सशक्त पंचायत व्यवस्था इन आदर्शों के संस्थापन संरक्षण का कार्य कर रही है। 73वें संविधान संशोधन पर आधारित उ.प्र. पंचायती विधि (संशोधन) अधिनियम 1994 द्वारा जिस नवीन पंचायत संरचना की स्थापना की गई है उसमें ग्रामीण प्रशासन में अब तक केवल समूह की भूमिका निभाने वाले निर्बल वर्ग के लोगों को सक्रिय रूप से सहभागी बनाते हुए उन्हें निर्णय प्रक्रिया का हिस्सा बनाया गया है। आरक्षण की यह व्यवस्था न केवल सामाजिक, राजनीतिक निर्णयों से अलग-अलग अनुसूचित जाति/ जनजाति व पिछड़े वर्ग के लोगों को बल्कि समाज की आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करने वाली महिलाओं को भी राजनीतिक निर्णय प्रक्रिया में सहभागी बनाते हुए उन्हें राजनीतिक प्रक्रिया में उलझाने का कार्य कर रहा है, जिससे उनकी राजनीतिक सहभागिता में यथोचित वृद्धि की अपेक्षा की जा रही है।

प्रत्येक काल में दो तरह की सत्ता विद्यमान रही है - एक राजसत्ता तथा दूसरी लोकसत्ता । राजसत्ता केन्द्रीकरण की ओर उन्मुख करती है जबकि लोकसत्ता विकेन्द्रीकरण की मांग दोहराती रही है। पंचायतें सदैव ही लोकशक्ति के साथ-साथ सामाजिक तथा आर्थिक विकास का आधार रही हैं । वस्तुतः केन्द्रीकृत व्यवस्था में काम का बोझ अधिक हो जाने से केन्द्रीय सत्ता विभिन्न क्षेत्रों के सम्बन्ध में अपने दायित्वों का निर्वाह नहीं कर पाती। साथ ही इस प्रवृत्ति से शासन में लोगों की भागीदारी का स्तर सीमित रहता है। इससे समूची व्यवस्था के बीमार और क्रियाहीन हो जाने का खतरा बढ़ जाता है। इसलिये 73वें संविधान संशोधन द्वारा ग्राम पंचायतों को संवैधानिक दर्जा व व्यापक अधिकार दिये जाने से एक नई विकेन्द्रित व्यवस्था की स्थापना हुई है जिससे जनता को अपनी समस्याओं को अपने स्तर पर समाधान का अवसर प्राप्त हुआ है। समाज के निर्बल वर्गो (अनुसूचित जाति/ जनजाति, पिछडा र्व व महिलाओं) के आरक्षण की व्यवस्था ने समाज के प्रत्येक वर्ग व व्यक्ति को पंचायत राजनीति में धकेलने का प्रयास किया है। अपेक्षा यह है कि इससे राजनीति में जन सहभागिता का स्तर बढ़ेगा ।

महिलाओं की राजनीति में सहभागिता वृद्धि से ही उनका सशक्तिकरण संभव है और इसके लिये आवश्यक है कि उन नीतियों और योजनाओं के निर्माण में वे स्वयं सहभागी हो जो महिलाओं से सम्बन्धित हैं। यह तभी संभव है जब स्वयं वे भी उस राजनीतिक व्यवस्था का अंग हो जो नीति निर्माण व क्रियान्वयन के लिये जिम्मेदार है। राजनीतिक शक्ति संरचना व निर्णय प्रक्रिया में भागीदारी से ही महिलायें समानता के अपने अधिकार को प्राप्त करने के साथ-साथ सशक्तिकरण की दिशा में बढ़ेंगी। निश्चय ही 73वें संविधान संशोधन द्वारा निर्धारित नवीन पंचायत व्यवस्था इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम है।

यह सही है कि नई पंचायत व्यवस्था के लागू होने के 18 वर्षो बाद भी महिला आरक्षण से महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन की जो अपेक्षायें की गई थी वे अभी लक्ष्य से कोसों दूर है, किन्तु इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि 1995 से 2005 तक के तीन चुनावों में चुने गये महिला प्रधानों की सोच व कार्यशैली में क्रमिक परिवर्तन आया है।

वास्तव में समाज के हर वर्ग (सामान्य, अनु.जाति/ जनजाति व पिछड़े वर्ग की महिलाओं) को 1/ 3 आरक्षण प्रदान कर पंचायत व्यवस्था को सभी वर्गो तक ले जाने का प्रयास किया गया हैं । दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि पंचायत निर्णय में ग्राम के सभी वर्गों को सहभागी बनाने का प्रयास किया गया है। यह व्यवस्था निम्न अवधारणाओं पर कार्य कर रही है -

1. स्थानीय समस्याओं का स्थानीय स्तर पर समाधान कर उनका निदान सरलता से समयानुसार किया जा सकेगा।
2. विकास कार्यो की प्राथमिकता स्थानीय स्तर पर निश्चित की जा सकेगी।
3. विकास कार्य ऊपर से थोपे नहीं जायेगें बल्कि उनका निर्धारण स्थानीय स्तर पर आवश्यकतानुसार किया जायेगा।
4. स्थानीय स्तर पर निरीक्षण, पर्यवेक्षण से कार्यो व सेवाओं की गुणवत्ता में सुधार आयेगा।
5. स्थानीय स्तर पर निर्णय से कार्य तेजी से हो सकेगें।

6. विकास के लिये उपलब्ध धनराशि का उपयोग स्थानीय स्तर पर स्थानीय पर्यवेक्षण में होगा, अतः भ्रष्टाचार पर अंकुश लगेगा।
7. लाल फीताशाही और नौकरशाही के चंगुल से ग्रामीण विकास मुक्त होगा।
8. निर्बल वर्गों (अनुसूचित जाति/ जनजाति, पिछड़ा वर्ग व विशेष रूप से महिलायें) अपने वर्ग से सम्बन्धित मामलों का निस्तारण अधिक सक्रियता से कर सकेंगी।

इस संदर्भ में महिलाओं को ग्राम प्रधान के रूप में जिन महत्वपूर्ण विषयों पर निर्णय लेते हुए अपनी क्षमता का प्रदर्शन करना है वे निम्न हैं -

1. शिक्षा ।
2. पेयजल एवं सिंचाई ।
3. युवा कल्याण के कार्यक्रम ।
4. ग्राम स्तर पर चिकित्सा एवं स्वास्थ्य कल्याण ।
5. महिला एवं बाल कल्याण के कार्यक्रम ।
6. पशुधन विकास से सम्बन्धित कार्यक्रम ।
7. राशन की दुकान का प्रबन्धन ।
8. कृषि विकास से सम्बन्धित कार्य ।
9. ग्रामीण विकास से सम्बन्धित कार्यक्रम ।
10. वृद्धावस्था, विधवा, किसान तथा विकलांग पेंशन स्वीकृत करना व वितरित करना ।
11. ग्राम पंचायत में स्थित राजकीय, प्राथमिक, उच्च्व प्राथमिक व मान्यता प्राप्त अशासकीय प्राथमिक तथा उच्च्व प्राथमिक विद्यालयों के अनुसूचित जाति/ जनजाति, पिछडी जाति तथा अल्पसंख्यक वर्ग के छात्र/ छात्राओं की छात्रवृत्तियों का वितरण ।
12. शिक्षा मित्रों की नियुक्ति ।
13. शिक्षा गारण्टी योजना का क्रियान्वयन ।

ग्राम पंचायतों को केवल उक्त कार्य ही नहीं सौपे गये हैं इनके सफल निर्वहन हेतु अनेक व्यवस्थायें भी की गई हैं ,जैसे -

1. ग्राम पंचायतों को जो कार्य हस्तान्तरित किये गये हैं, उनसे सम्बन्धित ऐसी समस्त परिसम्पत्तियां, जो ग्राम पंचायत में स्थित है, ग्राम पंचायतों को हस्तान्तरित कर दी गई हैं।
2. ग्राम पंचायत के कार्य निष्पादन हेतु समुचित स्टाफ की व्यवस्था की गई है।
3. ग्राम पंचायत के कार्यो के सम्पादन के लिये धन का आवंटन किया गया है। इस धन का अधिकांश हिस्सा राज्य सरकार से सीधे प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त ग्राम पंचायतों को अपने संसाधनों से भी आय होती है। ग्राम पंचायतों की आय के प्रमुख स्रोत निम्न हैं :-

क. सिंचाई कर से प्राप्त आय

ख. भू-राजस्व पर सरचार्ज लगाकर होने वाली आय

ग. ग्राम निधि पर ग्राम पंचायत का नियंत्रण होता है जिसका संचालन ग्राम प्रधान व ग्राम पंचायत के सचिव के संयुक्त हस्ताक्षरों से होता है।

इस नवीन व्यवस्था में व्यापक अधिकार ही नहीं प्रदान किये गये हैं बल्कि व्यवस्था को कारगर व पारदर्शी बनाये रखने के लिये निम्न उपाय भी किये गये हैं -

1. ग्राम पंचायतों की बैठके प्रत्येक माह में कम से कम एक बार अवश्य आयोजित की जायेगी। ग्राम पंचायतों की बैठक सम्पूर्ण प्रदेश में प्रत्येक माह के दूसरे बुधवार को अवश्य आयोजित की जायेगी। यदि बैठक समय से आयोजित नहीं की जाती है तो उ.प्र. पंचायती राज अधिनियम 1947 की धारा 95 व 96 के अन्तर्गत कार्यवाही भी की जा सकती है।
2. ग्राम सभा की वर्ष में कम से कम दो बैठक अवश्य होनी चाहिये।
3. जिन ग्राम पंचायतों में महिलायें प्रधान हैं, वहां बैठकों की अध्यक्षता उनके द्वारा स्वयं किया जायेगा, किसी नातेदार अथवा रिश्तेदार द्वारा नहीं ।

4. ग्राम पंचायतें विभिन्न विषयों पर कार्य करने के लिये छः समितियों का गठन करेंगी और कार्यों के सम्बन्ध में निर्णय लेने का अधिकार किसी व्यक्ति अथवा पदाधिकारी को न होकर समितियों को होगा।

5. ग्राम पंचायत प्रत्येक ग्रामवासी को ग्राम पंचायत के किसी भी अभिलेख की प्रति प्राप्त करने का अधिकार होगा। अभिलेख की प्रति सचिव से निर्धारित शुल्क जमा करके प्राप्त की जा सकती है। अभिलेख की प्रमाणित प्रतिलिपि उपलब्ध कराने का दायित्व ग्राम पंचायत के सचिव का होगा। यदि अभिलेख की प्रति तीन दिन के अन्दर उपलब्ध नहीं करायी जाती है तो ग्राम पंचायत के सचिव के विरूद्ध कार्यवाही की जा सकती है।

6. ग्राम पंचायतों द्वारा अपने समस्त क्रियाकलापों, प्राप्त आय एवं धनराशि तथा समस्त व्यय का विस्तृत हिसाब रखा जायेगा और इसे ग्रामसभा की छमाही बैठक में प्रस्तुत किया जायेगा। ग्राम पंचायतों के लेखा का अंकेक्षण भी किया जायेगा।

स्पष्ट है कि पंचायत संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान करने के साथ-साथ न केवल पर्याप्त अधिकार और कार्य सौंपे गये हैं बल्कि इनके निष्पादन हेतु समुचित संसाधनों की भी व्यवस्था की गई है, इन संसाधनों और अधिकारों का दुरूपयोग न हो इसके भी उपाय किये गये हैं। इस प्रकार इन अधिकारों व संसाधनों से लैस महिला प्रधानों से राजनीति में अपनी क्षमता के पूर्ण प्रदर्शन पर आधारित सहभागिता की अपेक्षा की गई हे। निश्चय ही अपेक्षा के अनुरूप महिला प्रधानों ने अपनी कार्य क्षमता का प्रदर्शन नहीं किया है, किन्तु उनके बढ़ते हुए प्रभावों और पिछले 18 वर्षो में उनकी कार्यप्रणाली व स्थिति में आये बदलावों से भी इन्कार नहीं किया जा सकता। ये परिवर्तन मन्द ही सही किन्तु हर क्षेत्र में देखे जा सकते हैं। अपने अधिकारों व संसाधनों के आधार पर महिलाओं ने समाज में जो सकारात्मक कार्य किये हैं उन्हें निम्न शीर्षकों में विभक्त किया जा सकता है।

क. सामाजिक

ख. राजनीतिक

ग. आर्थिक

घ. सांस्कृतिक

क. सामाजिक क्षेत्र :- महिला ग्राम प्रधानों के कार्य निष्पादन में सबसे बडी बाधा सामाजिक, पारिवारिक व व्यक्तिगत कारण ही रहे हैं। इसके बावजूद महिलाओं ने सामाजिक क्षेत्र में सकारात्मक बदलाव का प्रयास किया है। 1995 से 2005 तक तीन पंचायत चुनावों में निर्वाचित महिला ग्राम प्रधानों के अध्ययन के आधार पर यह पाया गया कि महिला आरक्षण के आधार पर महिलाओं के ग्राम प्रधान के रूप में कार्य करने से सामाजिक क्षेत्र में सकरात्मक परिवर्तन के संकेत मिले हैं। इन परिवर्तनों को निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत स्पष्ट किया जा सकता है -

1. सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया आरक्षण की इस नई व्यवस्था से तीव्र हुई है क्योंकि समाज के प्रत्येक वर्ग के लोगों को अब सीधे प्रत्यक्ष रूप से राजनीतिक व सामाजिक निर्णय प्रक्रिया में सहभागिता प्राप्त हुई है । 93 प्रतिशत महिला प्रधानों ने इस तथ्य को स्वीकार किया । 7 प्रतिशत प्रधान अनिश्चय की स्थिति में थी ।[1]
2. लगभग 81 प्रतिशत महिला प्रधानों ने यह स्वीकार किया कि इस नई व्यवस्था के लागू होने से जातिगत भेदभाव व विशेष रूप से ऊँच-नीच की भावना में क्रमिक रूप से कमी आ रही है। 8 प्रतिशत इस मत के विपरीत मत व्यक्त करती हैं व 11 प्रतिशत ने इस सम्बन्ध में अनिश्चय की स्थिति व्यक्त की ।[2]
3. 76.32 प्रतिशत महिला प्रधानों ने यह स्वीकार किया कि नौकरियों में आरक्षण की तुलना में पंचायत संस्थाओं में दिया गया आरक्षण सामाजिक समानता स्थापित करने में अधिक कारगर सिद्ध हुआ है। 2.32 इस तथ्य के विरूद्ध हैं और शेष अनिश्चय की स्थिति में रही ।[3]

---

[1] साक्षात्कार अनुसूची विधि से किये गये साक्षात्कार के आधार पर ।

[2] वही

[3] वही

4. प्रधान के रूप में निर्वाचित होने व कार्य करने से समाज में महिलाओं के मान सम्मान व प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई है । क्रमिक रूप से उनकी क्षमता, उपयोगिता व कार्य को समाज ने स्वीकार करना प्रारम्भ कर दिया है। यद्यपि 50 प्रतिशत महिलाये इस तथ्य के पक्ष में और 50 प्रतिशत ने विपक्ष में मत दिया किन्तु 50 प्रतिशत की हां इस बात का संकेतक है कि निकट भविष्य में इस प्रवृत्ति में वृद्धि होगी और महिलाओं के सम्बन्ध में समाज का नजरिया परिवर्तित होगा।[1]

5. नई पंचायत व्यवस्था के लागू होने से महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों व उत्पीडन में क्रमशः कमी आई है। विशेष रूप से जिन गांवों में प्रधान महिला है वहाँ यह स्थिति अधिक कारगर है क्योंकि महिलायें महिला प्रधानों से सहजता से मिलकर अपनी समस्यायें व्यक्त कर पाती हैं व अपनी आवाज उठा पाती है। 88.53 प्रतिशत महिला प्रधानों ने इस बात को स्वीकार किया कि ऐसा हुआ है, अवशेष 11.47 प्रतिशत इस बात को स्वीकार नहीं करती ।[2]

6. महिलाओं से सम्बन्धित विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन की प्रक्रिया तीव्र हुई है। चूंकि अब महिलाओं को स्वयं से सम्बन्धित मामलों के निस्तारण के लिये किसी पुरूष से नहीं बल्कि महिला से ही अन्तःक्रिया करनी होती है अतः उसके काम पहले की तुलना में अब अधिक सहजता से हो पाते हैं।

7. भारत में महिला सशक्तिकरण के लिये व्यापक अभियान व अनेको कार्यक्रम चलाये जाते रहे हैं किन्तु पंचायत संस्थाओं व नगर निकायों में इन्हें 33 प्रतिशत आरक्षण प्रदान किये जाने से यह प्रक्रिया अधिक प्रभावित हुई है । वास्तव में राजनीतिक व सामाजिक निर्णयों में महिला अब तक निर्देशित मतदाता व कार्यकर्ता मात्र थी। इस नई व्यवस्था में उसे देश व समाज के लिये स्वयं निर्णय लेने व कुछ करने का अधिकार मिला। इससे उनका

---

[1] वही
[2] वही

आत्मविश्वास बढ़ा ।[1] अपनी कार्यक्षमता के प्रति बढ़ते विश्वास ने उनकी स्थिति सुदृढ की है और महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया सकारात्मक रूप से प्रभावित हुई है।

8. जनसंख्या नियंत्रण के कार्यक्रमों को ग्रामीण क्षेत्रों में अपेक्षित जनसमर्थन नहीं मिल पा रहा था। किन्तु महिलाओं के पंचायत संस्थाओं में आने से इन कार्यक्रमों के लाभ हानि का लेखा-जोखा उन्हें विविध माध्यमों से मिलने लगा है। अस्तु इस दिशा में महिलाओं ने स्वयं प्रचार प्रसार करते हुए उल्लेखनीय उपलब्धि हासिल की है और इन कार्यक्रमों को प्रभावी बनाने में मदद की है।

9. स्त्री स्वास्थ्य, प्रसूति, बाल कल्याण, विधवा पेंशन, वृद्धावस्था पेंशन आदि के संदर्भ में महिलाओं की समस्याओं का निस्तारण सहज हुआ है।

ख. राजनीतिक क्षेत्र :- राजनीतिक प्रक्रिया में समाज के सभी वर्गो की सक्रिय सहभागिता हो यह लोकतंत्र के सफलता की अनिवार्य शर्त होती है। सभी वर्गो की समान व सक्रिय सहभागिता के अभाव में लोकतंत्र का प्रतिनिधिक स्वरूप उचित नहीं होता है जिसके चलते व्यवस्था में अनेक प्रकार की विकृतियां उत्पन्न हो जाती है और नेतृत्व के निरंकुश व स्वेच्छाचारी होने की संभावनायें बढ़ जाती हैं । इसके लिये आवश्यक होता है कि जन सामान्य देश की राजनीतिक गतिविधियों के प्रति सचेत रहे और प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन पर समुचित नियंत्रण बनाये रखे । यह तभी संभव होगा जब समाज का अधिकांश हिस्सा राजनीति में सहभागी होगा। भारत में स्वतंत्रता के बाद से राजनीतिक सहभागिता की स्थिति कम रही है। निर्धनता, अशिक्षा व अज्ञानता के चलते समाज का अधिकांश हिस्सा निर्देशित मतदाता के रूप में ही राजनीति में सहभागी होता था। अन्य गतिविधियों में उसकी सहभागिता प्रायः नही होंती थी। यही कारण है कि लम्बे समय तक भारत की केन्द्रीय व राज्य की राजनीति में एक ही राजनीतिक दल का वर्चस्व बना रहा। किन्तु क्रमशः लोगों में राजनीतिक चेतना का संचार बढ़ा और यह वर्चस्व टूटा । किन्तु महिलाओं की विशेष रूप से ग्रामीण महिलाओं की, राजनीतिक चेतना व

---

[1] वहीं, 66.67 प्रतिशत महिलाओं ने आत्मविश्वास बढ़ने की बात स्वीकार की , 16.67 प्रतिशत इसे नहीं मानती व 16.67 अनिश्चय की स्थिति व्यक्त करती हैं।

सहभागिता में अभी भी पर्याप्त सुधार की आवश्यकता है। इस आवश्यकता की पूर्ति पंचायत संस्थाओं व नगर निकायों में महिलाओं को दिया गया 33 प्रतिशत आरक्षण करता है। अब महिलायें मात्र निर्देशित मतदाता मात्र नहीं हैं । वे ग्राम पंचायत सदस्य, ग्राम प्रधान, बी.डी.सी., ब्लाक प्रमुख, जिला पंचायत सदस्य व जिला पंचायत अध्यक्ष के रूप में राजनीतिक निर्णय प्रक्रिया से जुड़ चुकी हैं। निचले स्तर पर प्राप्त यह राजनीतिक अनुभव उनमें निश्चय ही राजनीतिक चेतना का संचार कर रहा है और धीमे ही सही राजनीति में उनके सहभागिता की दर बढ रही है। इस संदर्भ में प्रमुख रूप से निम्न परिणाम दृष्टिगोचर हो रहे हैं -

1. पचायतों व नगर निकायों में महिलाओं को मिले आरक्षण के बाद विधान सभाओं और संसद के दोनों सदनों में महिलाओं के लिये आरक्षण की मांग बढ़ी है। इस मांग को नगरीय क्षेत्रों के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों में भी समर्थन मिल रहा है। प्रस्तुत अध्ययन में शत-प्रतिशत महिला प्रधानों ने इस मांग का समर्थन किया है।[1]
2. ग्रामीण महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता में क्रमिक रूप से वृद्धि हुई है। 1995 के महिला प्रधानों की तुलना में 2005 में निर्वाचित महिला प्रधानों में राजनीतिक रूचि व सक्रियता अधिक देखी गई ।[2]
3. महिलाओं को मिले आरक्षण के बाद से महिलाओं की राजनीतिक जागरूकता में वृद्धि हुई है। 81 प्रतिशत महिला प्रधान इस बात को स्वीकार करती हैं।
4. ग्रामीण महिलाओं की राजनीतिक गतिविधियां बढ़ी हैं। धरना, प्रदर्शन व सभाओं में उनके भाग लेने की दर बढ़ी है।

ग. **आर्थिक क्षेत्र** :-आर्थिक समानता के अभाव में राजनीतिक व सामाजिक समानता संभव नहीं है। आर्थिक निर्बलता व्यक्ति की प्रत्येक स्थिति को प्रभावित करती हैं। निश्चय ही आर्थिक स्वावलम्बन राजनीतिक-सामाजिक दायित्व के निर्वाह हेतु एक अनिवार्य शर्त है। जैसा कि अध्ययन से स्पष्ट हुआ, हमीरपुर में महिला प्रधान आर्थिक रूप से स्वावलम्बी नहीं हैं जो उनके कार्यक्षमता

---

[1] वही

[2] वही

व कार्य निष्पादन को प्रभावित करता है। किन्तु महिलाओं के ग्राम प्रधान होने से महिलाओं के आर्थिक उन्नयन हेतु चलाये जाने वाले कार्यक्रमों का लाभ उन्हें मिल रहा है। इस संदर्भ में जो प्रमुख कार्यक्रम ग्राम पंचायतों द्वारा संचालित हैं वे निम्न हैं :-

1. स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना
2. इन्दिरा आवास योजना
3. ग्रामीण पेयजल योजना
4. उन्नत चूल्हा कार्यक्रम
5. राष्ट्रीय बायोगैस कार्यक्रम
6. वृद्धावस्था पेंशन योजना
7. पारिवारिक लाभ योजना
8. मातृत्व लाभ योजना
9. निराश्रित विधवा पेंशन योजना
10. पुनर्गठित ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम

इनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण है स्वर्ण जयन्ती स्वरोजगार योजना, जिसके अन्तर्गत स्वयं सहायता समूह बनाकर महिलायें आर्थिक उन्नयन के नये आयाम बना रही हैं। मूंज की रस्सी, अगरबत्ती, मोमबत्ती, दरी, फर्नीचर आदि का निर्माण, पिसे मसाले का काम, भैंस पालन, कुक्कुट पालन, बकरी पालन आदि के माध्यम से महिलायें अपने आर्थिक उन्नयन के लिये कार्य कर रही हैं। इन कार्यो में हमीरपुर जनपद में कुरारा ब्लाक में सर्वाधिक सफलता अर्जित की गई है।

4. **सास्कृतिक क्षेत्र :-** सांस्कृतिक धार्मिक मूल्य महिलाओं के कार्य व्यवहार एवं गतिशीलता पर अनेक प्रतिबन्ध आरोपित करते हैं, किन्तु पंचायत संस्थाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण प्राप्त हो जाने के बाद महिलाओं ने उन क्षेत्रों में भी दस्तक दी है जिन पर अब तक पुरूषों का वर्चस्व रहा है। ग्रामीण, सामाजिक, राजनीतिक व्यवस्था में महिलाओं की आवाज नहीं होती थी किन्तु इस नई व्यवस्था के लागू होने के बाद से महिलाओं को पंचायत सदस्य और ग्राम

प्रधान के रूप में समाज ने अनमने ढंग से स्वीकार किया था। सवीकारोक्ति की यह विवशता अब भी कायम है, किन्तु क्रमिक रूप से समाज की मानसिकता में बदलाव परिलक्षित हो रहा है। महिलाओं को नये रूप में स्वीकारने वाले लोगों का प्रतिशत बढ़ रहा है।

महिला प्रधान व पंचायत सदस्यों के प्रयासों से सर्वशिक्षा अभियान और प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रमों के माध्यम से बालिका शिक्षा और प्रौढ़ महिलाओं के शिक्षण की दर में वृद्धि हुई है।

उपर्युक्त तथ्य यह सिद्ध करते हैं कि नई पंचायत व्यवस्था के अन्तर्गत महिलाओं को एक तिहाई आरक्षण देने से सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक हर क्षेत्र में सकारात्मक प्रभाव व परिवर्तन दिखाई दे रहा है किन्तु यह नई व्यवस्था के लागू होने के 18 वर्ष बाद अभी भी बहुत मन्द और नाकाफी है। इस प्रक्रिया को तीव्र करने के लिये महिला पदाधिकारियों के लिये समुचित प्रशिक्षण की आवश्यकता है। सर्वेक्षण में 95 प्रतिशत महिला प्रधानों ने प्रशिक्षण की आवश्यकता पर बल दिया। 2 प्रतिशत प्रशिक्षण नहीं चाहती 3 प्रतिशत इस विषय में अनिश्चय की स्थिति में रही ।[1] प्रशिक्षण मुख्य रूप से निम्न क्षेत्रों में आवश्यक है :-

1. पंचायत विधियां व नियम,
2. ग्राम पंचायत के कार्य व दायित्व,
3. ग्राम प्रधान व सदस्य के कार्य व दायित्व,
4. पदाधिकारियों के साथ कार्य,
5. पंचायतों द्वारा संचालित योजनायें व कार्यक्रम, तथा
6. वित्तीय संसाधनों का प्रयोग व वित्तीय कार्य आदि ।

यह तो निश्चित है कि किसी भी समाज व्यवस्था में अचानक क्रान्तिकारी परिवर्तन नहीं लाया जा सकता। यही स्थिति महिलाओं की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक स्थिति के सम्बन्ध में भी रही है। सदियों से पुरूष प्रधान मानसिकता वाले सामाजिक दासत्व की शिकार महिलाओं को अब अवसर मिला है। आवश्यकता इस बात की है कि उन्हें स्वतंत्रतापूर्वक

---

[1] वही

स्वविवेक से कार्य करने दिया जाय, परिणाम स्वतः सामने होंगे । आवश्यकता उन्हें सहयोग देने की है, सहयोग के नाम पर उन पर अपनी इच्छा व निर्देश थोपने की नहीं, निश्चय ही निकट भविष्य में समय के साथ यह नवीन व्यवस्था महिलाओं की स्थिति के संदर्भ में अपेक्षित परिणाम दे सकेगी।

अध्याय-8

उपसंहार

उपसंहार

राजनीतिक सहभागिता और लोकतंत्र में अंतरंग सम्बन्ध है। यद्यपि यह प्रत्येक प्रकार की राजनीतिक व्यवस्थाओं का अनिवार्य संघटक है तथापि लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं के लिये यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण हे, लोकतंत्र के सफल संचालन के लिये यह न केवल आवश्यक है बल्कि उसके सफलता या असफलता के मूल्यांकन का मानक भी माना जा सकता है। लोकतंत्र में भी राजनीतिक शक्ति व सत्ता राजनीतिक अभिजनों तक ही सीमित रहती है, किन्तु सत्ताधारी राजनीतिक मामलों में जनसामान्य के उलझाव व सहभागिता के लिये अधिक से अधिक प्रयास करते रहते हैं, जिससे जनसमर्थन के आधार पर राजव्यवस्था के वैधता को स्थायी और निरन्तर बनाये रखा जा सके। जिस समाज में जन सामान्य को राजनीतिक सहभागिता का पर्याप्त अवसर नहीं मिलता वहां विद्रोह, आन्दोलन, हिंसा और अस्थिरता की स्थित आम बात होती है। राजनीतिक सहभागिता न केवल शासक और शासित के बीच एक सेतु का काम करती है बल्कि समाज को क्रान्तिकारी विस्फोटक स्थितियों से भी बचाये रखती है, राजनीतिक सहभागिता का यह संदर्भ समाज में आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करने वाली महिलाओं के सम्बन्ध में भी महत्वपूर्ण हैं।

वर्तमान युग महिला सशक्तिकरण का है। विभिन्न नारीवादी आन्दोलनों व प्रयासों से क्रमशः स्त्रियों की स्थिति में सुधार आया है किन्तु पूर्व में स्त्रियों के सम्बन्ध में ऐसी स्थिति नहीं थी। स्त्रियों को भोग और विलासिता की वस्तु माना जाता रहा और सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक सभी क्षेत्रों में पुरूषों का वर्चस्व बना रहा, जिसके चलते स्त्रियां पुरूष मानसिकता के दासत्व में जीने के लिये अभिशप्त रही। यह स्थिति भारत ही नहीं, विश्व के तथाकथित विकसित कहे जाने वाले देशों में भी रही है जहा उन्हें लम्बे समय तक राजनीतिक अधिकार प्राप्त नहीं रहे। लोकतंत्र का घर कहे जाने वाले स्विटजरलैण्ड में 1970 तक स्त्रियों को मताधिकार प्राप्त नहीं था। स्त्रियों को मताधिकार प्रदान किये जाने के प्रस्ताव जनमत सग्रह में पूर्ण

बहुमत से रद्द कर दिये जाते थे । स्पष्ट है कि यहां भी मतदाता पुरूष ही होते थे जो स्त्री मताधिकार का विरोध करते थे। अन्ततः 7 फरवरी 1971 को स्विटजरलैण्ड में स्त्रियों को मताधिकार और राजनीतिक सहभागिता का अधिकार मिला। ब्रिटेन में 1918 में 30 वर्ष की आयु पूरी कर चुकी महिलाओं को मताधिकार दिया गया जबकि पुरूषों के लिये यह आयु 21 वर्ष थी। 1928 में यह अधिकार पुरूषों के समान आयु पर निर्धारित करते हुए सार्वभौम वयस्क मताधिकार के सिद्धान्त को स्वीकार किया गया। संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान 1787 ई0 में बना और 1789 में लागू हुआ किन्तु महिलाओं को मतदान का अधिकार 19वें संविधान संशोधन द्वारा 1920 में दिया गया। ऐसा केवल इसलिये सम्भव हुआ क्योंकि स्त्री शक्ति की उपयोगिता और राष्ट्र निर्माण में इनकी ऊर्जा के प्रयोग की महती आवश्यकता का अनुभव किया जाने लगा था।

आधुनिक भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था का श्रीगणेश 26 जनवरी 1950 को लागू संविधान के आधार पर 1952 से प्रारम्भ हुए निर्वाचनों से हुआ । स्वतंत्रता के बाद से 1952 में पहले आम चुनाव हुए और तब से अब तक (2004) लोकसभा के 14 चुनाव और राज्यों के विधानसभाओं के चुनाव हो चुके हैं। इन चुनावों में चुनाव दर चुनाव राजनीतिक सहभागिता में वृद्धि हुई है। इस सहभागिता वृद्धि के लिये सार्वभौम वयस्क मताधिकार की व्यवस्था, शिक्षण सुविधाओं का विकास, समान मौलिक अधिकारों की व्यवस्था, राजनीतिक दलों के क्रियाकलाप, दबाव समूहों व हित समूहों की गतिविधियों को उत्तरदायी माना जा सकता है।

किन्तु महिलाओं और विशेष रूप से ग्रामीण महिलाओं की सहभागिता आज भी निर्देशित व दर्शक गतिविधियों की स्थिति तक ही सीमित है जबकि भारत का संविधान समाज के सभी स्त्री पुरूषो को समान सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक अधिकारों की गारंटी प्रदान करता है। इतना ही नहीं समय-समय पर संसद ने विभिन्न कानून बनाकर स्त्रियों के अधिकारों की रक्षा व उनके सशक्तिकरण हेतु विशेष उपाय किये हैं। इसके बावजूद संसद व विधान सभाओं में महिलाओं की उपस्थिति नगण्य है। इसी प्रकार केन्द्र और राज्य सरकारों में मंत्री पद प्राप्त करने वाली महिलाओं की संख्या भी सीमित ही रही है। लोकसभा में 1952 से अब तक औसतन 6. 4 प्रतिशत और राज्यसभा में 9.12 प्रतिशत महिलायें ही निर्वाचित हो सकी हैं। 1999 तक

विभिन्न राज्यों की विधान सभाओं में महिलाओं की उपस्थिति का औसत 4.0 प्रतिशत तक ही रहा। इसी प्रकार विभिन्न लोकसभा चुनानों में चुनाव लड़ने वाली महिलाओं की संख्या पुरूषों की तुलना में बहुत ही कम रही है।[1] लोकसभा में मंत्रीपरिषद में शामिल की गई महिलाओं की संख्या अब तक सर्वाधिक 10 रही है।

निश्चय ही यह स्थिति भारत में महिलाओं के राजनीतिक सहभागिता के संदर्भ में उत्साहजनक नहीं है। भारत में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता का निम्न स्तर शहरी क्षेत्रों में तो है ही, ग्रामीण क्षेत्रों में तुलनात्मक रूप से अधिक निम्न है। ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं की राजनीतिक भूमिका निर्देशित मतदाताओं तक ही सीमित रही है। ऐसे में यदि मतदाता राजनीति में सक्रिय समझ नहीं रखता या उसमें राजनीतिक चेतना न्यून हो तो उसके मतों का सही प्रयोग संभव नहीं होता। लोकतंत्र में मत (वोट) का मूल्य सर्वाधिक है क्योंकि पर्याप्त विचार के बाद से विवेकपूर्ण मतदान किया जाय तो योग्य और सक्षम प्रतिनिधियों का चुनाव संभव हो पाता है। इतना ही नहीं मतदाता राजनीतिक विषयों की पर्याप्त समझ रखता है और उनके गुण-दोषों के आधार पर अपना विचार रखते हुए शासन के निवेशों और निर्गतों को प्रभावित करने का प्रयास भी करता है, जिससे शासन का लोकतांत्रिक स्वरूप बना रहे और वह निरंकुश व स्वेच्छाचारी न होने पाये।

राजनीतिक सहभागिता में कमतर किसी वर्ग को अधिक से अधिक सक्रिय बनाने का एक प्रभावी साधन है कि उन्हें राजनीतिक निर्णय निर्माण की प्रक्रिया में प्रत्यक्ष रूप से उलझाया जाय जिससे राजनीतिक गतिविधियों के प्रति स्वतः उनमें जिज्ञासा जागृत होगी और यह कार्य शासन के निचले पायदान से ही किया जा सकता है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए 1993 में 73वें व 74वें संविधान संशोधन द्वारा क्रमशः पंचायत संस्थाओं और नगर निकाय में अनुसूचित जाति को 21 प्रतिशत, अनुसूचित जनजाति को 2 प्रतिशत व पिछड़ी जाति के लोगों को आबादी के अनुपालन में 27 प्रतिशत आरक्षण प्रदान किया गया। स्थानीय शासन की इन इकाइयों की इस नवीन व्यवस्था की सबसे अनूठी व्यवस्था थी - महिलाओं के लिये प्रत्येक स्तर

[1] देखें सारणी 4.5

व पदों पर एक तिहाई आरक्षण की व्यवस्था। निश्चय ही इस व्यवस्था में न केवल समाज के दबे, पिछड़े वर्गो को देश की राजनीतिक प्रक्रिया में सक्रिय सहभागिता प्रदान की बल्कि महिलाओं को नये अवसर उपलब्ध कराकर उनके विकास और सहभागिता का मार्ग प्रशस्त किया । इसे इस दिशा में स्वतंत्र भारत के सबसे कारगर प्रयासों में एक माना जा सकता है क्योंकि भारत में लोकतंत्र की निम्नतम इकाई ग्राम पंचायतें हैं, जहां से राजनीति की वर्णमाला प्रारम्भ होती है। यदि यहां समाज के प्रत्येक वर्ग को सक्रिय रूप से सहभागी बनाया जा सका तो निश्चय ही इसके परिणाम राष्ट्रीय राजनीति तक परिलक्षित होंगे, ग्रामीण समाज में महिलायें जहां अब तक निर्देशित मतदाता अथवा कार्यकर्त्री मात्र थी, ग्राम पंचायत के प्रधान के रूप में उन्हें शासन का प्रत्यक्ष अवसर प्राप्त हो रहा है । यह स्थिति उन्हें सक्रिय राजनीति में सहभागी बनायेगी, यह भविष्य तय करेगा। नई पंचायत व्यवस्था के अंतर्गत 1995,2000 व 2005 में तीन चुनाव हो चुके हैं। उत्तर प्रदेश के पिछड़े हुए क्षेत्र बुन्देलखण्ड के सर्वाधिक पिछडे जनपद हमीरपुर के इन तीनों चुनावों में विजयी महिला प्रधानों के राजनीतिक सहभागिता की स्थिति का मूल्यांकन प्रस्तुत शोध में किया गया है, जो यह स्पष्ट करते हैं कि महिलाओं के राजनीतिक क्रिया कलापों व ग्राम प्रधान के रूप में कार्य क्षमता में 1995 की तुलना में 2005 तक क्रमिक बदलाव आया है, किन्तु परिवर्तन की यह गति अभी भी बहुत मन्द हैं

हमीरपुर जनपद में ग्राम प्रधान के रूप में कार्य करने वाली महिलाओं के राजनीतिक सहभागिता के सम्बन्ध में किये गये अध्ययन के विश्लेषण से प्रमुख रूप से निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए :-

1. सामान्य रूप से महिलायें आरक्षण होने के कारण ही ग्राम प्रधान अथवा पंचायत के सदस्य आदि पदों पर चुनाव लड़ती है। आरक्षण न होने की स्थिति में 1995 में निर्वाचित महिलाओं में से 15.51 प्रतिशत, 2000 में निर्वाचित 22.88 प्रतिशत और 2005 में निर्वाचित 36.86 प्रतिशत ने ही चुनाव लड़ सकने की बात स्वीकार की । यह तथ्य यह साबित करता है कि आरक्षण क्रमिक रूप से महिलाओं को राजनीति में धकेलने का कार्य कर रहा हे। यह बात इस तथ्य से भी सिद्ध हो जाता है कि तीन

पंचायत चुनावों में महिलायें अधिकांशतः ग्राम प्रधान पद पर आरक्षित स्थानों से ही चुनकर आई । अनारक्षित स्थानों को स्वतः उन्होनें पुरूषों के लिये आरक्षित मान लिया। अनारक्षित सीटों से 1995 में 2, 2000 में 4 व 2005 में 5 महिलायें ग्राम प्रधान के रूप में चुनी गई।

2. पंचायत प्रधान के रूप में चुनाव लड़ने का निर्णय आम तौर पर महिलाओं के परिवार प्रमुख, पिता/ पति या पुत्र का होता है। यद्यपि 16.66 प्रतिशत स्वयं के निर्णय के आधार पर चुनाव लड़ने की बात स्वीकार करती हैं, किन्तु चुनाव के समर में स्वयं अपने विवेक से सहभागी होने वाली महिलाओं का यह प्रतिशत बहुत ही कम है।

3. महिला प्रधान विविध प्रकार की बैठकों में प्रायः कम ही भाग लेती है, सार्वजनिक कार्यो या बैठकों में उनके परिवार का कोई न कोई पुरूष सदस्य उनकी सहायता के नाम पर उनके साथ लगा रहता हे । परिणामस्वरूप ग्राम प्रधान के औपचारिक पद के साथ-साथ प्रधान पति या प्रधान पुत्र जैसे अनौपचारिक पदसूचक सम्बोधनों का प्रचलन बढ़ा है।

4. महिला प्रधानों में स्वयं अपने विवेक से निर्णय लेने वाली महिलाओं का प्रतिशत बहुत कम (26.38 प्रतिशत) है। उनके निर्णय व कार्य को पारिवारिक सदस्य व अन्य प्रभावशाली लोग प्रभावित करते रहते हैं।

5. महिला प्रधानों को सामान्य पंचायत कार्यो में असुविधा का सामना करना पडता है क्योंकि अधिकांश महिला प्रधानों को पंचायत के नियमों व ग्राम प्रधान के दायित्वों की सम्यक जानकारी ही नहीं है।

6. पंचायत संस्थाओं में महिलाओं के आरक्षण को अधिकांश महिला प्रधान (93.05) प्रतिशत सही मानती है किन्तु अनेक कारणों से वे बिना आरक्षण के इन पदों तक पहुंच पाने में कठिनाई का अनुभव करती हैं।

7. पंचायत से बाहर राजनीतिक गतिविधियों में उनकी सहभागिता निर्देशित दर्शक गतिविधियों तक ही सीमित है क्योंकि -

क. केवल 14.58 प्रतिशत महिला प्रधान ही किसी राजनीतिक दल की सदस्य है।

ख. मात्र 50 प्रतिशत महिला प्रधानों का ही किसी राजनीतिक दल की ओर झुकाव है।

ग. राजनीतिक गतिविधियों में उनकी सहभागिता दलों को प्रतीकात्मक समर्थन तक सीमित है। रैलियों, धरना, प्रदर्शन आदि में उनकी रूचि नहीं के बराबर है।

घ. लोकसभा, विधानसभा अथवा अन्य चुनावों में केवल 25.23 प्रतिशत ही स्वयं अपने विवेक से मतदान का निर्णय करती हैं, शेष पारिवारिक अथवा अन्य किसी दबाब के आधार पर मतदान करती हैं।

ग्राम पंचायतें शासन की आधारभूत इकाई होती हे। इनके लिये ''आपकी सरकार आपके द्वार'' जैसे नारे दिये जाते हैं क्योंकि यहां सभी नागरिकों को ग्राम सभा के माध्यम से प्रत्यक्ष रूप से गांव के शासन में सहभागी होने का अवसर मिलता है। साथ ही स्थानीय मामलों का प्रबन्धन स्थानीय लोगों के हाथ होने से समस्याओं के त्वरित व सम्यक निस्तारण की संभावनाये बढ जाती हैं। यही कारण हे कि इन संस्थाओं में समाज के विभिन्न वर्गो को आरक्षण प्रदान कर सबको समान रूप से पंचायत कार्यो में सहभागी बनाया गया। इसी उद्देश्य से महिलाओं को भी एक तिहाई आरक्षण प्रदान किया गया किन्तु हमीरपुर जनपद के प्रस्तुत अध्ययन के निष्कर्षो के अनुसार महिलायें अपने पदों के साथ अपेक्षानुसार न्याय नहीं कर सकी हैं। उनके सहभागिता के सन्दर्भ में भी जो अपेक्षायें की गई थी वे निर्मूल सिद्ध हुई हैं।

वास्तव में महिलाओं से, विशेष रूप से ग्रामीण महिलाओं से तत्काल पंचायत संस्थाओं अथवा अन्य किसी दायित्व के संदर्भ में प्रभावी परिणाम दे सकने की अपेक्षा करना बेमानी होगा। सदियों से पर्दे व घर की चाहरदीवारी के बीच सिमटी इस शक्ति से अचानक उस पर सरपट दौड़ पड़ने की अपेक्षा नहीं की जानी चाहिये। अनेक ऐसे कारक है जो स्पष्ट रूप से

इनकी स्वतंत्र कार्यक्षमता पर नकारात्मक प्रभाव डालते हुए इनके कार्य मार्ग में बाधा उत्पन्न करते हैं। ऐसी प्रमुख बाधाये निम्न हैं :-

1. ग्रामीण क्षेत्र में स्त्री साक्षरता दर बहुत ही कम है। 1995 से 2005 तक चुनी गई महिला प्रधानों में से 6.71 प्रतिशत निरक्षर है और 81.25 प्रतिशि अल्पशिक्षित है। इस प्रकार 87.96 प्रतिशत प्रधान ऐसी है जो राजनीतिक व शासकीय विषयों, पत्रजातों आदि को अच्छी तरह से नहीं समझ सकती। केवल 3.93 प्रतिशत महिला प्रधान ही उच्च शिक्षा प्राप्त हैं जो सही तरीके से प्रशासनिक दायित्व का निर्वाह कर सकती है। इस प्रकार निरक्षरता और अल्पशिक्षित होना उनके ज्ञान, सूचनाओं के प्रवाह व व्यक्तित्व को प्रभावित करता है जो उनके कार्य क्षमता व राजनीतिक सहभागिता की स्थिति पर असर डालता है।
2. पुरूष प्रधान सामाजिक मूल्य जिसमें स्त्रियों को हमेशा दोयम दर्जे का नागरिक माना गया है, महिलाओं की कार्य क्षमता को सर्वाधिक प्रभावित करता है। ग्राम प्रधान के रूप में जहां दबंग पुरूषों का दबदबा रहा हो उस पद पर किसी महिला का आसीन हो जाना पुरूष समाज सहजता से स्वीकार नहीं कर पाता । वह उसकी कार्य क्षमता पर संदेह करता है और परिवार के पुरूष जन अनचाहे ही उनके सहायता के नाम पर उनका काम स्वयं करने लगते हैं।
3. ग्राम प्रधान बनने के बाद भी महिलाओं को घरेलू कामकाज व मजदूरी जैसे आर्थिक क्रियाकलापों से मुक्ति नहीं मिल पाती जिस कारण वे ग्राम प्रधान के रूप में कार्य करने के लिये पर्याप्त समय नहीं निकाल पाती ।
4. परम्परागत सामाजिक मूल्य स्त्रियों को पर्दे में रहने की वकालत करते हैं, जबकि ग्राम प्रधान के रूप में उन्हें गांव के अन्य पुरूषों व पुरूष अधिकारियों के साथ भी कार्य करना पड़ता है। यह स्थिति ग्रामीण महिलाओं के लिये असुविधाजनक होती है। ऐसे में यदि कोई महिला स्वतंत्रतापूर्वक अपने दायित्वों के निर्वाह के संदर्भ में पुरूषों के सम्पर्क में आती है और अपने दायित्वों का सम्पादन करती है तो उसे चरित्र हनन

के कुत्सित प्रयासो का भी सामना करना पड़ता है। यह स्थिति तब और गंभीर हो जाती है जब 90.49 प्रतिशत महिला प्रधान 21 वर्ष से 50 वर्ष की आयु वर्ग की हो।

5. जाति और जातियों के परम्परागत पंचायतों का नेतृत्व भी महिला प्रधानों के स्वतंत्र कार्य निष्पादन में बाधक बनता है, जातिवाद अनुसूचित जाति की महिलाओं की कार्यक्षमता पर सर्वाधिक असर डालता है क्योंकि उसे जातीय पंचायत नेतृत्व के साथ-साथ गांव के दबंग उच्च्य जातियों के दोहरे दबाब का सामना करना पड़ता है।
6. स्त्रियों के किसी भी समय कहीं भी आने जाने की स्थिति प्रतिबन्धित होती है। ऐसा सांस्कृतिक मूल्यों के कारण तो होता ही है, सुरक्षा का कारण भी इसके लिये उत्तरदायी होता है।
7. महिलाओं को अपने कार्य के संदर्भ में क्षेत्रीय विधायक, सांसद व प्रभावी राजनीतिक दल के कार्यकर्ताओं के दबाब का भी सामना करना पड़ता है । इतना ही नहीं प्रशासनिक अधिकारियों का दृष्टिकोण भी उनके प्रति प्रायः नकारात्मक ही होता है।
8. अधिकांश महिला आर्थिक रूप से स्वावलम्वी नहीं है। यह स्थिति उनके राजनीतिक सहभागिता की स्थिति को नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है।

अन्ततः परम्परागत धार्मिक, सामाजिक व सांस्कृतिक मूल्य महिलाओं की राजनीतिक गतिविधियों को प्रतिबन्धित करते हैं। इन बाधाओं के समुचित निस्तारण के बिना महिलाओं की सक्रिय राजनीतिक सहभागिता व ग्राम प्रधान के रूप में पूर्ण क्षमता के साथ कार्य निष्पादन की अपेक्षा नहीं की जा सकती।

यद्यपि अनेक सामाजिक, शैक्षणिक, राजनीतिक आर्थिक और सांस्कृतिक व्यवधानों के चलते महिलाये ग्राम प्रधान के रूप में अपनी पूर्ण क्षमता का प्रदर्शन नहीं कर सकी है और राजनीतिक गतिविधियों से दूर ही रही है तथापि पंचायत व नगर निकाय संस्थाओं में महिलाओं के 33 प्रतिशत आरक्षण के बाद से आये परिवर्तन की मन्द बयार से इन्कार भी नहीं किया जा

सकता। यह सत्य है इस परिवर्तन की गति धीमी है किन्तु यह अपेक्षा तो की ही जा सकती है कि आने वाले दिनों में परिस्थितियों के अनुकूल होते जाने से यह बदलाव भी तीव्र होगा।

इस नयी व्यवस्था के लागू होने के 18 वर्षो बाद की स्थिति यह है कि समाज में स्त्रियों की मान प्रतिष्ठा पहले से बढ़ी है। महिलायें जिन गांवों में प्रधान रही हैं अथवा है वहां महिलाओं की ग्राम प्रधान के साथ अन्तःक्रिया बढ़ी है। इससे महिलाओं के प्रति होने वाली हिंसा व उत्पीड़न की घटनाओं में कमी आई है। यह सही है कि पंचायत संस्थाओं में आरक्षण के बाद से महिलाओं ने राज्य और राष्ट्र की राजनीतिक गतिविधियों में कोई आश्चर्यजनक छलांग नहीं लगाई है किन्तु यह भी सत्य है कि उनमें क्रमिक रूप से राजनीतिक चेतना अंगड़ाई लेने लगी है। राजनीतिक विषयों के प्रति उनकी रूचि व उलझाव में वृद्धि हुई है। ग्राम पंचायत के माध्यम से स्त्रियों के उन्नयन के लिये चलाये जाने वाले कार्यक्रमों का लाभ उन्हें मिलने लगा है। इन कार्यक्रमों व स्वयं सहयता समूहों के गठन के माध्यम से अगरबत्ती, मोमबत्ती, मसाला उद्योग, दरी, फर्नीचर व मूंज की डोरी आदि बनाने के काम के साथ-साथ पशुपालन द्वारा महिलाओं को आर्थिक स्वावलम्बन का मार्ग मिल गया है। परिवर्तन की यह रफ्तार जिस दिन तेज होगी परम्परागत सांस्कृति-सामाजिक मूल्य स्वतः बदलते हुए स्त्रियों के अनुकूल होने लगेगें।

स्थानीय शासन की इकाइयों में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण प्रदान कर समाज और राजनीति में उनके भागीदारी की जो अपेक्षा की गई है वह अपेक्षित लक्ष्य शीघ्रता से प्राप्त किया जा सके, महिलायें अपनी क्षमता के अनुरूप स्वयं कार्य करते हुए राष्ट्र के विकास में अपना महती योगदान प्रस्तुत कर सकें इसके लिये प्रस्तुत अध्ययन के आधार पर निम्न सुझाव दिये जाते हैं -

1. ग्राम प्रधानों व पंचायत सदस्यों के शिक्षा के अल्प स्तर को देखते हुए ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा के लिये व्यापक प्रचार प्रसार किया जाय । साथ ही पंचायत गतिविधियों में शिक्षित लोगों की अग्रगामी सहभागिता को प्रोत्साहित किया जाय जिससे उपयुक्त पात्रों के हाथ में पंचायतों की बागडोर पहुंच सकें।

2. महिला ग्राम प्रधानों की भूमिका को प्रभावी बनाने के लिये आवश्यक है कि ग्राम प्रधानों के साथ-साथ पंचायत सदस्यों को उनके कार्यो, पंचायत के नियमों, कार्यो व विकास कार्यक्रमों के सम्बन्ध में समुचित प्रशिक्षण प्रदान किया जाय।

3. महिला प्रधान के साथ बैठकों में प्रधान पति अथवा पुत्र की उपस्थिति को कड़ाई से रोकने की व्यवस्था की जाय। पारिवारिक पुरूषों के महिला प्रधान के कार्यो में दैनिक हस्तक्षेप को रोकने की कारगर व्यवस्था की जाय।

4. महिला प्रधानों को उनके कार्य सम्पादन के दौरान समुचित सुरक्षा उपलब्ध कराई जाय। महिला प्रधानों का उत्पीड़न करने वाले व्यक्तियों के विरूद्ध कठोर कार्यवाही की जाय।

5. सरकारी विभागों से जुड़े तथा विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में सरकार का प्रतिनिधित्व कर रहे कर्मचारियों व अधिकारियों द्वारा अपनी भूमिका का निर्वाह प्रभावी ढंग से किया जाय। वास्तव में इनकी भूमिका पथप्रदर्शक व सहयोगी की होनी चाहिये, अफशरसाही की नहीं ।

6. संविधान संशोधन द्वारा महिलाओं को अधिकार सम्पन्न तो बना दिया गया किन्तु उनकी अधिकार सम्पन्नता के परिणाम तभी दृष्टिगोचर होंगे जब उन्हें ग्रामीण विकास तथा महिला विकास के प्रति जागरूक बनाया जाय।

7. महिलाओं को आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बनाये बिना उनके पूर्ण सहभागिता की अपेक्षा नहीं की जा सकती। अतः यह एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है कि उन्हें आर्थिक रूप से स्वतंत्र बनाया जा सके जिससे वे अधिक से अधिक समय राजनीतिक कार्यो को दे सकें।

8. निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों की पंचायती राज में सक्रिय भूमिका हेतु परिवार की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। परिवार में महिला प्रधान की इस नई भूमिका का स्वागत किया जाना चाहिये। परिवार से उन्हें सहयोग की तो अपेक्षा है किन्तु परिवार की इच्छा उन पर बलात थोपी जाय यह गलत होगा।

9. राजनीतिक दलों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपनी कार्यकारिणी तथा चुनावों में अधिक से अधिक महिलाओं को अवसर प्रदान करें। इससे ग्रामीण महिलाओं में आगे की राजनीति में सहभागी होने की इच्छा बलवती होगी।

10. महिलाओं को पंचायती राज व्यवस्था में प्रभावी भूमिका निभाने में गैर सरकारी संगठन भी सक्रिय भूमिका निभा सकते हैं। ये स्थानीय निकायों में प्रत्येक पद के अनुरूप सर्वाधिक उपयुक्त महिलाओं की पहचान करके चुनाव में उनकी मदद कर सकते हैं। महिला संबंधी मुददों पर निर्वाचित सदस्यों /प्रधानों के पक्ष में लॉबी बनाकर भावी महिला नेतृत्व को प्रशिक्षित कर सकते हैं।

11. इस दिशा में जनसंचार माध्यमों की भूमिका भी महत्वपूर्ण है। महिला प्रधानों के अच्छे उदाहरण और अनुभव का प्रसारण कर दूसरों को प्रेरित करते हुए सकारात्मक भूमिका निभा सकते हैं।

12. ऐसे ''मैकेनिज्म'' का विकास किया जाय जिससे निर्णय निर्माण के प्रत्येक स्तर पर महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित की जा सके तथा नीति निर्माण व क्रियान्वयन दोनों में ही उनकी सहभागिता सुनिश्चित हो।

13. राज्य का यह दायित्व होना चाहिये कि वह यह सुनिश्चित करे कि लोकतांत्रिक प्रक्रिया के प्रत्येक स्तर पर महिलाओं के विचारों को सम्मान मिले तथा महिलाओं की सहभागिता वृद्धि हेतु समुचित प्रोत्साहन के प्रयास किये जाय।

14. अन्ततः समाज पुरूष प्रधानता व वर्चस्व वाली मानसिकता का परित्याग कर महिलाओं के समान सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक अधिकारों को स्वीकार करते हुए उन्हें समानता का सम्मान दें।

निश्चय की अब यह कहा जा सकता है कि 73वें संविधान संशोधन के बाद ग्राम पंचायतों के लिये चुनी गई महिलाओं की सहभागिता 18 वर्षो बाद केवल प्रतीकात्मक नहीं रह गई है। स्वयं की स्थिति, अधिकारों व कर्तव्यों के प्रति उनकी जागरूकता में निश्चित रूप से वृद्धि हुई है। आवश्यकता है राजनीतिक प्रक्रिया के इस निम्नतम् स्तर पर

निर्वाचित महिलाओं को एक दूसरे से जोडने की जिससे स्थानीय स्तर से राष्ट्रीय स्तर तक वे अपने प्रभावी उपस्थिति दर्ज कर सकें। यह सही है कि ग्राम पंचायतों में समाज के विभिन्न वर्गो को विशेष रूप से महिलाओं को सहभागी बनाकर ग्रामीण गणतन्त्र को सही मायनो में पुनर्जीवित किया गया है किन्तु ग्राम स्वराज के अपेक्षित लक्ष्य को प्राप्त करने में अभी समय लगेगा । यह अपेक्षा की जाती है कि महिलाओं द्वारा शासन में यथाशक्ति भाग लेने से मितव्ययिता, सुशासन, ईमानदारी, भ्रष्टाचार उन्मूलन, निष्ठा, लगन, उत्तरदायित्व आदि मूल्यों की प्राप्ति संभव हो सकेगी। किन्तु ग्राम पंचायतों व अन्य पंचायत संस्थाओं में महिलाओं का भागीदारी प्राप्त कर लेना ही पर्याप्त नहीं । वास्तविक भागीदारी तो तब होगी जब वे अपने निर्णय स्वयं अपने विवेक से लेगी और तदनुसार कार्य करेंगी। किन्तु महिला भागीदारी की इस अपेक्षित स्थिति को प्राप्त करने में अभी समय लगेगा। अनुभवों के आधार पर वर्तमान गतिरोधों को दूर करना होगा तभी पंचायतों के अपेक्षित लक्ष्य प्राप्त किये जा सकेगें।

परिशिष्ट

- संदर्भ ग्रन्थ
- साक्षात्कार अनुसूची
- भारत में महिला राज्यपालों की सूची
- भारत में महिला मुख्यमंत्री
- भारत के संघीय मंत्रिपरिषद की महिला सदस्य
- विश्व के निर्वाचित महिला राष्ट्राध्यक्षों की सूची
- विश्व के महिला प्रधानमंत्रियों/ शासनाध्यक्षों की सूची

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

GOVERNMENT PUBLICATIONS

Government of Inida, Report of the Study for the Study of the Community Development and National Extension Service, (Chairman, Balwant Rai Mehta), Planning Commission, New Delhi, 1957

Government of India, Report of the Committee on Panchayati Raj Elections, Ministry of Community Development and Co-operation, New Delhi. 1965.

Government of India, Community Devlopment through Panchayati Raj, (S.K.Dey) Ministry of Community Development and Co-operation.

Government of India, Report of the Thungen Committee, Ministry of Personel, Public Grievances and Pension, New Delhi, 1988.

Government of India, Report of the Committee on Panchayati Raj, (Chairman : Ashok Mehta), Ministry of Agriculture and Irrigation, Department of Rural Development, New Delhi, 1978.

Uttar Pradesh : Laws, Statutes etc, United Provincial Panchayati Raj Act 1947, (Uttar Pradesh Act No XXVI of 1947) Lucknow, 1947

Uttar Pradesh : Laws, Statutes etc. Uttar Pradesh Kdhetra Samitis and Zilla Parishad Act, 1961, Lucknow, 1962 (In Hindi).

Uttar Pradesh Zilla Parishad (Conduct of Proceedings) Rules 1962.

Uttar Pradesh Zilla Parishad (Election of Adhyaksha and Upadhayaksha and settlement of Election Disputes) Rules (as modified up to 27-12-1963) Lucknow, 1963

Uttar Pradesh Kheshtra Samiti and Zilla Parishad Manual, Lucknow, 1976.

नियमावलियां

- उत्तर प्रदेश पंचायती राज नियमावली, 1947
- उत्तर प्रदेश पंचायती राज (सदस्यों, प्रधानों और उप प्रधानों का निर्वाचन) नियमावली, 1994
- उत्तर प्रदेश पंचायत राज (निर्वाचक रजिस्ट्रीकरण) नियमावली, 1994
- उत्तर प्रदेश पंचायत (पिछड़े वर्गो के व्यक्तियों की संख्या की अवधारणा और प्रकाशन) नियमावली, 1994
- उत्तर प्रदेश पंचायत राज (स्थानों और पदों का आरक्षण और आवंटन) नियमावली, 1994
- उत्तर प्रदेश पंचायत राज (सदस्यों के निर्वाचन के लिये प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन) नियमावली, 1994
- उत्तर प्रदेश जिला योजना समिति अधिनियम 1994
- उत्तर प्रदेश पंचायत राज (निर्वाचक रजिस्ट्रीकरण) पूरक उपलब्ध आदेश, 1999
- उत्तर प्रदेश ग्राम पंचायत विकास अधिकारी नियमावली, 1999
- उत्तर प्रदेश पंचायत राज (निर्वाचन विवादों का निबटारा) नियमावली 1947

पुस्तकें (हिन्दी में)

1. भवानीदीन एवं स्वामीप्रसाद "वैभव बहे बेतवा धार" साहित्य रत्नालय, कानपुर, 1998
2. अल्टेकर, अनन्त सदाशिव, प्राचीन भारतीय शासन पद्धति, इलाहाबाद 1959
3. अग्निहोत्री, ए.एन. हमीरपुर, महारानी लक्ष्मीबाई शिक्षा संस्थान, हमीरपुर 2000
4. उपाध्याय, देवेन्द्र (सम्पा), पंचायती राज व्यवस्था, नई दिल्ली, 1989
5. तिलक रघुकुल, लोकतंत्र स्वरूप एवं समस्यायें, लखनऊ, 1972
6. मधू राठौर, पंचायती राज और महिला विकास, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2002
7. महेश्वरी श्रीराम, भारत में स्थानीय शासन, ओरिएण्ट लाँगमेन, मुम्बई, 1974
8. दूबे, अवध नारायण, नयी पंचायती राज व्यवस्था, मिश्रा ट्रेनिंग कार्पोरेशन, वाराणसी, 2002
9. मिश्र, देवेन्द्र, पंचायती राज का संगठन एवं कार्य प्रणाली, नई दिल्ली, 1990
10. सिंह, वी.पी. ग्राम पंचायत में जन सहभागिता, वाराणसी, 1992

II BOOKS (IN ENGLISH)

Abida Samiuddin, A Critique of Panchayati Raj with Special Reference to Uttar Pradesh, Sahitya Bhavan, Agra, 1976

Alfred de Sauza (Ed.), The Politics of Change and Leadership Development-The New Headers in India and Africa, Manohar, New Delhi, 1978.

Barnabas, A.P., Social Change in a North Indian Village, Indian Institute of Public Administration, New Delhi, 1969

Bhargava, B.S., Politico- Administrative Dynamics in Panchayati Raj System, Ashish Publishing House, New Delhi, 1978

Bhargava, B.S., Panchayati Raj Institutions : An Analysis of Issue, Problems and Recommendations of Ashok Committee, Ashish Publishing House, New Delhi, 1979

Bhargava, B.S., Grass-roots Leadership : A Study of Leadership in Panchyati Raj Institutions, Ashish Publishing House, New Delhi, 1979

Bhargava, B.S., Bada, C.R. and Torgal, V.N., Panchayati Raj System, Jackson Publications, New Delhi, 1982

Biju, M.R. Dynamics of New Panchayati Raj System Reflections Retrospection, Kanishka Publishers, New Delhi, 1998

Chatterijee, B.B., (Ed.), Micro-Studies in Community Development, Panchayati Raj and Co-operation, Sterling Publishers, 1969

Chaudhari, T.P.S. (Ed.), Selected Readings on Community Development, National Institute of Community Development, Hyderabad, 1967.

Dantwala; M.L. and Shah, Ch.H, Evaluation of Land Reforms, Department of Economics, University of Bombay, 1971.

Darshankar, A.Y., Leadership in Panchayati Raj, Panchasheel Prakashan, Jaipur, 1979.

David, L.Sills (Ed.) International Encyclopaedia of the Social Sciences, Vol. 13, The Mac Millan and Co. and The Free Press, USA, 1968

Dayal, Rajeshwar, Community Development Programme in India, Kitab Mahal, Allahabad, 1960

Deb, P.C. and Agarwal, B.H. Rural Leadership in Green Revolution, Reserch Publications, Delhi, 1974

Desai, Vasant, Panchayati Raj : Power to the People, Himalayan Publishing House, Bombay 1990

Dey, S.K., Community Development, Kitab Mahal, Allahabad, 1960

Dey, S.K., Power to the People, Orient Longmans, New Delhi, 1969

Dey, S.K., Community Development, Vol. II, Kitab Mahal, Allahabad, 1960

Dey. S.K. Community Development : A Bird's Eye View, Asia Publishing House, New York, 1964.

Dubashi, P.R., Rural Development Administration in India, Popular Prakashan, Bombay, 1970.

Dube, S.C., India's Changing Village, Allied Publishers, Bombay, 1967

Duverger, Manrice, The Political Role of Women, United Nations, 1955.

Gaikwad, V.R., Panchayati Raj and Bureaucracy, National Institute of Community Development, Hyderabad.

Gail, Omvedt (Ed.), Land Caste and Politics in Indian State, Authors Guild Publications, Delhi, 1982.

Gandhi, M.K., Panchayati Raj, Compiled by R.K. Prabhu, Navajeevan Publishing House, Ahmedabad, 1959

Gandhi, M.K., Rebuiding Our Villages, Navajeevan Publishing House, Ahmedabad, 1952

Ghosh, Ratna and Pramanik, Alok Kumar, Panchayat System in India, Historical Constitutional and Financial Analysis, Kanishka Publishres and Distributers, New Delhi, 1999

Gopalaswamy, R.A., Indian Polity, Nachiketa Publications Ltd, Bombay, 1970

Haldipur, R.N. and Paramhamas, V.R.K. (Eds) Local Government Institutions in Rural India National Institute of Community Development, Hyderabad, 1970

Halpen Joel, M., The Changing Village Community, Prentice Hall of India Pvt. Ltd. Delhi.

Harichandran, C., Panchayati Raj and Rural Development : A Study of Tamil Nadu, Concept Publishing Company, New Delhi, 1983.

Hutton, J.H., Caste in India, Oxford University Press, 1969.

Inamdar, N.R. Functioning of Village Panchayats, Popular Prakashan, Bomaby, 1970.

Jacob George (Ed.) Readings in Panchayati Raj N.I.C.D. Hyderabad, 1967.

Jather, R.V. Evolution of Panchayati Raj in India, Institute of Economic Reserach, Dhawsar, 1964.

Karunakaran, K.P. Continutiy and Change in Indian Politics, People's Publishing House, New Delhi, 1966

Karunakaran Pillai, G., Local Finance in a Developing Economy- A Study of Panchayat Finance, B.R. Publishring Corporations, Delhi, 1986

Khan, Iltiga, H., Govermnet in Rural India, Asia Publisshing House, New Delhi.

Kothari, Rajni (Ed.) Caste in Indian Politics, Orient Longmans, New Delhi, 1970.

Kothari, Shanti and Ray, Ramesh, Relations between Politician and Administrator, Indian Institute of Public Administration, New Delhi, 1969.

Maddic, Henry, Panchayati Raj, Longman Group Ltd, London, 1970.

Madan, G.R. Changing Pattern of Indian Villages, S.Chand and Co., New Delhi, 1964.

Maheshri, B, Studies in Panchayati Raj, Metropolitan Book Co., Agarwal, Agra, 1996.

Maheswari, S.R. Local Government in India, Lakshmi Narain Agarwal, Agra 1996.

Majumdar, A.K. and Bhanvar Singh, Panchayat Politics and Community Development, Dadha Publication, New Delhi, 1996.

Mathur, S.C. (Ed.) Agricutural Policy and Food Self Sufficiency, Associated Publishing House, New Delhi, 1970.

Mathur, Kuldeep, Bureaucratic Response to Development, National, Delhi, 1972.

Matskihlberg, The Panchayati Raj of India : Debate in a Development Country, Young Asia Publications, New Delhi, 1970.

Malaviya, H.D., Village Panchayats in India, All-India Congress Committee, New Delhi, 1956.

Mehta, Sushila, Social Conflict in Village Communities, S.Chand and Co.Pvt Ltd. 1971.

Misra, R.P. and Sundram, K.V. Rural Area Development : Perspectives and Approaches, Sterling Publishers, New Delhi, 1979

Moorthy. M.V. (Ed.) Sociology, Aspectof Community Development, Department of Sociology, Andhra University, Waltair, 1966.

Mukherjee, B. Community Development in India, Orient Longmans, Bombay, 1961.

Muthayya, B.C. and Guana Kannan, J. Development Personnel, National Institute of Community Development, Hyderabad, 1973.

Muthayya, B.C. Panchayat Taxes, N.I.C.D. Hyderabad, 1972.

Myron, Weiner (Ed.) State Politics in India, Princeton University Press, New Jersey, 1968.

Nair, Kusum, Blossoms in the Dust, G.Duckworths and Co., London, 1961.

Namboodiripad, E.M.S. Crisis into Chaos : Political India 1981. Orient Longman Ltd. New Delhi. 1981.

Nandedkar, V.G. Local Government : Its Role in Development Administration, Concept Publishing Co., Delhi, 1977.

Narain, Iqbla and Others, Rural Elite and Elections in an Indian State : A Case Study of Rajasthan, Manohar Book Service, New Delhi, 1976.

Narain, Iqbal (Ed.) Panchayati Raj Administration in Rajasthan, Laxmi Narayan, Agarwal, 1970.

Narayan, Jayaprakash (Ed.) Brahmand, Communitarian Society and Panchayati Raj, Navachetna Prakashan, Varanasi, 1970.

Narayan, Jayaprakash, A Plea for Reconstruction of Indian Plity, Akhil Bharat Sarva Seva Sangh Prakshan, Rajghat, Kashi, 1959.

Niranjan Pant, The Politics of Panchayati Raj Administration : A Study of Official-non-official Relations, Concept Publishing Co., Delhi, 1979.

Padma Ramachandran (Ed.) Issues in Indian Public Administration : The Case of Kerala, Oxford and IBH, New Delhi.

Palmer Norman, D., The Indian Political System, Allen and Unwin, London, 1961.

Geraint, Political Elites, Allen and Umwin Ltd. London, 1969.

Prasad, R.C. Democracy and Development, Rachana Prakashan, New Delhi.

Raman Rao, A.V., Structure and Working of the Village Panchayats, Gokhale Institutr of Politics and Economics, Poona, 1954.

Ranganath, The Changing Pattern of Ruarl Leadership in Uttar Pradesh. Indian Academy of Social Sciences, New Delhi. 1971.

Ravindra Sharma, Village Panchayat in Rajasthan, Alekh Publishers, Jaipur, 1974.

Reddy, G.Ram (Ed.) Patterns of Panchayati Raj in India, The MacMillan Company of India Limited, New Delhi, 1977.

Rudramoorthy, B., Extension in Planned Sicial Change, Allied Publishers, Bombay, 1964.

Sadasivan, S.N. Case Studies in Public Administration, I.I.P.A. New Delhi, 1983

Sahani, Raghubir, Panchayati Raj in India- A Study, Kitab Mahal, Allahabad, 1968.

Sahay, B.N. Dynamics of Leadership, Bookhive, New Delhi, 1969.

Samant, S.V. Village Panchayats, Local Self-Government, Bombay, 1957.

Saradamoni, K., Divided Poor, Ajantha Publications, Delhi, 1981.

Seshadri, K. and Jain, S.P., Panchayati Raj and Political Perception of Electorate, National Institute of Comunity Development, Hyderabad, 1972.

Seshadri, K. and Ram Reddy, G., The Voter and Panchayati Raj, National, Institute of Community Development, Hyderabad, 1972.

Singh, Avtar, Leadership Patterns and Village Structure, Steriling Publishers, Jullandar, 1973.

Singh, Dharm Raj, Panchayati Raj and Rural Organization, Chugh Publication, Allahabad, 1990.

Singh, Harjinder, Village Leadership, Sterling Publishing House, New Delhi, 1969.

Singer, Marshall R., The Emerging Elite, M.J.J. Press, Cambridge, 1967.

Sinha, Durganand, Indian Villages in Transition, Associatrd Publishing House, New Delhi, 1969.

Sirshikar, V.M., Sovereigns Without Crowns, Popular Prakashan, Bombay, 1973.

Sushil Kumar and Venkataraman, K.State and Panchayati Raj Relations, Asia Publishing House, Bombay, 1974.

Shah, B.C. and Pandya, J.N. Revival of Panchayati Raj : Trends and Problems, Sardar Patel University, Gujrat, 1989.

Sharma, Neeta Bora, Karki. D.S, Participation Status of Women in Rural Kumaun of Uttranchal, The U.P. Journal of Political Science, Vol XI, No I&II Jan-Dec 2006.

Singh, Praveen, Participant Political Culture of Women in U.P., The U.P. Journal of Political Science, 2003-04 & 2004-05.

Syamola Devi, G.Lakxmi, Political Emporwerment of Women in India, Hegislature : A Study, The Indian Journal of Political Science Vol LXVI, No 1, Jan-March 2005.

Somjee, A.H. (Ed.) Politics of Peri-urban Community in India, Asia Publishing House, Bombay, 1964.

Srinivas, M.N., India;s Villages, Asia Publishing House, Bombay, 1963.

Tead Ordway, The Art of Leadership, Mc Graw Hill Book Co,. Inc. New York, 1935

Uriwick, L.F., Leadership in Twentieth Century, Sri Issac Pitman and Sons Ltd, London, 1957.

Vidyarthi, L.P. (Ed.) Leadership in India, Asia Publishing House, Bombay, 1967.

Warren, C.E., Biology and Water Pollution Control, W.B. Saunders Co,. Philadelphia, 1971.

लेख :-

1. कटारिया, सुरेन्द्र, ग्रामीण समाज में मानवाधिकार एवं समानान्तर न्याय, कुरूक्षेत्र दिसम्बर 2007,
2. राघव, विजय सिंह, भारत में महिला शिक्षा की स्थिति, कुरूक्षेत्र, सितम्बर 2006
3. त्रिपाठी, बद्रीविशाल ग्रामीण भारत की आधारभूत संरचना, कुरूक्षेत्र, नवम्बर 2007
4. पाण्डेय, पवन कुमार व जायसवाल पीयूष कुमार, पंचायती राज और महिला सशक्तिकरण, द यू.पी., जर्नल आफ पोलिटिकल सांइस, वाल्यूम XI : नं0 I & II जनवरी-दिसम्बर 2006.
5. सिंह, ओ.पी., दूबे तुलशीस, ग्राम प्रधानों की राजनीतिक जागरूकता : जनपद बलरामपुर के विशेष संदर्भ में, द. यू.पी. जर्नल ऑफ पोलिटिकल साइंस, वाल्यूम XI, No I&II जनवरी-दिसम्बर 2006.
6. पाठक इन्दू, राजनीतिक सहभागिता एवं महिला सशक्तिकरण, कुरूक्षेत्र मार्च 2007
7. नीरज कुमार, महिला सशक्तिकरण की कुछ कोशिशें, कुरूक्षेत्र, मार्च 2007
8. मीणा, गिरधारीलाल जैन, डी.के., ग्रामीण महिलाओं का सशक्तीकरण कुरूक्षेत्र, मार्च 2007
9. त्रिपाठी, कुसुम, महिलायें : दशा और दिशा, कुरूक्षेत्र, मार्च 2007
10. द्विवेदी, पूनम, महिला सशक्तीकरण और वर्तमान कानून, कुरूक्षेत्र, मार्च 2007
11. सिंह, निर्मला, राजस्थान में पंचायती राज एवं महिला सशक्तिकरण, कुरूक्षेत्र, अगस्त 2006
12. पाण्डेय, जितेन्द्र कुमार, महिला सशक्तिकरण में पंचायती राज की भूमिका, कुरूक्षेत्र, अगस्त 2006
13. शर्मा, राकेश, पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की बढ़ती भूमिका, कुरूक्षेत्र अगस्त 2006

14. अरोड़ा, वेद प्रकाश, पंचायतों पर मंडराते खतरे, कुरूक्षेत्र, अगस्त 2007

15. सेतिया सुभाष, पंचायती राज और महिला सशक्तिकरण, कुरूक्षेत्र, अगस्त 2007

16. कटारिया सुरेन्द्र, पंचायती राज का भविष्य, कुरूक्षेत्र, अगस्त 2007

17. मनीष कुमार, ग्रामीण विकास में पंचायती राज की भूमिका, कुरूक्षेत्र, अगस्त 2007

18. गुप्ता, अंजली, महिलाओं की स्थिति पर वैश्वीकरण का प्रभाव, कुरूक्षेत्र, मार्च 2008

III. ARTICLES (IN ENGLISH)

Abhijit Datta, Constitutional Strengthening of Government in Third World Federation, Indian Journal of Public Adminstration, Vol, XLII, No. 2 (April-June 1996).

Balwant Rai Mehta, Panchayati Raj and Agricultural Production, Kurudshetra, Vol. XV. October 1969.

Balraj Puri, J. and K,. Panchayati Raj Bill, A Critique, Economic and Political Weekely, 15 July, 1989.

Bhambri, C.P., Official-Non-Official Relationship in Panchayati Raj. Indian Journal of Political Science, July-September, 1967.

Bhargava, B.S., Political Parties and Rural Local Government, Quarterly Journal of Local Self-Government, Vol. XLI, No.1, July-September 1970.

Biju, M.R. and Pandya J.N., Democratic Decentralisation in an Indian State, International Political Science Abstracts, paris, Vol.42, No.3, August. 1992.

Biju, M.R. and Pandya J.N., Panchayat Polls in West Bengal and Kerala : A Comparative Appraisal, Journal of Political Studies, February, 1990. Vol. XXIII, No, 1

Biju, M.R. Sarvodaya Approach to Democratic Decentralisations, Panchyat Sandesh, December 95- January 96. Vols, 9-10.

Biju, M.R., Democratic Decentralisations of Gandhian Perspective. Panchayat Sandesh, Vols, 3-4, July, 1995.

Biju, M.R., Jaya Prakash Narayan a Democratic Decentralisation, Panchayat Sandesh February-April, 1996.

Biju, M.R., Gandhiji and Panchayati Raj, Indian Communicator, 5-6 October, 1995.

Bunker Roy, Role of Voluntary Groups, Indian Express, 26 August, 1996.

Chopra R.N., Adminstrative Machinery for Agricultural Production at District Level, Indian Jouranal of Political Science, Vol. XIII, No.3

Dantwala, M.L. Agricultural Policy in India since Independence, Indian Journal of Agricultural Econonmics, October-December, 1976.

Dube, Leela, Leadership in Community Development and Decentralised Democracy, Kurauksheta, 14(9) April, 1966.

Gangrade, K.D., Gandhi and Rural Development, Yojana, 15 October, 1994.

George Mathew, Democracy Discriminated, The Hindu, 16 April, 1996.

George Mathew, A Tale of Two Panchayats, The Hindu, 6 and 7 July, 1995.

Hanumantha Rao, C.H., Decentralised Planning- An Overview of Experience and Prospects, Economic and Political Weekly, 25 Febuary, 1989.

Indira Hirway, Panchayati Raj at Cross-roads, Economic and Political Weekly, July 22, 1989.

J. Prabash, Kerla-Civic Poll Results- Inplication for the Ruling Front, Mainstream, 21 October, 1995.

Jose George, Towards Genuine Local Government, Economic and Political Weekly, 9 December, 1995.

Kalyan Chaudhari, CPI(M) Rides Left Front Squabbles, Economic and Political Weekly, 19 March, 1988.

Kalyan Chaudhari, Lessons in Development- Through Law Reforms and Panchayats, Frontline, 10 February, 1995.

Manikyamba P., Women in Panchayati Raj : Promises and Performance, Teaching Politics, Vol, XIV. Nos 3 and 4, 1988.

Manoranja Mohanty, On the Concept of Emprowerment, Economic and Political Weekly, 17 June, 1995.

Mohit Bhattacharya, Administrative and Organisational Issues in Rural Development, Indian Journal of Public Administration, October-December, 1978. Vol. XXIV.

Morries Johnes, W.H., Democratic Decentralisation : Same Political Consequences, Economic Weekly, 14(1), 1963.

Narain Iqbal, Democratic Decentralisation : The Idea, the Image and the Reality, Indian Journal of Public Administration, January-March, 1963.

Narian Iqbal, Democratic Decentralisation and Rural Leadership in India : The Rajasthan Experiment, Asian Survey, August, 1964.

Oomen M.A., Panchayati Raj : A New Challenge to Federal Finance, The Hindu, 14 November, 1995.

Raj, K.N., Planning from Below with Special Reference to District Development and State Planning Economic and Political Weekly, Vol. VI. 1971.

Rajeev Dhavan, Inplications of Panchayat Bill, Mainstream, 29 July, 1989

Rajni Kothari, Panchayati Raj : A Reassessment, Economic Weekly, 13(9) May 13, 1961

Ramdas N., Haldipur, Elected Bodies and Agricultural Development in India, Indian Journal of Public Administration, Vol. XXII, No. 4, October-December, 1976.

Rama Krishanan, M.V, Jawahar Rozgar Yojana, The Hindu, 8 November, 1995.

Rao, C.V.H., Emerging Leadership in Panchayati Raj, Kurukshetara, 13(4), January, 1965.

Rao, S.K. Consepts of Rural Development, Kurushetra, Vol, XXVIII, March 16, 1980.

Rudramurthy, B., Challenge of Agriculture, Kurukshetra, Vol, XIV, No. 7, April, 1966.

Rushikesh Maru., Planning for Failure in Agriculture, Economic and Political Weekly, Vol. III, No.3

Satya Murthi, T.V., Panchayti Raj and India's Two Societes, Economic and Political Weekly, Vol. XXX, No.3, January 21, 1995.

Shah, B.C., Panchyat Poll of 1987 in Gujrat : An Overview, Indian Journal of Political Studies, Vol, 12, December, 1988.

Shashi, I.O.N., Role of Community Development and Panchayati Raj in Food Production, Indian Journal of Public Adminstration, Vol, XVII, No. 3, 1970.

Sindhu Shree Khuller, Local Government and Its Pitfalls, The Times of India, 17 August, 1995.

Sabha Reddy, N., Saga of Deceptive Slogans and Broken Promises, Mainstream, 28, April 1990.

Sudhdev Singh., Panchayati Raj in Punjab : An Analysis, Journal of Rural Development Vol. 14, No.2, April-June 1995.

Susheela Kaushik, Democracy and Development at Local Level : Inplications for Women, Teaching Politics, Vol. XIV, Nos, 3 and 4, 1988.

Usha Narayanan, Women in Panchyat : The Path Ahead, Mainstream, 16 November, 1966.

Vina Mazumdar, Panchayati Raj, Economic and Political Weekly, 29, October, 1994.

Venkatesan, V., Panchayati Blues, Frontline, 16 December, 1994.

V.S.R.K., 64^{th} Constitution Amendment Bill, Bhavan's Journal, Vol, 35. No. 23, July 15, 1989.

Weiner, Myron, Political Parties and Panchayati Raj, Indian Journal of Public Administration 8(4) , October-December, 1962.

समाचार पत्र

1- The Times of India (Lucknow)
2- The Hindu
3- Frontline
4- दैनिक जागरण (कानपुर)
5- अमर उजाला (कानपुर)
6- आज (कानपुर)
7- हिन्दुस्तान (कानपुर)
8- इन्डिया टुडे
9- कुरूक्षेत्र
10- योजना

साक्षात्कार अनुसूची

1. नाम :-
2. गांव का नाम :-
3. आयु :-
4. शिक्षा :-
5. वर्ग / धर्म :-
6. व्यवसाय :-

1	नई पंचायत व्यवस्था, इसके नियमों व प्रावधानों के बारे में आपको कैसी जानकारी है ?	अच्छी/ औसत/ बहुत कम
2	क्या आप मानती है कि नई पंचायत व्यवस्था वास्तव में जनता को शासन में सहभागी बनाती है	हां/ नहीं/ कह नहीं सकती
3	क्या नई पंचायत प्रणाली आने से पंचायत व्यवस्था में लोगों की भागेदारी बढ़ी है ?	हां/ नहीं/ कह नहीं सकती
4	क्या नई पंचायत व्यवस्था के द्वारा ग्राम पंचायतों को दिये गये अधिकार पर्याप्त हैं ?	हां/ नहीं/ कह नहीं सकती
5	क्या आप किसी आरक्षित वर्ग में आते हैं ?	हां/ नहीं
6	क्या पंचायतों में हर स्तर पर महिलाओं के लिये एक तिहाई सीटें आरक्षित करने का निर्णय सही था ?	हां/ नहीं/ अनिश्चित
7	क्या पिछडे वर्ग के लोगों के लिए पंचायतों के हर स्तर पर 27 प्रतिशत आरक्षण उचित है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चित
8	पंचायतों में महिलाओं को आरक्षण देने से क्या लाभ हुए हैं ?	महिलाओं में राजनीतिक चेतन बढ़ी है / महिलाओं को समानता का दर्जा मिला है / महिलाओं की स्थिति सुधरी है। / उन पर अत्याचार रूके हैं।

10	क्या आप मानती है कि पंचायतों को अधिक अधिकार एवं शक्तियां देने से लोगों की राजनीतिक रूचि व भागेदारी बढ़ी है ?	हां/ नहीं/ मालुम नहीं
11	क्या आप जानती है कि एक वर्ष में ग्राम सभा की कुल कितनी बैठकें होनी चाहिए ?	हां/ नहीं/ मालुम नहीं
12	क्या आपके गांव में ग्राम सभा की बैठकें नियमित रूप से होती हैं ?	हां/ नहीं/ मालुम नहीं
13	क्या आप जानती है कि ग्राम पंचायत की बैठक कितने समयान्तराल पर होते रहना चाहिए ?	हां/ नहीं
14	क्या आपके गांव में ग्राम पंचायत की बैठक प्रतिमाह होती है ?	हां/ नहीं/ मालुम नहीं
15	पंचायत चुनावों में आरक्षण व्यवस्था की आपको कितनी जानकारी है ?	अच्छी/ औसत /बहुत कम
16	क्या ग्राम प्रधान ग्राम सभा की बैठकें नियमानुसार बुलाती रहती हैं	हां/ नहीं/ मालुम नहीं
17	क्या आप जानती है कि पंचायतों में महिला/ दलित/ पिछड़ा आरक्षण देने से राजनीतिक प्रक्रिया में अधिक लोगों को भागीदारी बढ़ेगी ?	हां/ नहीं/ मालुम नहीं
18	क्या आप ग्राम प्रधान के अधिकारों एवं कर्तव्यों के विषय में जानती हैं ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
19	क्या आप ग्राम पंचायत को सौंपे गये सभी विषयों/ कार्यो के विषय में जानती हैं ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
20	क्या आपके गांव में ग्राम पंचायत समितियों का गठन किया गया है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
21	क्या आपके ग्राम पंचायत में पंचायत कार्यो से सम्बन्धित सभी प्रमुख अभिलेखों (रजिस्टरों) का निर्माण किया गया है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
22	क्या आप पंचायत संस्थाओं में महिलाओं को दिये गये आरक्षण के विषय में जानती हैं ?	हां/ नहीं

23	क्या आप चुनाव में नामांकन प्रपत्रों को अच्छी तरह से भरना जानती हैं ?	हां/ नहीं
24	क्या आपने अपना चुनाव प्रचार किया ?	हां/ नहीं
25	क्या आपको ज्ञात है कि आपको कितने मत प्राप्त हुए ?	हां/ नहीं
26	क्या आप जानती है कि आपके जीत का अन्तर कितना था ?	हां/ नहीं
27	गांव का विकास ग्राम पंचायतों की देखरेख में अधिक अच्छा हो सकता है अथवा प्रदेश सरकार की देख रेख में ?	ग्राम पंचायत/ प्रदेश सरकार/ अनिश्चित
28	क्या ग्राम पंचायतों को पर्याप्त वित्तीय अधिकार प्राप्त हैं?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
29	क्या ग्राम पंचायतों के पास आय के पर्याप्त साधन हैं ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
30	क्या आप मानते हैं कि ग्राम पंचायतों को और अधिक वित्तीय अधिकार मिलने चाहिये ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
31	क्या आर्थिक विकास योजनाओं का लाभ सही व्यक्तियों को मिला है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
32	क्या आपके गांव में कुछ लोगों ने फर्जी तरीके से इन योजनाओं का लाभ प्राप्त किया है।	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
33	क्या आपके गांव का बजट प्रतिवर्ष तैयार और पास किया जाता है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
34	क्या आपके ग्राम पंचायत ने ग्राम कोष (ग्राम निधि) की स्थापना की है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
35	क्या स्थानीय स्तर पर सरकार होने से स्थानीय समस्याओं का निराकरण अच्छी तरह से किया जा सकता है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
36	क्या ग्राम पंचायतों के द्वारा किये जा रहे विकास कार्यो के सम्बन्ध में सरकारी हस्तक्षेप न्यूनतम होना चाहिए ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय

37	क्या आप मानते हैं कि ग्राम पंचायतें समुचित तरीके से काम करती रहे इसलिए इन पर सरकारी नियंत्रण आवश्यक है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
38	आपके गांव में विकास कार्यो से सम्बन्धित योजनाओं का लाभ देने के लिए किसी प्रकार का भेदभाव किया जाता है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
39	क्या विकास कार्यो से सम्बन्धित कार्यो के सम्बन्ध में केवल ग्राम प्रधान अपने स्तर से निर्णय ले लेते हैं ? इसमें अन्य सदस्यों की कोई भूमिका नहीं होती ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
40	क्या ग्राम विकास के कार्यो की ग्राम सभा/ ग्राम पंचायत के बैठकों में समीक्षा होती है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
41	क्या विकास से सम्बन्धित कार्यो के सम्बन्ध में निर्णय व कार्य स्थानीय स्तर पर होने से भ्रष्टाचार की आशंका कम होगी ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
42	क्या इस प्रक्रिया में ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के सम्बन्ध में लाल फीताशाही व नौकरशाही के प्रभाव में कमी आयेगी ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
43	आपके आर्थिक स्थिति का प्रभाव आपके कार्य पर पड़ता है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
44	क्या ग्राम प्रधानों व पंचायत के सदस्यों को निर्धारित मानदेय (पारिश्रमिक) दिया जाना चाहिये ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
45	क्या मानती हैं कि पंचायत संस्थाओं में दलितों/ पिछड़ो महिलाओं को आरक्षण देने से सामाजिक परिवर्तन तेज होगा ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
46	क्या आप मानते हैं कि इस आरक्षण से जातिगत भेदभाव व ऊंचनींच की भावना क्रमशः समाप्त हो जायेगी ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
47	क्या आप मानती हैं कि विधान सभाओं, संसद व नौकरियों में दिये गये आरक्षण की तुलना में पंचायत में दिया गया वर्तमान आरक्षण सामाजिक समानता स्थापित करने में अधिक कारगर सिद्ध होगा।	हां/ नहीं/ अनिश्चिय

48	क्या आप मानती है कि पंचायतों में आरक्षण की वर्तमान व्यवस्था से लोगों की राजनीतिक जागरूकता में वृद्धि होगी ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
49	क्या सामाजिक समानता लाने के लिए राजनीतिक सहभागिता के साथ-साथ कमजोर वर्गो का आर्थिक उन्नयन भी आवश्यक है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
50	क्या कमजोर वर्गो की आर्थिक स्थिति सुधारे बिना सामाजिक समानता के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
51	क्या आप मानती है कि दलितों/ पिछड़ों व महिलाओं को पंचायतों में आरक्षण देने से इन वर्गो पर होने वाले उत्पीड़न व अत्याचारों में कमी आयेगी ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
52	क्या आप मानती हैं कि पंचायती राज व्यवस्था के समग्र सफलता के लिए इससे जुडे लोगों के प्रशिक्षण की आवश्यकता है ?	हां/ नहीं
53	क्या ग्राम पंचायत, ग्रामसभा व अन्य बैठकों में आप स्वयं भाग लेती हैं ?	हां/ नहीं
54	वर्तमान पद पर चुनाव लड़ने का निर्णय आपका स्वयं का था या परिवार के प्रमुख का ?	स्वयं का, / पति /पिता या परिवार के अन्य सदस्यों का/ आरक्षण की व्यवस्था
55	पंचायत से सम्बन्धित कार्य आप स्वयं करती हैं या परिवार के किसी सदस्य पर छोड़ देती हैं ?	स्वयं/ पिता/ पति पर/ परिवार के अन्य सदस्य पर
56	पंचायत से सम्बन्धित निर्णय आप स्वयं लेती हैं या किसी अन्य के दबाब पर ?	स्वयं, /पति/ पिता/ अन्य प्रभावशाली व्यक्ति
57	यदि महिलाओं को आरक्षण नहीं मिलता तो भी क्या आप पंचायत चुनावों में किसी पद के लिए उम्मीदवार होती ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
58	एक पदाधिकारी के रूप में कार्य करते वक्त क्या आप पर किसी प्रकार का दबाब होता है ?	हा/ नहीं
59	क्या आप मानती है कि पंचायतों में महिलाओं के आरक्षण से परिवार /समाज में महिलाओं की प्रतिष्ठा बढ़ी है	हां/ नहीं/ अनिश्चिय

60	क्या आप मानती है कि पंचायतों में अपनी इस सहभागिता से आपको देश/ समाज/ गांव की सेवा करने का अवसर मिला है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
61	क्या आप मानती है कि पंचायतों में सक्रिय साझेदारी से आपका आत्मविश्वास/ आत्मसम्मान बढ़ा है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
62	क्या आपको महिलाओं की स्थिति सुधारने के लिए बनाये गये कानूनों की जानकारी है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
63	क्या आप मानती है कि इस नई जिम्मेदारी के निर्वाह के लिए महिलाओं का शिक्षित होना आवश्यक है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
64	क्या अपकें गांव में स्वयं समूहों/ महिला मण्डलों का गठन किया गया है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
65	क्या आपका पिछड़ी/ अनुसूचित जाति का होना आपके कर्तव्य निर्वाह पर प्रभाव डालता है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
66	क्या पारिवारिक दायित्व आपके कर्तव्य निर्वाह को प्रभावित करता है ?	हां/ नहीं/ अनिश्चिय
67	क्या पुरूष अधिकारियों/ सदस्यों के साथ कार्य करने में किसी कठिनाई का अनुभव करती हैं ?	हां/ नहीं
68	क्या आप किसी राजनीतिक दल की सदस्य हैं ?	हां/ नहीं
69	क्या आपको किसी राजनीतिक दल से लगाव है ?	हां/ नहीं
70	ग्राम पंचायत के अतिरिक्त राजनीतिक कार्यो में किसी प्रकार सहभागिता करती हैं ?	चन्दा देकर/ रैली आदि में भाग लेकर /दल का झण्डा, विल्ला लगाकर /प्रदर्शन/ घेराव करके
71	लोकसभा/ विधानसभा/ पंचायत चुनावों में आप मतदान का निर्णय किस आधार पर करती हैं ?	स्वविवेक/ पारिवारिक दबाब पर/ अन्य प्रभाव
72	लोकसभा/ विधान मण्डल/ पंचायत चुनावों में आप उपयुक्त प्रत्याशी का चयन किस आधार पर करती हैं ?	दल /विचाराधारा/ प्रत्याशी की योग्यता / प्रत्याशी की जाति अथवा निकट सम्बन्ध
73	पद से सम्बन्धित कार्यो के सम्पादन में प्रशासनिक अधिकारियों से आपको कैसा सहयोग मिला । महिला ग्राम प्रधानों से उनका व्यवहार कैसा रहा ?	अच्छा/ उपेक्षित/ सामान्य

भारत में महिला राज्यपालों की सूची

क्र. सं.	नाम	राज्य	समय
1	सरोजिनी चटटोपाध्याय नायडू	उत्तर प्रदेश	1947-1949
2	पदूजा नायडू मुखर्जी	पश्चिम बंगाल	1956-57
3	विजय लक्ष्मी पण्डित	महाराष्ट्र	1963-64
4	ज्योति वेंकटचलम	केरल	1977-83
5	शारदा मुखर्जी	(i) आन्ध्र प्रदेश	1977-77
		(ii) गुजरात	1978-84
6	कुमुद बेन जोशी	आन्ध्र प्रदेश	1985-90
7	रामदुलारी सिन्हा	केरल	1988-90
8	सरला ग्रेवाल	मध्य प्रदेश	1989-90
9	चन्द्रावती (उप राज्यपाल)	पांडिचेरी	1991-91
10	राजेन्द्र कुमारी बाजपेयी (उप राज्यपाल)	पांडिचेरी	1995-98
11	शीला कौल	हिमांचल प्रदेश	1995-97
12	एम.एस. फातिमा बीबी	तमिलनाडू	1997-2001
13	वी.एस.रामादेवी	(i) हिमांचल प्रदेश	1997-1999
	रामादेवी	(ii) कर्नाटक	1999-2002
14	डॉ0 जजनीराय (उप राज्यपाल)	पांडिचेरी	1998-2002
15	प्रतिभा पाटिल	राजस्थान	2004-2007

स्रोत : WWW.guide 2 women leader. com

भारत में महिला मुख्यमंत्री

क्र. सं.	नाम	राज्य	समय	दल
1	सुचेता कृपलानी	उत्तर प्रदेश	1963-67	कांग्रेस
2	नन्दिनी सतपथी	उड़ीसा	1972-73 1974-76	कांग्रेस
3	शशिकला खांडोकर	गोवा	1973-77 1977-79	महाराष्ट्रवादी गोमांतक पार्टी
4	सईदा अनवरा ताइमूर	असम	1980-81	कांग्रेस
5	जानकी रामचन्द्रन	तमिलनाडु	1988-88	ए.डी.एम.के. (जानकी)
6	जे. जयललिता	तमिलनाडु	1991-96 2001-01 2002-06	ए.डी.एम.के.
7	मायावती	उत्तर प्रदेश	1995-96 1997-97 2002-03 2007-निरन्तर	ब.स.पा.
8	राजिन्दर कौर भट्टल	पंजाब	1996-97	कांग्रेस
9	राबड़ी देवी	बिहार	1997-99 2000-2005	राजद
10	सुषमा स्वराज	दिल्ली	1998-98	भाजपा
11	शीला दीक्षित	दिल्ली	1998- निरन्तर	कांग्रेस
12	उमा भारती	मध्य प्रदेश	2003-04	भाजपा
13	वसुन्धरा राजे	राजस्थान	2003- निरन्तर	भाजपा

भारत के संघीय मन्त्रिपरिषद की महिला सदस्य

(प्रथम लोकसभा से 14वीं लोकसभा तक)

क्र. सं.	लोकसभा	नाम	पद
1	प्रथम	राजकुमारी अमृत कौर	कैबिनेट
2	प्रथम	मार्गाथम सी	उपमंत्री
3	द्वितीय	लक्ष्मी एन. मेनन	उपमंत्री
4	द्वितीय	वायलेंट अल्वा	उपमंत्री
5	द्वितीय	तारकेश्वरी सिन्हा	उपमंत्री
6	तृतीय	इन्दिरा गांधी[1]	कैबिनेट/ प्रधानमंत्री
7	तृतीय	लक्ष्मी मेनन	राज्यमंत्री
8	तृतीय	सुशीला नैय्यर	राज्यमंत्री
9	तृतीय	मार्गाथम. सी.	उपमंत्री
10	तृतीय	जहांनारा जे.सिंह	उपमंत्री
11	तृतीय	सुन्दरम. आर.	उपमंत्री
12	तृतीय	नन्दनी सत्यथी	उपमंत्री
13	तृतीय	तारकेश्वरी सिन्हा	उपमंत्री
14	चतुर्थ	इन्दिरा गांधी	प्रधानमंत्री
15	चतुर्थ	फूलरेनू गुहा	राज्यमंत्री
16	चतुर्थ	नन्दनी सत्पथी	उपमंत्री
17	चतुर्थ	जहांनारा जे.सिंह	उपमंत्री

[1] इन्दिरा गांधी तृतीय लोकसभा में पहले कैबिनेट मंत्री के रूप में शामिल हुई फिर जनवरी 1966 में प्रधानमंत्री बनी।

18	चतुर्थ	सरोजनी महिषी	उपमंत्री
19	पंचम	इन्दिरा गांधी	प्रधानमंत्री
20	पंचम	सुशीला रोहतगी	उपमंत्री
21	पंचम	सरोजनी महिषी	उपमंत्री
22	पंचम	मनोरमा पाण्डेय	उपमंत्री
23	षष्ठम	सत्यवानी मुथू	कैबिनेट
24	षष्ठम	रेनुका डी.बाराकाटकी	राज्यमंत्री
25	षष्ठम	आभजा मैती	राज्यमंत्री
26	षष्ठम	रशीदा एच. चौधरी	राज्यमंत्री
27	सप्तम्	इन्दिरा गांधी	प्रधानमंत्री
28	सप्तम्	मोहिसिना किदवई	राज्यमंत्री
29	सप्तम्	शीला कौल	राज्यमंत्री
30	सप्तम्	रामदुलारी सिन्हा	राज्यमंत्री
31	सप्तम्	कमला कुमारी	उपमंत्री
32	सप्तम्	कुमुद बेन जोशी	उपमंत्री
33	अष्टम्	मोहिसिना किदवई	कैबिनेट
34	अष्टम्	राजेन्द्र कुमार बाजपेयी	राज्यमंत्री स्वतंत्र प्रभार
35	अष्टम्	मार्ग्रेट अल्वा	राज्यमंत्री
36	अष्टम्	शीला दीक्षित	राज्यमंत्री
37	अष्टम्	सरोज खापर्डे	राज्यमंत्री
38	अष्टम्	सुमित कोरन	राज्यमंत्री
39	अष्टम्	सुशीला रोहतगी	राज्यमंत्री
40	अष्टम्	कृष्णा शाही	राज्यमंत्री
41	अष्टम्	रामदुलारी सिन्हा	राज्यमंत्री

42	अष्टम्	मार्गाथम सी	राज्यमंत्री स्वतंत्र प्रभार
43	नवम्	मेनका गांधी	राज्यमंत्री
44	नवम्	ऊषा सिंह	उपमंत्री
45	दशम्	शीला कौल	कैबिनेट
46	दशम्	शैलजा कुमारी	उपमंत्री
47	दशम्	कृष्णा शाही	राज्यमंत्री
48	दशम्	सुखवंश कौर	राज्यमंत्री
49	दशम्	बासवा राजेश्वरी	राज्यमंत्री
50	दशम्	ममता बनर्जी	राज्मंत्री
51	दशम्	मार्ग्रेट अल्वा	राज्यमंत्री
52	दशम्	डी.के.तारा देवी	राज्यमंत्री
53	दशम्	गिरजा ब्यास	उपमंत्री
54	एकादश	सुषमा स्वराज	कैबिनेट
55	एकादश	रेनुका चौधरी	राज्यमंत्री
56	एकादश	कान्ती सिंह	राज्यमंत्री
57	एकादश	कमला सिन्हा	राज्यमंत्री
58	एकादश	रत्नमाला डी.सावानूर	राज्यमंत्री
59	द्वादश	सुषमा स्वराज	कैबिनेट
60	द्वादश	वसुन्धरा राजे सिन्धिया	राज्यमंत्री
61	द्वादश	मेनका गांधी	राज्यमंत्री
62	त्रयोदश	ममता बनर्जी	कैबिनेट
63	त्रयोदश	सुषमा स्वराज	कैबिनेट
64	त्रयोदश	मेनका गांधी	राज्यमंत्री
65	त्रयोदश	वसुन्धरा राजे	राज्यमंत्री (स्वतंत्र प्रभार)

66	त्रयोदश	उमा भारती	राज्यमंत्री
67	त्रयोदश	विजोय चक्रवर्ती	राज्यमंत्री
68	त्रयोदश	जयावन्ती वेन एन मेहता	राज्यमंत्री
69	त्रयोदश	रीता वर्मा	राज्यमंत्री
70	त्रयोदश	सुमित्रा महाजन	राज्यमंत्री
71	त्रयोदश	भावना बेन डी. चिकालिया	राज्यमंत्री
72	चतुर्दश	मीरा कुमार	कैबिनेट
73	चतुर्दश	अंबिका सोनी	कैबिनेट
74	चतुर्दश	पानवाका लक्ष्मी	राज्यमंत्री
75	चतुर्दश	सुर्यकान्ता	राज्यमंत्री
76	चतुर्दश	सुब्बुलक्ष्मी जगदीशन	राज्यमंत्री
77	चतुर्दश	कान्ती सिंह	राज्यमंत्री
78	चतुर्दश	रेनुका चौधरी	राज्यमंत्री
79	चतुर्दश	शैलजा	राज्यमंत्री (स्वतंत्र प्रभार)

विश्व मे महिला राष्ट्राध्यक्ष (निर्वाचित)

क्र. सं.	नाम	देश	समय
1	खेरतेक अन्चीमा टोका	टनू-तुवा जनवादी गणराज्य	6.4.40 - 11.10.94
2	सुबातरीन यन्जमा (कार्यवाहक)	मंगोलिया	23.9.53 - 7.7.54
3	सोंग क्विंगलिंग (कार्यवाहक)	चीन	31.10.68 - 24.2.72
	संयुक्त कार्यवाहक	चीन	06.07.76 - 05.03.78
	अवैतनिक राष्ट्रपति	चीन	1979 - 1980
4	मारिया एस्टेला मार्टिनेज कार्टस डि पेरोन	अर्जेन्टाइना	01.07.74 - 24.03.76
5	लीडिया गुइलर तेजादा (अन्तरिम)	बोलिविया	17.11.79-18.7.80
6	विग्दीस फिन बोगेडोटायर	आइसलैण्ड	01.08.80 - 01.08.96
7	रीजेन्ट मारिया ली पेडिनी एन्जीलिनी	सेनमेरिनो	01.04.81 - 01.10.81
8	अगाथा बारबारा	माल्टा	15.02.82 - 15.02.87
9	रीजेन्ट ग्लोरियाना रेनोच्चिनी	सेन मेरिनो	01.04.84 - 01.10.84
			01.10.89 - 01.04.90
10	कारमेन पेरीरा (कार्यवाहक)	गुइनिया बिसाऊ	14.05.84 - 16.05.84
11	मारिया कोरेजोन सुमुलोंग कोजुएन्को अक्वीनो	फीलीपीन्स	25.02.86 - 30.6.92
12	आर्था पास्कल (कार्यवाहक)	हैती	13.03.90 - 07.02.97
13	बायोलेटा बैरिलस डि चामोरो	निकारगुआ	25.04.90 - 10.01.97
14	डॉ0 सेबाइन बर्गमैन-फोल (कार्यवाहक)	पू.जर्मनी	05.04.90 - 02.10.90
15	मैरी रोबिन्सन	आयरलैण्ड	13.12.90 - 12.09.97

16	रीजेन्ट एडा सेसोली	सैन मेरिनो	01.10.91 - 01.04.92
17	रीजेन्ट पैट्रीजिया बुसिग्नानी	सैन मैरिनो	01.04.93 - 1.10.93
18	सिल्वी किनीगी (कार्यवाहक)	बुरूण्डी	27.10.93 - 05.02.94
19	चन्द्रिका भण्डारनायके कुमारतुंग	श्रीलंका	14.11.94 - 19.11.95
20	रूथ सैण्डौ पेरी	लाइबेरिया	03.09.96 - 02.08.97
21	रोजेलिया आर्तेगा सेरानो (कार्य0)		09.02.97 - 11.02.97
22	मैरी मैक्लीज	आयरलैण्ड	11.11.97 -
23	जनत जगन	गुयाना	19.12.97 - 11.08.99
24	रूथ ड्राइफस	स्विटजरलैण्ड	01.01.99 - 31.12.99
25	रीजेन्ट रोजा जाफरानी	सैन मैरिनो	01.04.99 - 01.10.99
26	वैराविके फ्रीबर्ग	लटाविया	08.07.99 - 08.07.07
27	मीरेया मोस्कोसो रोड्रिज	पनामा	01.09.99 - 01.09.04
28	तर्जा हैलोनेन	फिनलैण्ड	01.03.2000 -
29	रीजेन्ट मारिया डोमेनिका मिशेलोटी	सैन मैरिनो	01.04.2000 - 01.10.2000
30	ग्लोरिया मैम्पेगल-आरोयो	फीलीपीन्स	20.01.01-
31	मेघावती सुकुर्णपुत्री	इन्डोनेशिया	23.07.01 - 20.10.04
32	नताशा मिकी (कार्यवाहक)	सर्बिया	21.12.02 - 04.02.04
33	रीजेन्ट बेलेरिया सीबारा	सैन मैरिनो	01.10.03 - 31.03.04
34	नीनो बुजन्दिज (कार्यवाहक)	जार्जिया	23.11.03 - 25.01.04
			25.11.07 - 20.01.08
35	बारबारा प्रामर (कार्य0 संयुक्त)	आस्ट्रिया	06.07.04 - 01.10.05
36	रीजेन्ट फौस्त मोर्गेन्टी	सैन मैरिनो	01.04.05 - 01.10.05
37	एलेन जान्सन सलीर्फ	लाइबेरिया	16.01.06 - निरन्तर

38	मिशेल बेशलेट	चिली	11.03.06 - निरन्तर
39	मिशेलीन कामी के-	स्विटजरलैण्ड	01.01.07 - 31.12.07
40	डालिया इत्जिक (कार्य0)	इजराइल	25.01.07 - 01.07.07
	(अन्तरिम राष्ट्रपति)		01.07.07 - 15.07.07
41	प्रतिभा पाटिल	भारत	25.07.07 - निरन्तर
42	क्रिस्टीना ई.फर्नाडीज	अर्जेन्टाइना	2007 - निरन्तर

विश्व मे महिला प्रधानमंत्री/ शासनाध्यक्षों की सूची

क्र. सं.	नाम	देश	समय
1	एबेनिया बोडाव्रिना बोश (कार्यवाहक)	उक्रेन	17.12.17-09.03.18
2	सिरामावो भण्डारनायके	श्रीलंका	21.07.60-27.03.65
			29.05.70-23.07.77
			14.11.94-10.08.2000
3	इन्दिरा गांधी	भारत	19.01.66-24.03.77
			14.01.80-31.10.84
4	गोल्डा मायर	इजरायल	17.03.67-10.04.74
5	एलिजाबेथ डेमिटेन	सेन्ट्रल अफ्रीकन रिपब्लिक	03.01.75-07.04.76
6	मार्ग्रेट थैचर	इंगलैण्ड	03.05.79-22.11.90
7	डॉ0 मारिया डि लुईस रूबो डासिल्वा	सिल्वो	01.08.79 – 03.01.80
8	डेम एम.ड्यूजीना चार्ल्स	डोमेनिका	21.07.80 – 14.06.95
9	ग्रो हर्लेम बर्न्टलैण्ड	नार्वे	04.02.81- 14.10.81
			09.05.86- 16.10.89
			30.11.90- 25.10.96
10	मिल्का प्लैनिंक	यूगोस्लाविया	15.05.82- 15.05.86
11	बेनजीर भुट्टो	पाकिस्तान	02.12.88- 06.08.90
			19.10.93- 05.11.96
12	काजीमेरा पुन्स्कीन	लिथुआनिया	17.03.90- 10.01.91
13	बेगम खालिदा जिया	बांग्लादेश	20.03.91- 30.03.96

			01.01.01- 29.10.06
14	एडिल क्रेस्वेन	फ्रांस	15.05.91- 02.04.92
15	हाना सुशोका	पोलैण्ड	08.07.92- 26.10.93
16	सिल्वी किमीगी	बुरूण्डी	10.07.93- 11.02.94
17	टान्सू किलर	टर्की	25.06.93- 07.03.96
18	किम कैम्पबेल	कनाडा	25.06.93- 05.11.93
19	अगाथा उविलिगिमाना	रवान्डा	18.07.93- 07.05.94
20	रेनेटा इवेनोवा इन्दझोवा (अन्तरिम)	बल्गारिया	16.10.94- 25.10.95
21	चन्द्रिका कुमारतुंगा	श्रीलंका	19.08.94- 14.11.94
22	क्लाडेट वर्ले	हैती	07.11.95- 27.02.96
23	शेख हसीना वाजेद	बांग्लादेश	23.06.96- 15.07.01
24	जनत जगन	गुयाना	17.03.97- 22.12.97
25	जेनीशिल्ली	न्यूजीलैण्ड	08.12.97- 10.12.99
26	आइरेना डेगूरीन	लिथुआनिया	03.05.99- 18.05.99
	कार्यवाहक		27.10.99- 03.11.94
27	तूयान्याय ओसोरिन (कार्यवाहक)	मंगोलिया	22.07.99- 30.07.99
28	हेलेन क्लार्क	न्यूजीलैण्ड	10.12.99 –
29	मैम मेडायर बोए	सेनेगल	03.03.01- 04.01.02
30	चेंग सेंग (कार्यवाहक)	दक्षिण कोरिया	11.07.02- 31.07.02
31	मारिया डेस नेव्स सीटा बेटिटाई सूसा	प्रिन्सिपल रिपब्लिक	03.10.02- 16.07.03
			23.07.03- 18.09.03
32	एनेली जातिम्की	फिनलैण्ड	17.04.03- 24.06.03
33	डॉ0 बेरट्रिज मेरिनो ल्योरो	पेरू	28.06.03- 15.12.03

34	ल्यूसा डायस डयोग	मोजेम्बीक	17.02.04 - कार्यरत
35	रैडमिला सेकेरिनका (कार्यवाहक)	मेरीडोनिया	15.05.04- 02.06.04
			18.11.04- 17.12.04
36	यूलिया टाइमोशैको	उक्रेन	24.01.05- 08.09.05
37	मारिया डोकार्मो सिल्वेरिया सामोरोमे	प्रिन्सिपल रिपब्लिक	07.06.05- 21.04.06
38	एन्जेला मर्कल	जर्मनी	18.12.07 - कार्यरत
39	पोर्शिया सिम्पासन मिलर	जमैका	22.11.05 - कार्यरत
40	हैन म्यूंग सुक	दक्षिण कोरिया	03.03.06- 11.09.07
			19.04.06- 18.03.07